इकाई-1

परामर्श: अवधारणा एवं लक्ष्य

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 परामर्श का अवधारणा
1.3 परामर्श के लक्ष्य
1.4 सारांश
1.5 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप

1. परामर्श के अर्थ को समझ सकेंगे।
2. विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी परामर्श की परिभाषाओं के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. तत्पश्चात् परामर्श के उद्देश्य तथा दिशाओं के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।
4. इसके पश्चात परामर्श सेवा के लक्ष्यों को समझ सकेंगे।
5. समाज कार्य में परामर्श की भूमिका के विषय में जान सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में परामर्श की अवधारणा एवं लक्ष्य का वर्णन किया गया है। हमारे समाज की उन बहुत सी क्रियाओं के लिए निर्देशन तथा परामर्श शब्द प्रयुक्त होता है, जबकि व्यक्तियों को अपनी क्षमताओं के पूर्व विकास में सहायता देने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर रूचियों तथा योजनाओं के निर्माण में सहायता करने का प्रयत्न करते हैं। परामर्श एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से परामर्शदाता परामर्श लेने वाले की रूचि योजना तथा समायोजन सम्बन्धी तथ्यों की व्याख्या में होती है जिनको कि वह करना चाहता है। यह एक या एक से अधिक सेवार्थी तथा एक उपचारक के बीच अन्तरवैयक्तिक सम्बन्धों की प्रतिक्रिया है। परामर्श का लघुकालीन लक्ष्य सेवार्थी को तुरन्त आराम या राहत पहुंचाना है तथा कार्यात्मक, शारीरिक एवं मानसिक गिरावट को रोकना है। दीर्घकालीन लक्ष्य के अंतर्गत सेवार्थी को कार्यात्मक व्यक्तित्व बनाना, आत्मविश्वास को जागृत करना तथा ऐसी ऊर्जा पैदा करना जिससे अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर सके।

1.2 परामर्श की अवधारणा

परामर्श कला तथा विज्ञान दोनों है। इसके लिए न केवल यह आवश्यक है कि विषय वस्तु का ज्ञान हो बल्कि आत्म ज्ञान, अनुशासन एवं आत्मिक विकास की विधाओं का भी ज्ञान हो। अभिव्यक्ति तब होती है जब परामर्शदाता सेवार्थी तथा अपने बीच सम्बन्धों को सुदृढ़ करने के लिए विभिन्न निपुणताओं का उपयोग करता है

तथा सेवार्थी की स्वायत्तता बनाये रखने का समर्थन करता है। परामर्श के लिए यह आवश्यक है कि परामर्शदाता अच्छा सम्प्रेषक हो और यह सम्प्रेषनण सावधानी पूर्वक अवलोकन करने पर निर्भर होता है। परामर्श एक विशेष प्रकार का वैयक्तिक सम्प्रेषण है, जिसमें भावनाओं, विचारों एवं मनोवृत्तियों का प्रगटन होता है। जिनका प्रगटन नहीं हो पाता है, उनकी खोजकर प्रगटन की स्थिति तैयार की जाती है और यदि कोई स्पष्टीकरण की जरूरत होती है तो स्थिति का विश्लेषण करके उसे सेवार्थी को बताया भी जाता है।

परामर्श दूसरों से इस उद्देश्य के साथ होता है कि वह अपनी इच्छाओं, समस्याओं, जटिलताओं को स्पष्ट करके तथा उनका समाधान प्राप्त करके तथा संतोषप्रद ढंग से रहने की कला को विकसित करने में समर्थ होगा, सम्बन्ध स्थापित करने की विधि है। एक प्रशिक्षित परामर्शदाता तथा सेवार्थी के बीच व्यावसायिक सम्बन्ध दर्शाता है। यह सम्बन्ध प्रायः दो व्यक्तियों के बीच होता है लेकिन कभी-कभी एक से भी अधिक सेवार्थी हो सकते हैं। परामर्श का उद्देश्य सेवार्थी की सांवेगिक तथा अन्तरवैयक्तिक समस्याओं के कारणों का पता लगाकर तथा समाधान के तरीकों को खोजकर उसको इस योग्य बनाना होता है कि वह सुखमय जीवन व्यतीत करते हुए अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। कभी-कभी व्यक्ति अपनी समस्याओं के प्रति उदासीन होता है अथवा सही आंकलन करने में असमर्थ होता है अथवा अंतर्दृष्टि की कमी होती है इसलिए स्वयं ही दुःख का भाजन बनता है। परामर्शदाता का कार्य इन्हीं समस्याओं को सुलझाना तथा आत्म सुदृढ़ करना होता है।

परामर्श का सम्बन्ध सेवार्थी की व्यक्तिगत समस्याओं से होता है। उदाहरण के लिए संकटकालीन स्थिति में निपटना, दूसरों से मतभेद तथा संघर्ष , अंतर्दृष्टि विकास की समस्या तथा पारस्परिक सम्बन्धों मे मतभेद आदि ऐसी समस्याये है जिनका समाधान परामर्श के माध्यम से किया जाता है।

परामर्श का कार्य उतना ही प्रचीन है जितना कि हमारा समाज स्वयं। जीवन के प्रत्येक स्तर पर तथा दिन प्रतिदिन के जीवन में परामर्श की आवश्यकता होती है। परिवार के स्तर पर बच्चों को माता-पिता परामर्श देते हैं, रोगियों को चिकित्सक परामर्श देता है, वकील अपने सेवार्थी को परामर्श देता है, अध्यापक विद्यार्थियों को परामर्श देता है। दूसरों शब्दों में यह कहा जा सकता है कि समस्याओं की कोई सीमा नहीं है जिनमें परामर्श की आवश्यकता न महसूस होती है। लेकिन व्यावसायिक परामर्श का विकास अभी कुछ ही वर्षों में हुआ है। विद्यालय, विश्वविद्यालय, कारखानों, औद्योगिक प्रतिष्ठान सभी परामर्शदाता की आवश्यकता अनुभव करते हैं।

परामर्श की परिभाषाएं

एप्टेकर हरबर्ट एच: "परामर्श उस समस्या समाधान की ओर लक्षित व्यक्तिगत सहायता है जिसको एक व्यक्ति समाधान करने में अपने की असमर्थ पाता है और जिसके कारण निपुण व्यक्ति की सहायता प्राप्त करता है जिसका ज्ञान, अनुभव तथा सामान्य अभिज्ञान उस समस्या के समाधान करने के उपयोग में लाया जाता है।"

शेफर राबर्ट एच: "परामर्श को विभिन्न निर्देशन सेवाओं में से एक समझा जाता है। यह प्रमुख रूप से एक व्यक्ति से आमने-सामने के सम्बन्धों में प्रयुक्त होता है। परामर्शदाता परामर्शकर्ता की भावनाओं, स्थितियों तथा परिस्थितियों तथा किसी भी क्रिया को समझने तथा विश्लेषण करने में सहायता करने का प्रयत्न करते हैं।"

परामर्श शब्द को और अधिक स्पष्ट करने के लिए शेफर ने कहा है कि हमारे समाज की उन बहुत सी क्रियाओं के लिए निर्देशन तथा परामर्श शब्द प्रयुक्त होता है जब कि व्यक्तियो को अपनी क्षमताओं के पूर्ण विकास में सहायता देने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर रूचियों तथा योजनाओं के निर्माण में सहायता करने का प्रयत्न करते हैं।

गार्डन हैमिल्टन: "परामर्श तर्क वितर्क के माध्यम द्वारा एक व्यक्ति की क्षमताओं तथा इच्छाओं को तार्किक बनाने में सहायता करता है। परामर्श का मुख्य उद्देश्य सामाजिक संस्थाओं तथा सामाजिक अनुकूलन के लिए चेतन अहम् को प्रोत्साहित करना है।"

परामर्श प्रत्यक्ष उपचार की प्रमुख विधि है। यह एक व्यक्ति की मनो-सामाजिक समस्याओं को स्पष्ट करने, उसके निदान तथा उपचार की ओर प्रयास करने का एक माध्यम है।

पेरे, एफ. जे: "परामर्श परामर्शदाता तथा परामर्श लेने वाले के बीच एक अंतर्क्रिया प्रक्रिया है जिसमें परामर्श लेने वाला सहायता चाहता है और परामर्शदाता इस प्रकार की सहायता देने में शिक्षित तथा प्रशिक्षित होता है।"

स्मिथ जी. ई.: "परामर्श एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से परामर्शता परामर्श लेने वाले की रूचि, योजना अथवा समायोजन सम्बन्धी तथ्यों की, जिनको कि वह करना चाहता है, व्याख्या करने में सहायता करता है।"

हान तथा मैकलीन: "परामर्श एक प्रक्रिया है जो एक समस्या से ग्रसित व्यक्ति जिनका वह स्वयं समाधान करने में असमर्थ है तथा एक व्यवसायिक कार्यकर्ता जो प्रशिक्षण तथा अनुभव के कारण दूसरों की सहायता करने में दक्ष है, के बीच घटित होती है और माध्यम से वह अनेक प्रकार की व्यक्तिगत कठिनाइयों का समाधान प्राप्त करता है।"

पेपिनस्की, एच.बी. तथा पेपिनस्की, पी.: "परामर्श वह अंतर्क्रिया है जो (1) दो व्यक्तियों के बीच घटित होती है जिन्हें परामर्शदाता तथा सेवार्थी कहा जाता है। (2) यह एक व्यासायिक स्थापन में घटित होती है। तथा (3) जो सेवार्थी के व्यवहार में परिवर्तनों को आगे बढ़ाने के लिए प्रारम्भ की जाती है तथा बनायी रखी जाती है।"

पेटर्सन: "यह (परामर्श) एक या एक से अधिक सेवार्थी तथा एक उपचारक के बीच अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों की प्रतिक्रिया है जिसके द्वारा चिकित्सा मानव व्यक्तित्व के व्यवस्थित ज्ञान के आधार पर, जिसका उद्देश्य सेवार्थी के मानसिक स्वास्थ्य सम्वर्धन करना होता है, मनोवैज्ञानिक तरीकों को उपयोग किया जाता है।"

रोजर्स: "परामर्श एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा सेवार्थी को चिकित्सालय के साथ सम्बन्धों की सुरक्षा में उसकी आत्म की संरचना को शिथिलीकरण प्राप्त होता है और पूर्व के अस्वीकृत अनुभव प्रत्यक्षीकरण होकर परिवर्तिक आत्म में एकीकृत हो जाते हैं।"

परामर्श दो व्यक्तियों के बीच एक गणात्मक तथा उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध है जो परस्पर एक परिभाषित समस्या समाधान के लिए मिलते है तथा समस्या के समाधान का मार्ग ढूंढ़ते है।

दि इण्टरनेशनल राउण्ड टेबुल फार दि एडवान्समेंट आफ कौसिलिंग के अनुसार, ''परामर्श दूसरों से सम्बन्ध स्थापित करने तथा प्रत्युत्तर देने की प्रणाली है जिसका उद्देश्य तथ्यों की छानबीन करने, विवेचन करने तथा कार्य करने के ऐसे अवसर प्रदान करना है जिससे वे अधिक संतोषपूर्ण तथा अच्छे तरीके से जीवन यापन कर सकें।"

अमेरिकन एसोसियेशन आफ कौसिलिंग एण्ड डेवलपमेंट: परामर्शदाता प्रत्येक व्यक्ति की उपयोगिता, महता क्षमता तथा एकमात्रता को बढ़ाने के लिए संकल्पित होता है और इस प्रकार समाज की सेवा करता है।

कनसाइज आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के अनुसार: परामर्श (1) परामर्श देने की एक प्रक्रिया व कला है। (2) सेवार्थी को सहायता करने तथा निर्देशित करने की प्रक्रिया है। यह प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा व्यावसायिक आधार पर व्यक्तिगत, सामाजिक अथवा मनोवैज्ञानिक समस्याओं के लिए होता है।

परामर्श एक सीखने की प्रक्रिया है। यह कार्य सामाजिक पर्यावरण में एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति की सहायता के रूप में किया जाता है। परामर्श देने वाला एक परामर्शदाता होता है जो मनोवैज्ञानिक ज्ञान एवं निपुणताओं से परिपूर्ण होता है। उसे सेवार्थी के किस प्रकार सहायता की आवश्यकता है तथा किस प्रकार सहायता दी जानी चाहिए, वह जानता है। इस परामर्श के माध्यम से सेवार्थी अपनी समस्याओं के समाधान तथा भविष्य में इसी प्रकार की समस्याओं के समाधान के उपायों से सीखता है।

परिभाषाओं का विश्लेषण

पैरे की परामर्श की परिभाषा में निम्नलिखित विशेषताएं हैं:

1. परामर्श अंतर्क्रिया की एक प्रक्रिया है।
2. इस प्रक्रिया का उद्देश्य परामर्श लेने वाले तथा परामर्श देने वाले के बीच सम्बन्ध स्थापित करना है।
3. परामर्श लेने की आवश्यकता तभी होती है जब वह समस्या या समस्याओं से ग्रस्त होता है तथा समाधान करने में स्वयं समर्थ नहीं होता है।
4. परामर्शदाता आवश्यक सहायता देने में प्रशिक्षित तथा शिक्षित होता है।

स्मिथ ने परामर्श की परिभाषा में निम्नलिखित विशेषताएं बतायी हैं:-

1. परामर्श एक प्रक्रिया है अर्थात् वह सदैव कार्यरत है, जिसके माध्यम से व्यक्ति की समस्या का विश्लेषण, विवेचना तथा समाधान किया जाता है।
2. परामर्श की तकनीक के द्वारा परामर्शदाता परामर्श लेने वाले की रूचि को जानता है, समस्या को समझता है, समस्या के रूप को जानता है तथा तथ्यों को समझते हुए समस्या समाधान के उपाय बताता है।
3. परामर्शदाता परामर्श अथवा सलाह को थोपता नहीं है बल्कि परामर्श लेने वाले की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह परामर्श को पूरा माने, आधा माने या बिल्कुल न माने।

हान तथा मैकलीन ने अपनी परिभाषा में निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है:-

1. परामर्श एक या एक से अधिक सम्बन्धों का दर्शाता है।
2. सम्बन्ध स्थापित करने का कारण कोई न कोई समस्या होती है।
3. व्यक्ति जो सहायता चाहता है वह उस समस्या को समाधान करने में अपने को अक्षम पाता है।
4. परामर्शदाता एक व्यावसायिक व्यक्ति होता है। अर्थात् परामर्श देने की कला में वह निपुण होता है, उसे उसका प्रशिक्षण मिला होता है।
5. परामर्श का उद्देश्य व्यक्तिगत कठिनाइयों का समाधान करना है।

पेपिन स्काई तथा पेपिन स्काई की परिभाषा में निम्न विशेषता पायी जाती है:-

1. परामर्श एक अंतर्क्रिया है जो व्यक्तियों के बीच घटित होती है।
2. इन दो व्यक्तियों में एक परामर्शदाता होता है जो परामर्श देने की व्यवसायिक योग्यता तथा दक्षता रखता है तथा दूसरा व्यक्ति जो परामर्श या परामर्श चाहता है| वह ऐसी समस्या से ग्रस्त होता है जिसका उसके पास निदान एवं उपचार नहीं होता है। इसलिए उसे सेवार्थी कहा जाता है।
3. परामर्श का कार्य किसी संस्था के माध्यम से सम्भव होता है।
4. परामर्श का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी के व्यवहार में परिवर्तन लाना है जिससे वह समस्या के कारणों को समझते हुए उसका समाधान कर सके।

पैटरसन की परिभाषा निम्न विशेषताओं को दर्शाती है:-

1. परामर्श प्रक्रिया में एक उपचारक होता है तथा दूसरा सेवार्थी होता है जो उपचारक के पास सहायता के लिए आता है।

2. परामर्श अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों की प्रक्रिया है।
3. उपचारक को मानव व्यवहार का पूर्ण ज्ञान होता है तथा वह इसी के आधार पर सेवार्थी के व्यक्तित्व का अध्ययन करता है।
4. उपचारक का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी के मानसिक स्वास्थ्य को संवर्धित करना होता है।
5. वह इस कार्य के लिए मनोविज्ञान तथा मनोचिकित्सा का उपयोग करता है।

रोजर्स का विचार है कि-

1. परामर्श के द्वारा सेवार्थी अपने मन को हल्का करता है अर्थात् अपने तनाव को कम करता है।
2. सेवार्थी को अवसर प्राप्त होता है कि वह परामर्शदाता की सहायता से अपनी प्रतिभाओं को विकसित कर ले।
3. परामर्श का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी के नकारात्मक विचारों के स्थान पर सकारात्मक विचारों को स्थापित करना है।

रेन का मत है कि-

1. परामर्श एक गत्यात्मक तथा उद्देश्यपूर्ण सम्बन्धों को दर्शाता है। अर्थात् परामर्शदाता जितना ही व्यावसायिक दक्षता से युक्त होगा वह उतना ही अपना प्रभाव सेवार्थी के ऊपर डाल सकेगा तथा उसकी समस्याओं का समाधान करने में सफल होगा।
2. परामर्श किसी विशेष समस्या से सम्बन्धित होती है। परामर्शदाता का उद्देश्य किसी एक समस्या का विश्लेषण, विवेचना तथा समाधान करना होता है। इसलिए परामर्श के क्षेत्र के अनुसार ही सेवार्थी को स्वीकार किया जाता है।
3. परामर्श कार्य में न केवल परामर्शदाता विचार करता है एवं समाधान ढूढ़ता है बल्कि सेवार्थी भी बराबर का भागीदार होता है।

इण्टरनेट राउण्ड टेबुल फार दि एडवान्समेंट आफ कौसिलिंग के अनुसार

1. परामर्श के माध्यम से एक दूसरे से सम्बन्ध स्थापित होते हैं तथा इस सम्बन्ध स्थापना का उद्देश्य विचार विमर्श करना है।
2. इसके माध्यम से तथ्यों की छानबीन की जाती है, विवेचना किया जाता है।
3. इसके द्वारा दूसरों को ऐसे अवसरों की खोज की जाती है जहाँ पर वे एक ओर संतोष प्राप्त कर सकें तथा ओर अपने जीवन को सुखमय बनाकर आनंद से रह सकें।

अमेरिका एसोसियेशन आफ कौसिलिंग एण्ड डेवलपमेंट के विचार इस प्रकार हैं-

1. परामर्शदाता का उद्देश्य व्यक्ति की उपयोगिता को बढ़ाना होता है।
2. वह व्यक्ति की महत्ता और क्षमता को बढ़ाता है।
3. प्रत्येक व्यक्ति को अनोखा बनाकर उसकी विशेषताओं को विकसित करता है।
4. इस वैयक्तिक एवं सामूहिक प्रयत्न के कारण वह पूरे समाज की सेवा के लिए संकल्पित होता है।

कन्साइज आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के अनुसार

1. परामर्श, परामर्श देने की एक प्रक्रिया तथा कला है।
2. इसके द्वारा सेवार्थी की सहायता की जाती है तथा विभिन्न क्षेत्रों से उसे निर्देशन प्राप्त होता है।
3. परामर्श देने वाला प्रशिक्षित होता है तथा व्यासायिक के रूप में कार्य करता है।
4. व्यक्तिगत, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक सभी प्रकार की समस्याओं के समाधान के उपाय बताता है।

जेम्स मिचैल ली तथा नाथनियल जे पैरर्न के अनुसार

1. परामर्श दो व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध होता है।
2. इस सम्बन्ध में एक व्यक्ति दूसरे की सहायता करता है।
3. इस सहायता का उद्देश्य दूसरे व्यक्ति को समायोजित करने की कला सिखाना होता है जिससे उसका जीवन सुखमय हो सके।
4. परामर्श के माध्यम से सेवार्थी की अभी की सभी क्षमताओं का पूर्ण प्रकटीकरण सम्भव होता है।
5. इसमें औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार के सम्बन्ध हो सकते हैं।

मेरले तथा आलसेन के विचार से

1. परामर्श एक स्वीकृत तथा विश्वसनीय सम्बन्धों को दर्शाता है।
2. सेवार्थी इसके माध्यम से चिन्ताओं, परेशानियों को परामर्शदाता के सामने रखता है।
3. वह अपने उद्देश्यों को भी बताता है कि किस कारण वह आया है।
4. वह स्पष्ट करता है कि उसे किस प्रकार की सामाजिक निपुणताओं की आवश्यकता है तथा उसे किस प्रकार के आत्मविश्वास की जरूरत है जिससे अपनी समस्याओं का समाधान वह कर सके।

अरवूवले ने परामर्श की निम्न विशेषतायें बताई हैं

1. परामर्श द्वारा व्यक्ति अपने विषय में जानकारी प्राप्त करता है।
2. वह जानता है कि उसमें क्या-क्या गुण हैं, विशेषतायें हैं तथा क्या-क्या नहीं है जिसके कारण वह समस्याग्रस्त है।
3. वह यह भी परामर्श के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करता है कि कौन से कार्य वह आसानी से पूरे कर सकता है, कौन कठिनाई से तथा कौन नहीं कर सकता है।

सम्पूर्ण परिभाषाओं का विश्लेषण करने के बाद कहा जा सकता है कि-

1. परामर्श में दो व्यक्ति होते है-एक सहायता चाहता है तथा दूसरा व्यवसायिक रूप से प्रशिक्षित होने के कारण सहायता देने में समर्थ होता है।
2. यह आवश्यक है कि दोनों व्यक्ति के बीच सम्बन्धों का आधार पारस्परिक स्वीकृति हो तथा दोनों ही उसे आदर एवं सम्मान करें।
3. परामर्शदाता को मित्रवत व्यवहार करना चाहिए तथा सहयोग देने की भावना प्रबल हो।
4. परामर्श प्राप्त करने वाले में परामर्शदाता के प्रति विश्वास तथा भरोसा हो।
5. परामर्श के माध्यम से सेवार्थी में आत्मनिर्भरता तथा उत्तरदायित्वों को पूरा करने की भावना का विकास किया जाता है।

6. परामर्श के माध्यम से सेवार्थी की सहायता उसकी क्षमताओं को ढूढ़ने तथा उन्हें पूरी तरह उपयोग में लाने का प्रयास किया जाता है जिससे उसकी सभी क्षमतायें वास्तविक रूप में प्रकट होकर उसे समस्याओं के समाधान करने में तथा सुखमय जीवन बनाने में सफलता मिल सके।
7. यह केवल सलाह ही नहीं बल्कि उसके माध्यम से सेवार्थी स्वयं समस्या का मार्ग ढूँढता है परामर्शदाता केवल उपाय बताता है।
8. परामर्श के माध्यम से व्यक्ति में परिवर्तन लाया जाता है जिससे समस्या का समाधान सम्भव होता है।
9. इसका सम्बन्ध मनोवृत्तियों के बदलाव से भी होता है।
10. यद्यपि परामर्श प्रक्रिया में सूचना और वैकल्पिक ज्ञान का महत्व होता है लेकिन सबसे महत्वपूर्ण सांवेगिक भावनायें होती हैं जिस पर प्रक्रिया निर्भर होती है। परामर्श में कार्यकर्ता का ध्यान सेवा पर न होकर केवल समस्या पर ही रहता है। परामर्शदाता किसी एक विशेष समस्या से सम्बन्धित सहायता करने में निपुण होता है। जैसा- विवाह परामर्श, व्यावसायिक परामर्श, परिवार परामर्श, विद्यालय परामर्श आदि। उसको ज्ञान, दक्षता, निपुणता, योग्यता तथा समय विशिष्ट सहायता प्रदान करने में ही उपयोग में लाया जाता है।

1.3 परामर्श के लक्ष्य

परामर्श के दर्शन पर विचार करते समय हमने परामर्श के लक्ष्यों पर विचार किया था। किन्तु यहाँ पर परामर्श की प्रक्रिया का मुख्य अंग होने के कारण लक्ष्यों का विवेचन विस्तार से अपेक्षित है। परामर्श पर मनोवैज्ञानिकों द्वारा स्वीकृत कुछ उद्देश्यों का पुनराख्यान यहाँ प्रस्तुत है। ध्यान रखने की बात यह है कि इन विद्वानों ने परामर्श एवं मनोचिकित्सा को एकार्थवाची माना है। अतः जहाँ परामर्श एवं परामर्शदाता से सम्बन्ध रखते हैं वहीं मनोचिकित्सा से भी इनका सम्बन्ध जुड़ जाता है।

राबर्ट, डब्ल्यू० ह्वाइट के अनुसार, जब कोई व्यक्ति मनोचिकित्सक की हैसियत से कार्य करता है तब उसका उद्देश्य प्रभाव डालने अथवा सहमति प्राप्त न होकर केवल अच्छे स्वास्थ्य की दशा को पुनस्थापित करना होता है। एक मनोचिकित्सक को न तो कुछ बेचना होता है और न ही विहितीकरण करना। ह्वाइट के इस दृष्टिकोण से यह स्पष्ट है कि मनोचिकित्सक या परामर्शदाता का कार्य केवल उपबोध्य के मानसिक स्वास्थ्य को सामान्य बनाना होता है। अपना कोई आग्रह या दृष्टिकोण उपबोध्य पर आरोपित करना उसका लक्ष्य नहीं होता। परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य को किसी खास विचारधारा या जीवन पद्धति को स्वीकार करने का आग्रह नहीं करता।

ग्राहक केन्द्रित उपबोधन की प्रकृति पर विचार करते हुए ए० बी० ब्वाय तथा जी० जे० पाइन ने परामर्शदाता द्वारा विशेष रूप से माध्यमिक स्कूल स्तर पर विद्यार्थी को "अधिक प्रौढ़ एवं स्वयं क्रियाशील बनने, विधेयात्मक तथा रचनात्मक दिशा में आगे बढ़ने, अपने साधनों एवं सम्भावनाओं के उपयोग व समाजीकरण की ओर बढ़ने मे सहायता देने के लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित रखने के लिए कहा है। इस प्रकार परामर्श का लक्ष्य विद्यार्थी को अधिक परिपक्व ढंग से विचार करने एवं स्वयं कार्य करने में सहायता देना है। विद्यार्थी को अपनी योग्यता एवं सम्भाव्यता का पता लगाने तथा उनका उसके सामाजिक विकास में उपयोग करना परामर्श का लक्ष्य है।

सामान्य नैदानिक परामर्श पर विचार करते हुए ब्वाय एवं पाइन ने जिन लक्ष्यों को ध्यान में रखने को कहा है, वे हैं- "उपबोध्य को अधिक अच्छा करने में सहायता देने अर्थात् उपबोध्य को अपने महत्व को स्वीकारने, वास्तविक 'स्व' एवं आदर्श 'स्व' के बीच के अन्तर को मिटाने में सहायता देने तथा लोगों को अपनी वैयक्तिक समस्याओं में अपेक्षाकृत स्पष्टता से विचार करने में सहायता देने से सम्बन्धित हैं।

इस प्रकार ब्वाय तथा पाइन व्यक्ति को अपनी क्षमता एवं सीमाओं से परिचित कराना एवं अपनी समस्याओं के प्रति संदृष्टि का विकास करना परामर्श का लक्ष्य स्वीकार करते हैं। प्रायः लोग अपने सम्बन्ध में एक अवास्तविक आदर्श धारणा विकसित कर लेते हैं जो उनकी वास्तविक क्षमता से भिन्न होती है ?। इसी भिन्नता को दूर करने के लिए ब्वाय तथा पाइन वास्तविक 'स्व' एवं आदर्श 'स्व' की दूरी मिटाने की बात कहते हैं।

अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने परामर्श के उद्देश्यों को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया है -

(अ) उपबोध्य द्वारा अपनी क्षमताओं, अभिप्रेरकों तथा आत्म दृष्टिकोणों की यथार्थ स्वीकृति;

(ब) उपबोध्य के द्वारा सामाजिक, आर्थिक तथा व्यावसायिक परिवेश के साथ तर्कसंगत सामंजस्य की प्राप्ति; तथा

(स) वैयक्तिक भिन्नताओं की समाज द्वारा स्वीकृति तथा समुदाय, रोजगार एवं वैवाहिक सम्बन्धों के क्षेत्र में उनका निहितार्थ।

उपर्युक्त उद्देश्यों के विश्लेषण से पता चलता है कि परामर्श के लक्ष्य में कई बातें आ जाती हैं। सर्वप्रथम व्यक्ति का अपने सम्बन्ध में यही मूल्यांकन प्राप्त करना परामर्श का लक्ष्य है। तत्पश्चात् व्यक्ति का अपने परिवेश के साथ किस प्रकार का सामंजस्य है, इस पर ध्यान देना चाहिए। व्यक्ति जीवन में तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक अपने परिवेश के साथ उसका सन्तोषजनक सामंजस्य स्थापित न हो जाय। समाज में उपलब्ध आर्थिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों एवं सम्भावनाओं को उसे अपनी योग्यताओं एवं सीमाओं के सन्दर्भ में देखना पड़ता है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य के लिए जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से उसका सामंजस्य वास्तविक धरातल पर होना चाहिए। परामर्श के उद्देश्य की जिन तीन दिशाओं को ऊपर विचार किया गया है उन पर अब अलग-अलग विचार करेंगे।

परामर्श के उद्देश्य की दिशायें

(1) आत्म-ज्ञान

व्यक्ति को अपने मूल्यांकन में सहायता करना परामर्श का लक्ष्य है। व्यक्ति को अपने विषय में जानने, अपनी शक्ति और सम्भावनाओं को पहचानने हेतु इस परामर्श की आवश्यकता पड़ती है। परामर्श एक प्रकार से उस ज्योति की तरह है जिसके आलोक में व्यक्ति को अपने अन्तर्बाह्य स्वरूप को पहचानने में सहायता मिलती है। इनमें कोई सन्देह नहीं कि व्यक्ति के आत्म-ज्ञान के लिए तथा उसके मूल्यांकन के लिए परामर्श की अनेक विधियों का सहारा लेना पड़ता है। परामर्श साक्षात्कार अथवा ग्राहक-केन्द्रित परामर्श अथवा अनिदेशात्मक उपबोधन आदि अनेक प्रकार से व्यक्ति को अपने यथार्थ स्वरूप से परिचित होने मे सहायता की जाती है। परामर्श प्रक्रम की सफलता इस मापदण्ड द्वारा आँकी जाती है कि कहाँ तक वह उपबोध्य को उसके वास्तविक आत्म-ज्ञान से अवगत कराने में सहायक रहा है। लियोना टायलर के अनुसार, ''हमें परामर्श को एक सहायक प्रक्रम के रूप में प्रयुक्त करना है जिसका उद्देश्य व्यक्ति को बदलना नहीं है अपितु उसको उन स्रोतों के उपयोग में समर्थ बनाना है जो उसके पास इस समय जीवन का सामना करने के लिए मौजूद हैं। तब हम परामर्श से इस उपलब्धि की आशा करेंगे कि उपबोध्य अपनी ओर से कुछ रचनात्मक क्रिया करे।

इस प्रकार परामर्श की प्रक्रिया व्यक्ति को आत्म-परिज्ञान के साथ-साथ उसे अपनी सहायता स्वयं करने योग्य बनाती अर्थात् वह विभिन्न समस्याओं के प्रति अपनी अन्तदृष्टि विकसित कर अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुरूप उसका समाधान खोजने में समर्थ है।

(2) आत्म-स्वीकृति

परामर्श का दूसरा प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को आत्म-स्वीकृति में सहायता देना है। व्यक्ति का जो व्यक्तित्व अथवा प्रतिमा होती है उसे वह स्वयं स्वीकार करें। कई बार लोग अपने बारे में उचित दृष्टिकोण नहीं बना पाते, वे दूसरों के द्वारा जैसे स्वीकार किये जाते हैं उसी रूप में अपने को मान लेते हैं। किन्तु व्यक्ति का जहाँ एक-दूसरे के द्वारा स्वीकृत रूप होता है वहाँ उसको अपने स्वरूप को स्वयं भी स्वीकारना पड़ता है। कोई व्यक्ति यदि बाह्य आकृति से रूपवान नहीं है तो उसे अपने प्रति कुरूप अथवा निषेधात्मक धारणा नहीं बना लेनी चाहिए, अपितु उचित परामर्श द्वारा उसे समझाया जाना चाहिए कि वास्तविक सौन्दर्य हृदय का होता है। यदि कोई व्यक्ति बाहर से अत्यन्त सुन्दर है किन्तु उसका स्वभाव एवं आचरण अच्छा नहीं है तो वह यथार्थतः सुन्दर नहीं होगा। इसी प्रकार रूप होते हुए भी व्यक्ति अपने गुणों एवं अच्छे स्वभाव से सुन्दर लगता है और लोग उसकी ओर आकृष्ट होते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि व्यक्ति अपने यथार्थ मूल्यांकन के रूप में अपने वास्तविक स्वरूप को स्वीकार करे। परामर्श इस कार्य में उसकी सहायता कर सकता है।

आत्म-स्वीकृति में व्यक्ति को अपने स्वरूप-निर्माण में अपनी कमियों, कमजोरियों एवं सीमाओं पर भी दृष्टि रखनी चाहिए। इसके अभाव में वह अपने सम्बन्ध में गलत धारणा बना सकता है और उसे असफलता एवं निराशा का सामना करना पड़ सकता है। इस प्रकार यदि परामर्श व्यक्ति को अपने सही रूप को स्वीकार करने में सहायक होता है तो वह व्यक्ति के विकास के लिए दृढ़ आधार प्रदान कर सकता है। अपने स्वरूप के परिज्ञान के आधार पर व्यक्ति जीवन के लक्ष्यों का निर्धारण भी आसानी से कर सकता है तथा उसकी प्राप्ति में सफल हो सकता है।

(3) सामाजिक समरसता

परामर्श का एक लक्ष्य व्यक्ति की सामाजिक समरसता में सहायक होना भी है। व्यक्ति की अनेक समस्याएं उसके समाज के साथ भली प्रकार समायोजन न कर पाने के कारण उत्पन्न होती हैं। सामाजिक व्यवहार एवं सामाजिक जीवन को समझने एवं लोक-व्यवहार के अनुरूप कार्य करने में व्यक्ति को अपने वैयक्तिक स्वार्थों की परिधि से निकलना पड़ता है। ऐसा करने के लिए सहिष्णुता, उदारता एवं मित्रता स्थापित कर सकने के गुण अपेक्षित हैं। परामर्श के द्वारा व्यक्ति को पूर्वाग्रहों व संकीर्ण चिन्तन से मुक्त कर उसे सामाजिक जीवन के साथ समायोजित करने में परामर्श अपना योगदान देता है। परामर्श व्यक्ति से अपेक्षित सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों का ज्ञान कराकर उन्हें व्यक्ति को उसके जीवन-दृष्टि का अंग बनाने में सहायता करता है। यद्यपि यह कठिन कार्य है, किन्तु व्यक्ति का सामाजिक समंजन इसके विकास एवं सन्तोष के लिए आवश्यक है। अतः परामर्श के लक्ष्यों में सामाजिक समंजन प्राप्त करने में व्यक्ति को सहायता देने का कार्य महत्वपूर्ण लक्ष्य है।

परामर्श सेवा के लक्ष्य

किसी भी प्रकार की सेवा करने के लिए उसके लक्ष्यों का जानना आवश्यक होता है। लक्ष्य कार्य करने की दिशा प्रदान करते हैं तथा कार्य मूल्यांकन में सहायता मिलती है। लक्ष्य निश्चित होने पर सेवा देने वाले तथा सेवार्थी दोनों के ज्ञान रहता है कि उन्हें किस प्रकार की सेवायें प्राप्त हो सकती है। परामर्शदाता के लिए भी यही बात महत्व की होती है।

1. सेवार्थी के व्यवहार का ज्ञान प्राप्त करना: मानव व्यवहार को समझना एक कठिन समस्या है। यह व्यवहार निश्चित उद्देश्यों तथा प्रवृत्तियों द्वारा निर्देशित होता है। जैविकीय तथा सामाजिक कारक दोनों ही व्यवहार को प्रभावित करते है। परामर्शदाता का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह पहले सेवार्थी के व्यवहार की विवेचना करे तथा निष्कर्ष पर पहुँचे कि वे कौन से कारक है जो उस पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहे हैं। इस कार्य के लिए

उसे न केवल सेवार्थी के विषय में ज्ञान प्राप्त करना होगा। बल्कि सामाजिक अन्त्रक्रिया से विभिन्न पहलुओं को भी समझना होगा।

2. सेवार्थी की सम्प्रेरणाओं का पता लगाना: व्यक्ति का व्यवहार प्रेरकों द्वारा संचालित तथा निर्देशित होता है। उसके मूल में कोई न कोई न कोई पे्ररणा होती है जिसके प्रभाव से तब तक वह कार्य करता रहता है जब तक उसको लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती है। सम्प्रेरणा वह शक्ति होती है जो व्यक्ति को विशिष्ट व्यवहार करने के लिए प्रेरित करती है। साथ ही साथ वह संचालित व निर्दैशित भी करते है। परामर्शदाता यह पता लगाता है कि सेवार्थी में किस प्रकार की शक्तियाँ सहायक हैं तथा कौन विपरीत दिशा में कार्य कर रही है। सम्प्रेरण के स्तर को जानकर सेवार्थी में अनुकूलन सम्प्रेरकों को प्रेरित करता है। जिसमें वह अपनी समस्या सुलझाने में सफल होता है।
3. सेवार्थी की भावनाओं का पता लगाना: भावनायें बड़ी महत्वपूर्ण होती हैं तथा उनका समायानुसार प्रगटन भी महत्व रखता है। भवनाये वैसे तो कई प्रकार की होती है परन्तु सकारात्मक तथा नकारात्मक दो प्रकार की प्रमुख हैं तथा एक दूसरे की विरोधी भी है। सकारात्मक भावनायें आगे बढ़ने तथा समस्या सुलझाने में सहायता करती है। इसके विपरीत नकारात्मक भावनायें समायोजन को कठिन बनाती है। व्यक्तित्व का विघटन करती है तथा पग-पग बाधा खड़ी करती है। परामर्शदाता सेवार्थी की भावनाओं से परिचित होता है और यदि नकारात्मक भावनायें हैं तो उनको सकारात्मक रूप में बदलने का पूरा-परा प्रयास करता है। ऐसा करके ही वह सेवार्थी की सहायता कर सकता है।
4. सेवार्थी को तत्कालीन सहायता पहुंचाना: सेवार्थी जब परामर्शदाता के पास आता है तो उसकी दो प्रकार की समस्यायें होती है। एक तो तत्तकालीन तथा दूसरी दीर्घकालिन। तत्कालिक समस्याओं का समाधान होने पर ही सेवार्थी अपना सहयोग देगा तथा परामर्शदाता में विश्वास होगा कि व उसकी समस्याओं का समाधान कर सकता है। अतः परामर्शदाता सर्वप्रथम सेवार्थी को तुरन्त सहायता पहुंचाता है जिससे उसके तनाव में कमी आती है तथा आराम अनुभव करता है।
5. आत्म विकास के अवसर प्रदान करना: व्यक्ति में विकास की अनेकानेक प्रतिभायें होती है। जिन प्रतिभाओं के अनुरूप प्रेरणा तथा अवसर प्राप्त हो जाते है। वे प्रफुल्लित हो जाती है। परामर्शदाता न केवल तात्कालीन समस्याओं का समाधान करता है बल्कि उसमें उन क्षमताओं के विकास की दशायें उत्पन्न करता है जिससे वह अपनी प्रतिभाओं को मुखरित करने में सफल होता है।
6. समयोजन की समस्याओं का निराकरण: अनेक समस्याओं के कारण कुसमायोजन होता है। समायोजन एक सार्वभौमिक तथा निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। इसका भूख, प्यास, मनोवैज्ञानिक संतुष्टि, सामाजिक संतोष आदि से होता है। इसके साथ ही साथ प्रेम, वात्सल्य, स्वीकृति, आत्मप्रदर्शन आदि के अवसरों का सुनिश्चित होना समायोजन की स्थिति के द्योतक है। हमारी दिन प्रतिदिन की क्रियाओं का अधिकांश सम्बन्ध समायोजन तथा अनुकूलन से होता है। समायोजन व्यक्ति की महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है। इसके द्वारा वह अपने को भली भाँति समझता है, तथा इसके माध्यम से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। समायोजन दो प्रकार का होता है। (1) व्यक्तित्व समायोजन (2) अन्तरवैयक्तिक सम्बन्ध समायोजन। व्यक्तित्व समयोजन का तात्पर्य व्यक्ति के मूल्यों एवं मनोवृत्तियों में एकीकरण एवं संतुलन बनाये रखता है। इसका सम्बन्ध व्यक्ति की अहं शक्ति से होता है। अन्त्रवैयक्तिक सम्बन्ध समयोजन का तात्पर्य व्यक्ति के मूल्यों एवं मनोवृत्तियों में एककीकरण एवं संतुलन बनाये रखता है। इसका सम्बन्ध व्यक्ति की अहं शक्ति से होता है। अन्त्रवैयक्तिक सम्बन्ध समयोजन का तात्पर्य व्यक्ति का अन्य व्यक्तियों के मध्य सम्बन्ध से है। जब कभी इन्हीं दो क्षेत्रों में

असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है अथवा समयोजन की पूरी प्रक्रिया पूरी करते हुये उसे इस योग्यता बनाता है कि वह दोनों प्रकार के समायोजन करने की शक्ति विकसित कर लें।

7. सेवार्थी को आत्म अनुभूति कराना: परामर्शदाता सेवार्थी को इस प्रकार से सहायता करता है कि वह अपनी शक्तियों, अच्छे गुणों तथा क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त करते हुए अपनी कमियों को भी ज्ञान प्राप्त करता है तथा उसे स्वीकार करके उन्हें दूर करने का प्रयास करने लगता है। इससे विकास की प्रक्रिया स्वतः चलायमान में हो जाती है। जब तक सेवार्थी को सकारात्मक तथा नकारात्मक शाक्तियों का ज्ञान नहीं होता है तथा ज्ञान होने पर स्वीकार नहीं करता है तब तक समस्या का समाधान नहीं हो सकता है।
8. पूर्ण कार्यात्मक व्यक्ति बनाने में सहायता करना: परामर्शदाता सेवार्थी की केवल उसी समस्या का समाधान नहीं करता है जिसके लिए वह परामर्श केन्द्र पर आया है बल्कि उसे इस प्रकार से निर्देशित करता है कि वह अपनी पूर्ण प्रतिभा का विकास भी प्रदान किया जा सकता है।
9. वैयक्तिक कार्यात्मकता में संवर्धन करना: समस्या तभी उत्पन्न होती है जब व्यक्ति सही समय पर सही निर्णय नहीं ले पाता। उसके कई कारण हो सकते हैं। उसकी अपनी कमियाँ हो सकती है तथा सामाजिक कारक भी उत्तरदायी हो सकते है। परामर्शदाता इन दोनों प्रकार की स्थितियों का आकलन करता है तथा वैयक्तिक कमियों को दूर करने सेवार्थी केा समयानुसार निर्णय करने की शक्ति मे वृद्धि करता है।
10. निर्णय की क्षमता विकसित करना: समस्या तभी उत्पन्न होती है जब व्यक्ति सही समय पर सही निर्णय नहीं ले पाता। उसके कई कारण हो सकते है। उसकी अपनी कमियाँ हो सकती है तथा सामाजिक कारक भी उत्तरदायी हो सकते है। परामर्शदाता इन दोनों प्रकार की स्थितियों का आकलन करता है तथा वैयक्तिक कमियों को दूर करके सेवार्थी को समयानुसार निर्णय करने की शक्ति में वृद्धि करता है।
11. मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान: व्यक्ति मनोसामाजिक प्राणी है और इसे इन्हीं क्षेत्रों में समायोजन करना होता है तथा समस्याओं का समाधान करना होता है। उसकी समस्यायें भी इन्हीं क्षेत्रों से सम्बन्धित होती है। कभी -कभी वह भग्नाषा ,कुंठा ,हीनभावना ,तनाव आदि से ग्रस्त हो जाता है। तब वह सामाजिक स्थितियों से अनुकूलन नहीं कर पाता है। यह स्थिति उसके लिए दुखदायी होती है। उसकी कार्य क्षमता ,समायोजन क्षमता तथा कार्यात्मकता पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ने से व्यक्ति दुखी रहने लगता है। सेवार्थी जब परामर्श केन्द्र पर आता है तो परामर्शदाता उसकी इस प्रकार की समस्या की खोज करके निदान एंव उपचार के तरीके बताता है।
12. मानसिक स्वास्थ्य संवर्धन करना:- जब व्यक्ति मानसिक रूप से स्वस्थ होता है तभी वह अपना कार्य सही ढ़ग से कर सकता है लेकिन जब विपरीत परिस्थितियाँ होती है उसका संतुलन बिगड़ जाता है और समस्याग्रस्त हो जाता है मत्रंणादाता| अनेक प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करके उसके मानसिक स्वास्थ्य का संवर्धन करता है।
13. सेवार्थी में आमूल चूल परिवर्तन लाना:- कभी-कभी ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न होती है जहाँ पर सेवार्थी के विचारों व्यवहारों मनोवृत्तियों ,भावनाओं प्रत्यक्षीकरण आदि सभी में परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है। ऐसी दशा में मत्रंणादाता एक वृहद कार्यक्रम बनाता है तथा दीर्घकालीन सहायता प्रदान करता है।
14. सेवार्थी में प्रजातांत्रिक मूल्य का संवर्धन करना:- जब व्यक्ति की सोच अपने तक ही सीमित रह जाती है तो उसके सम्बन्ध बिगड़ने लगते हैं । इस प्रकार की समस्याओं तभी समाधान हो सकता है जब अपना दृष्टिकोण वृहद हो जाता है तथा प्रजातांत्रिक मूल्यों पर आधारित हो । मंत्रणादाता का यह कार्य महत्वपूर्ण होता है और वह सेवार्थी की सोच को बृहद बनाने का उपाय करता है।

समाज कार्य में परामर्श का लक्ष्य

लक्ष्यों को स्पष्ट करना न केवल महत्वपूर्ण है बल्कि आवश्यक भी है क्योंकि इससे दिशा और उद्देश्य का ज्ञान होता है ।इसके साथ कार्य के मूल्यांकन में भी सहायता मिलती है। परामर्श में दो प्रकार लक्ष्य होते है- (1) लघुकालीन लक्ष्य (2) दीर्घकालीन लक्ष्य

परामर्श का लघुकालीन लक्ष्य सेवार्थी को तुरन्त आराम या राहत पहुँचाना है तथा कार्यात्मक ,शारीरिक एवं मानसिक गिरावट को रोकना है। दीर्घकालीन लक्ष्य के अन्तरगत सेवार्थी को कार्यात्मक व्यक्तित्व बनाना, आत्मविश्वास को जागृत करना तथा ऐसी ऊर्जा पैदा करना जिससे अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर सके।

परामर्शदाता का उद्देश्य सेवार्थी की आवश्यक समस्याओं का समाधान जो अति आवश्यक है करना होता है तथा उसे उन विशेषताओं, गुणों तथा तकनीकियो से अवगत कराना होता है जिससे भविष्य में इस प्रकार की समस्याओं का समाधान स्वतः कर सके। परामर्श सेवार्थी की विशेषताओं एवं गुणों पर निर्भर होती है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तित्व भिन्न-भिन्न होता है। अतः समस्या एक होने पर भी समाधान के उपाय भिन्न-भिन्न हो सकते है।

परामर्श का लघुकालीन लक्ष्य उसे संदर्भित करता है। जिसके लिए सेवार्थी आया है तथा तुरन्त समाधान चाहता है। वह चूँकि अपनी क्षमताओं के विषय में ज्ञान नहीं रखता है तथा उनका उपयोग करने में सक्षम है इसलिए वह प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य कर नहीं पा रहा है। परामर्शदाता परामर्श द्वारा द्वारा सेवार्थी में आत्म विश्वास जागृत करता है तथा ज्ञान प्रदान करता है कि वह किस प्रकार से वर्तमान समस्या का समाधान कर सकता है।

दीर्घकालीन लक्ष्य के अन्तर्गत परामर्शदाता सेवार्थी की क्षमताओं का पूर्ण प्रकट में सहायक है, आत्म-अनुभव में वृद्धि करता है तथा पूर्ण कार्यात्मक व्यक्ति बनाता है।

इसके अतिरिक्त परामर्श के निम्नलिखित लक्ष्य है:

1. सेवार्थी में सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि करना।
2. सेवार्थी की वैयक्तिक प्रभावपूर्ण से सुधार करना।
3. सेवार्थी की समस्याओं का समाधान करना।
4. सेवार्थी के व्यवहार में परिवर्तन लाना।
5. निर्णय लेने में दक्षता बनाना।

1.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के अर्थ एवं अवधारणा के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। शेफर राबर्ट एच तथा गार्डन हेम्लटन द्वारा दी गई परामर्श की परिभाषा का अध्ययन किया। परामर्श दो व्यक्तियों के बीच एक गुणात्मक तथा उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध है जो परस्पर एक परिभाषित समस्या के समाधान के लिये मिलते है तथा समस्या के समाधान का मार्ग ढूंढ़ते हैं। तत्पश्चात् परामर्श सेवा के लक्ष्यों के बारे में अध्ययन किया। परामर्श के अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन लक्ष्यों को जाना तथा अंत में समाज कार्य में परामर्श के लक्ष्य का अध्ययन किया।

1.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.परामर्श के अर्थ का वर्णन कीजिए।

2. परामर्श की प्रमुख परिभाषाओं का वर्णन कीजिए।
3. परामर्श के लक्ष्यों को समझाइये।
4. परामर्श के उद्देश्यों को समझाते हुए इसकी दिशाओं का वर्णन कीजिए।
5. समाज कार्य में परामर्श के लक्ष्यों का वर्णन कीजिए।

1.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

- आलम, डा. शाह एवं गुफरान, डा. मोहम्मद, निर्देशन एवं परामर्श का मूलभूत आधार, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011
- जायसवाल, डा. सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, 2011
- सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.
- सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.
- मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.
- सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ,
- रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.
- मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.
- सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.
- सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.
- मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

इकाई -2

परामर्श के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 परामर्श

- 2.2.1 शैक्षिक निर्देशन तथा परामर्श
- 2.2.2 जीवनवृति, व्यवसायिक निर्देशन तथा परामर्श
- 2.2.3 वैयक्तिक निर्देशन तथा परामर्श
- 2.2.4 वैयक्तिक परामर्श
- 2.2.5 परामर्श के विकासात्मक कार्य
- 2.2.6 सामूहिक परामर्श

2.3 परामर्श के प्रकार

- 2.3.1 नैदानिक परामर्श
- 2.3.2 मनोवैज्ञानिक परामर्श
- 2.3.3 मनोचिकित्सकीय परामर्श
- 2.3.4 छात्र परामर्श
- 2.3.5 नियोजन परामर्श
- 2.3.6 वैवाहिक परामर्श
- 2.3.7 व्यावसायिक एवं जीविका परामर्श
- 2.3.8 परामर्श के प्रकारों के सम्बन्ध में रोजर्स तथा वैलेन के विचार

2.4 निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श

- 2.4.1 निदेशात्मक परामर्श
- 2.4.2 अनिदेशात्मक परामर्श
- 2.4.3 संग्रही परामर्श

2.5 सारांश

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप-

1. परामर्श के शैक्षिक निर्देशन तथा वैयक्तिक निर्देशन परामर्श को समझ सकेंगे।
2. सामूहिक परामर्श के विषय में अध्ययन कर सकेंगे।
3. परामर्श के विकासात्मक कार्यों का अध्ययन कर पायेंगे।
4. परामर्श के प्रकारों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
5. नैदानिक परामर्श, मनोवैज्ञानिक परामर्श, मनोचिकित्सीय परामर्श तथा छात्र परामर्श के विषय में वर्णन कर सकेंगे।
6. तत्पश्चात् निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के प्रकारों का वर्णन किया गया है। परामर्श की आवश्यकता आपातकाल, दुर्घटना, जीवनक्रम, अपंग स्थिति, जीवन को संकट में डालने वाली बीमारी तथा रोग, कार्यमुक्ति अथवा नौकरी से निकाल दिया जाना, वैवाहिक संघर्ष तथा अन्य इसी प्रकार की स्थितियोंमें पड़ती है। नैदानिक शब्द व्यक्ति को उसकी अद्वितीय सम्पूर्णता में अध्ययन करने की विधि की ओर संकेत करता है। इसके द्वारा विशिष्ट व्यवहारों का निरीक्षण किया जा सकता है तथा विशिष्ट गुणों को निष्कर्ष के रूप में ग्रहण किया जा सकता है। किन्तु लक्ष्य व्यक्ति विशेष को समझना ही होता है। मनोवैज्ञानिक परामर्श व्यक्ति के सामने उपस्थित समस्या से ही सम्बन्धित नहीं रहता अपितु यह परामर्श प्रार्थी के व्यक्तित्व के विकास पर भी ध्यान देता है। वैवाहिक परामर्श में व्यक्ति को उपयुक्त जीवन-साथी के चुनाव के लिए राय या सहायता प्रदान की जाती है। निदेशात्मक परामर्श को समस्या केन्द्रित परामर्श भी कहा जाता है। निदेशात्मक परामर्श में सेवार्थी को अपनी भावनाओं को स्वतन्त्रापूर्वक व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है और इससे उसकी भावनाओं एवं अभिरुचियों का सही ज्ञान प्राप्त होता है और इस प्रकार समस्या का वास्तविक हल प्राप्त करने में सुविधा होती है।

2.2 परामर्श

परामर्श निर्देशन का अनिवार्य एवं अपरिहार्य पक्ष है। रोजर्स ने परामर्श को व्यक्ति की मनोवृत्ति तथा व्यवहार परिवर्तन के लिये दी जाने वाली सहायता के रूप में माना है। गिलबर्ट ने इसे दो व्यक्तियों के मध्य होने वाली गतिशील प्रक्रिया माना है। मायर्स परामर्श को दो व्यक्तियों के मध्य होने वाले सम्बन्धों के रूप में मानता है। इसमें एक व्यक्ति दूसरे की समस्या का समाधान करने में सहायता पहुँचाता है।

युवकों को उस समय परामर्श की आवश्कता अधिक होती है जब वे विद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् कार्य जगत में प्रवेश करते हैं। सामाजिक रूप से जो पिछड़े हैं, उन्हें भी अपने विकास के लिए परामर्श सेवाओं की आवश्यकता होती है। बाल अपराध तथा दुर्व्यसनी व्यक्तियों के लिये भी ये लाभ होता है। इसके अतिरिक्त उच्चशिक्षा, व्यवसायिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा, सामाजिक शिक्षा के लिए भी परामर्श महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं| मंत्रणादाता का अपना योगदान मुख्य रूप से निम्न योगों में आता है-

(1) शैक्षिक, (2) वैयक्तिक तथा सामाजिक (3) जीवनवृत्ति विकास।

परामर्श सेवा किसी भी व्यक्ति को शैक्षिक, प्रशिक्षण, व्यवसायिक चुनाव तथा अपनी जीवनवृत्ति के प्रबंधन में सहायता करता है। परामर्शदाता निम्न सहायता करता है।

- विद्यालय में विद्यार्थियों की सहायता अपने जीवन लक्ष्यों को निर्धारित करने तथा बाहय जगत को समझने में सहायता करता है।

- प्रारम्भिक अध्यापन दिशा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, आगे की शिक्षा तथा प्रशिक्षण, नौकरी की पसंद, व्यवसाय में परिवर्तन आदि में सहायता करता है।
- वह नौकरी के सम्बन्ध में सूचनायें देता है। कौन सा व्यवसाय उसके लिए उपयुक्त है,यह बताता है।

2.2.1 शैक्षिक निर्देशन तथा परामर्श

1. साइकोमेट्रिक परीक्षण करता है।
2. निपुणताओं का अध्ययन करता है।
3. सम्बन्धित समस्याओं को सुलझाने के तरीके को बताता है।
4. सम्प्रेरक निपुणताओं का उपयोग करता है।
5. सेवार्थी को जीवन लक्ष्य को निर्धारित करने में सहायता करता है।
6. निर्णय प्रक्रिया की निपुणताओं का विकास करता है।

2.2.2 जीवनवृति, व्यवसायिक निर्देशन तथा परामर्श

इसके अन्तर्गत निम्नकार्य प्रमुख हैं-

1. वैयक्तिक वृति का पथ नियोजन करना,
2. वृति सम्बन्धी सूचनायें देना,
3. व्यवसायिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करना,
4. निर्णय प्रक्रिया तथा नियोजन की निपुणता का विकास करना,
5. सेवा प्राप्त करने की निपुणताओं का विकास करना,
6. मनोवृत्ति परीक्षण करना,
7. रूचियों का परीक्षण करना,
8. रोजगार के अवसरों का ज्ञान करना।

2.2.3 वैयक्तिक निर्देशन तथा परामर्श

इस क्षेत्र में कार्यकर्ता की निम्न क्षेत्रों में सहायता करता हैः

1. सामाजिक मुद्दों पर चर्चा करता है।
2. सांस्कृतिक मुद्दों पर विचार करता है।
3. आर्थिक मुद्दों से सम्बन्धित वार्तालाप करता है।
4. सांवेविक मुद्दों को स्पष्ट करता है।
5. सम्बन्धों से सम्बन्धित मुद्दों में गति प्रदान करता है।
6. आपातकालीन स्थिति से समायोजन करने से सम्बन्धित तरीकों को बताता है।
7. संक्रमक काल से निपटने से सम्बन्धित मुद्दे पर चर्चा करता है।
8. वैयक्तिक संवेगों को समझने से सम्बन्धित मुद्दों की विवेचना करता है।

2.2.4 वैयक्तिक परामर्श

इस परामर्श सूत्र में निम्नलिखित प्रक्रिया होती है:

1. सत्र का उद्देश्य निर्धारित करना।
2. मित्रवत तथा उत्साहवर्धक वातावरण तैयार करना।
3. सूचनायें एकत्रित करना।
4. सेवार्थी की आवश्यकताओं का पता लगाना।
5. योजनायें बनाना, प्रक्रिया का निर्माण करना तथा सेवाओं के मूल्यांकन के लिए प्रणालियां विकसित करना।
6. अन्य सदस्यों की सहायता करना।
7. विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान हेतु नयी-नयी योजनायें बनाना।

परामर्श तथा निर्देश के लिए सामान्य दिशा निर्देश यह है-

1. किसी परामर्श कार्यक्रम को प्रारम्भ के साथ ही साथ इस बात पर विचार करना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है।
2. परामर्श सेवा प्रशिक्षण, निपुणताओं के विकास में तथा जीवन दर्शन को समझाने, सुचारू रूप से कार्य सम्पादन में, नेतृत्व की भूमिका तथा सलाहकार की भूमिका निभाने में होती है।
3. इस प्रकार से प्रयास करना चाहिए जिससे वातावरण सेवार्थी के अनुरूप हो सके तथा हर प्रकार से सहायता करने लगे।
4. सेवार्थी को जब तक आवश्यकता हो तब तक निरन्तर सेवाएं प्राप्त होती रहें।
5. सामाजिक पर्यावरण तथा सेवार्थी के बीच परस्पर सहयोग की सतही स्थिति उत्पन्न हो।

2.2.5 परामर्श के विकासात्मक कार्य

1. निर्भरता तथा स्वतंत्रता के तरीकों को उचित प्रकार से निर्धारित करना। बालक शारीरिक रूप से तो आत्म निर्भर हो जाता है लेकिन सांवेगिक रूप से मानव सम्बन्धों पर निर्भर होता है। इसी से उसकी वृद्धि सम्भव होती है।
2. आदान प्रदान में तरीकों की यथेष्टता प्राप्त करना। बालक दूसरों के स्नेह पाने की योग्यता विकसित करता है साथ ही दूसरे के प्रेम को प्राप्त करने की योग्यता विकसित करता है। वह पारस्परिकता के माध्यम से समाज के प्रति सकारात्मक सोच को जन्म देता है।
3. परिवर्तित होने वाले समूहों से सम्बन्ध रखने की क्षमता विकसित करता है |
4. चेतना, नैतिकता तथा मूल्यों का विकास करता है ।
5. लैंगिक भूमिका का उचित पालन करना सिखाता है।
6. स्वायत्तता की भावना को विकसित करता है।
7. प्रतीक व्यवस्था तथा प्रत्यय योग्यता का उचित विकास करता है।
8. आत्म अभिज्ञान तथा आत्म प्रकृति का विकास करता है।
9. आत्म का मूल्य जानता तथा दूसरों के आत्मसम्मान की रक्षा करता है|
10. विश्वास, पारस्परिक क्रिया तथा परस्पर रहने की योग्यता विकसित करता है।
11. अनुकरण तथा अध्ययनशील होने की शक्ति विकसित करता है|
12. आक्रामकता पर नियंत्रण करना सिखाना एवं सांवेगिक प्रतिक्रियाओं पर नियंत्रण करना बताता है।

2.2.6 सामूहिक परामर्श

इस प्रकार की परामर्श सत्र में सेवार्थी एक दूसरे की बात को सुनते हैं, एक दूसरे की सहायता करते हैं, तथा आवश्यक सूचनाओं का आदान प्रदान करते हैं। परामर्शदाता का कार्य दिशा निर्देशित करना होता है।

2.2.7 मूल्यांकन सेवायें

मूल्यांकन के लिए अनेक प्रकार के परीक्षण किये जाते है जिनसे सेवार्थी को मनोवृत्ति तथा योग्यता एवं क्षमता का ज्ञान होता है। निम्नलिखित परीक्षण प्रमुख हैं:

1. उपलब्धि परीक्षण।
2. मनोवृत्ति परीक्षण।
3. योग्यता प्ररीक्षण।
4. रूचि इनवेन्टरी।
5. समस्या चेक लिस्ट।
6. व्यक्तित्व यापन।

2.3 परामर्श के प्रकार

इस दृष्टि से समस्या तथा विषयी अथवा उपबोध्य की दृष्टि से परामर्श को अनेक भागों में बाँटा जा सकता है।

1. नैदानिक परामर्श
2. मनोवैज्ञानिक परामर्श
3. मनोचिकित्सकीय परामर्श
4. छात्र परामर्श
5. नियोजन परामर्श
6. वैवाहिक परामर्श
7. व्यावसायिक एवं जीविका परामर्श

परामर्श का सम्बन्ध जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं से होता है। उसके अनेक प्रयोजन होते हैं जिन पर हम परामर्श की प्रक्रिया के अंतर्गत विचार कर चुके हैं। प्रयोजनों, क्षेत्रों एवं लक्ष्यों की भिन्नता के आधार पर परामर्श के विभिन्न प्रारूप विकसित हो गये हैं।

2.3.1 नैदानिक परामर्श

एच० बी० पेपिंस्की ने नैदानिक परामर्श शब्द का प्रयोग करके यह सुझाया कि परामर्श का एक प्रारूप नैदानिक परामर्श भी है। नैदानिक परामर्श का अर्थ है-(अ) पूरी तरह न दबे एवं अक्षम न बना दने वाले, असाधारण कार्य-व्यापार सम्बन्धी (ऐन्द्रिय अथवा आंगिक के अतिरिक्त) अपसमायोजनों का निदान एवं उपचार तथा (ब) परामर्शदाता एवं उपबोध्य के बीच मुख्यतया व्यक्ति तथा आमने-सामने का सम्बन्ध।

पेपिंस्की के अनुसार नैदानिक परामर्श का सम्बन्ध व्यक्ति के सामान्य कार्य-व्यापार-सम्बन्धी अपसमायोजनों से है। उसमें उपबोध्य एवं परामर्शदाता का आमने-सामने का सम्बन्ध होता है। इंगलिश तथा इंगलिश के अनुसार, "नैदानिक शब्द व्यक्ति को उसकी अद्वितीय सम्पूर्णता में अध्ययन करने की विधि की ओर

संकेत करता है। इसके द्वारा विशिष्ट व्यवहारों का निरीक्षण किया जा सकता है तथा विशिष्ट गुणों को निष्कर्ष के रूप में ग्रहण किया जा सकता है किन्तु लक्ष्य व्यक्ति विशेष को समझना ही (तथा सहायता करना) होता है।"

इस प्रारूप के अन्तर्गत समस्या का विश्लेषण करने एवं उसका उपचार बताने का प्रयास भी किया जाता है। नैदानिक मनोविज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति की असामान्य दशाओं तथा असामान्य व्यवहारों का निदान कर जो सुझाव दिये जाते हैं तथा उपाय बताये जाते हैं, वे नैदानिक परामर्श के अन्तर्गत आते हैं। नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान तथा व्यक्ति व्यवहार से सम्बन्धित होकर वांछित उपचारात्मक उपाय प्रस्तुत करता है। ऐसे उपबोध्य की जो बेहतर समायोजन तथा आत्माभिव्यक्ति के क्रम में कोई अवांछनीय व्यवहार या मानसिक अव्यवस्था विकसित कर लेता है। इसके अन्तर्गत निदान, उपचार एवं प्रतिरोधन तथा ज्ञान के विस्तार के लिये जाने वाले शोध के लिए प्रशिक्षण एवं अभ्यास को ग्रहण किया जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि नैदानिक मनोविज्ञान एवं नैदानिक परामर्श में काफी समरूपता है।

2.3.2 मनोवैज्ञानिक परामर्श

आर० डब्ल्यू० ह्वाइट ने मनोवैज्ञानिक परामर्श शब्द का प्रयोग करते हुए लिखा है-"मनोवैज्ञानिक परामर्श का सन्दर्भ अपेक्षाकृत एक जैसे क्रिया-कलापों की बहुरूपता से है। इनको विधेयात्मक ढंग की अपेक्षा निषेधात्मक ढंग से लक्षित करना आसान है। अपनी विशिष्ट प्रक्रियाओं-मुक्त साहचर्य, व्याख्या, अन्यारोपण तथा स्पप्न-विश्लेषण से मुक्त मनोविश्लेषण तक को उन क्रिया-कलापों की संज्ञा नहीं दी जा सकती। वे सम्मोह, मनोनाटक आदि विशेष साधनों का प्रयोग नहीं करते। वे केवल उपबोध्य एवं चिकित्सक के मध्य होने वाली बातचीत पर ही निर्भर करते हैं। यह बातचीत प्रश्नोत्तर के रूप में हो सकती है, इतिहास के पुनर्निर्माण अथवा वर्तमान समस्याओं पर वाद-विवाद का रूप ग्रहण कर सकती है। यह उपबोध्य द्वारा भाव-विभोर होकर किया गया स्वागत आलाप हो सकता है अथवा इसके विपरीत चिकित्सक उपबोध्य को सब कुछ कहलवाने के लिए अग्रगमन करता है। चिकित्सक उत्साहित कर सकता है, जानकारी दे सकता है एवं सलाह दे सकता है। ये अपेक्षाकृत ऐसे विधेयात्मक कार्य हैं जो चिकित्सक द्वारा किये जाते हैं और मनोवैज्ञानिक परामर्श के सामान्य अर्थ के अन्तर्गत होते हैं।"

मनोवैज्ञानिक परामर्श में परामर्शदाता एक चिकित्सक की भाँति होता है और परामर्श चिकित्सा का एक रूप होता है। सामान्य वार्तालाप के द्वारा परामर्शदाता उपबोध्य को उसकी दमित भावनाओं एवं संवेगों को अभिव्यक्त करने में सहायता करता है। इस कार्य में परामर्शदाता उसे आवश्यक सूचना एवं सुझाव देता हुआ आशान्वित करता चलता है जिससे वह अबाध रूप से अपने भावों एवं समस्याओं को व्यक्त कर सके।ह्वाइट जैसे विद्वानों के द्वारा परामर्श और चिकित्सा शब्दों को एकार्थवाची स्वीकार कर लेने के कारण कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों ने जिनमें स्नाइडर का नाम प्रमुख है, नया शब्द मनोचिकित्सा सम्बन्धी परामर्श प्रचलित कर दिया।

2.3.3 मनोचिकित्सकीय परामर्श

मनोचिकित्सकीय परामर्श की परिभाषा करते हुए स्नाइडर ने लिखा है- "मनोचिकित्सा वह प्रत्यक्ष सम्बन्ध है, जिसमें मनावैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के सामाजिक अपसमायोजन वाले भावात्मक दृष्टिकोणों के परिष्कार के लिए शाब्दिक माध्यम से सचेत रूप में प्रयत्न करता रहता है और इसमें विषयी (उपबोध्य) सापेक्षतः अपने व्यक्तित्व के पुनर्संगठन से अवगत रहता है जिसमें से वह गुजर रहा है।"

स्नाइडर की इस व्याख्या पर विचार करने पर मनोचिकित्सात्मक परामर्श के दो पहलू हमारे सामने आते हैं। प्रथमतः वह परामर्श दृष्टिकोणों के परिष्कार से सम्बन्धित है, विशेष रूप से वे दृष्टिकोण जो सामाजिक अपसमायोजन के लिए उत्तरदायी होते हैं। दूसरा पहलू यह है कि मनोचिकित्सात्मक परामर्श के दौरान उपबोध्य में जो परिवर्तन लक्षित होते हैं उनसे वह अवगत रहता है। चिकित्सात्मक शब्द औषधि एवं इलाज के क्षेत्र का है।

किन्तु जब परामर्श के सन्दर्भ में इसका प्रयोग किया जाता है तो इसका चिकित्सा-सम्बन्धी मुख्यार्थ लुप्त हो जाता है और यह केवल उन क्रिया-कलापों का प्रतीक माना जाता है जो उपबोध्य की कठिनाइयों के समाधान में सहायता करते हैं।

रूथ स्टैंग ने मनोचिकित्सा एवं परामर्श का सम्बन्ध स्पष्ट करते हुए लिखा है- परामर्श एवं मनोचिकित्सा में काफी साम्य है। दोनों में भेद करने का यत्न करना कठिन और सम्भवतः अनुपयोगी होगा। एक सातत्य पर कौंसिली या उपबोध्य की व्यक्तित्व-रचना में परिवर्तन की विस्तृति, विश्लेषण की गहराई तथा भावात्मक अन्तर्वस्तु की मात्रा को व्यवस्थित करने पर एक प्रक्रम दूसरे में अन्तर्लिप्त हो जाता है।

रूथ स्टैंग के इस कथन से यह स्पष्ट है कि परामर्श एवं मनोचिकित्सा, दोनों एक-दूसरे से मिले हुए हैं। आज यह स्वीकार किया जाने लगा है कि परामर्श में ऐसे तत्व हैं जो चिकित्सात्मक प्रकृति के हैं। परामर्श के अन्य अनेक प्रकारों में महत्व एवं क्रम की दृष्टि से आजकल सामाजिक अपसमायोजनों की समस्याओं को पर्याप्त महत्व दिया जाता है। सामाजिक अपसमायोजनों को दूर करने की दृष्टि से मनोचिकित्सक परामर्श की उपयोगिता असंदिग्ध है।

नैदानिक, मनोवैज्ञानिक तथा मनोचिकित्सात्मक परामर्श की तुलना-हमने नैदानिक, मनोवैज्ञानिक एवं मनोचिकित्सात्मक परामर्शों पर अलग-अलग विचार किया। हमने देखा कि परामर्श एवं मनोचिकिसा मे अत्यन्त निकट का सम्बन्ध है। जहाँ तक नैदानिक एवं मनोवैज्ञानिक परामर्श का सम्बन्ध है, कुछ बातों को विशेष रूप से स्पष्ट करना आवश्यक है। नैदानिक परामर्श की सबसे पहली विशेषता यह है कि इसमें व्यक्ति को एक संगठित सम्पूर्णता के रूप में ग्रहण किया जाता है। इसे और स्पष्ट करने के लिए कह सकते हैं कि नैदानिक परामर्श व्यक्ति की निजी समस्या को ही अपना केन्द्र नहीं बनाता अपितु वह सम्पूर्ण व्यक्तित्व को परिप्रेक्ष्य में रखकर चलता है।
परामर्श की तुलना

नैदानिक	मनोवैज्ञानिक	मनोचिकित्सात्मक
1. पारस्परिक सम्बन्ध	1. पारस्परिक सम्बन्ध	1. पारस्परिक सम्बन्ध
2. व्यक्ति की सम्पूर्णता	2. उपबोध्य की आवश्यकता	2. प्रकृति तथा गहराई को समझना
3. प्रेरक तथा व्यवहार को समझना	3. उपस्थित समस्या पर विचार	3. सापेक्षता
	4.विकास-अवरोध को दूर करना	4. अपसमायोजन दूर करना

परामर्श का नैदानिक दृष्टिकोण व्यक्ति को संगठित सम्पूर्णता मानकर चलता है। वह व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यवहार के अंतर्वर्ती प्रेरकों एवं व्यवहार को समझने का प्रयत्न करता है। ब्लूम तथा बैलिन्स्की ने लिखा है- "नैदानिक उपागम तात्विक उपागम के विश्लेषण का प्रतिपक्ष है। यह किसी व्यक्ति के व्यवहार के छोटे-छोटे टुकड़ों के विशुद्ध सांख्यिकीय अध्ययन में रूचि नहीं लेता है।" अभिप्राय यह है कि नैदानिक परामर्श व्यक्ति को उसके व्यवहार की समग्रता एवं संगठन में ग्रहण करने का पक्षपाती है।

जहाँ तक मनोवैज्ञानिक परामर्श का सम्बन्ध है, यह स्पष्ट किया जा चुका है कि यह उपागम व्यक्ति की उपस्थित समस्या से ही सम्बन्धित नहीं रहता अपितु यह परामर्श-प्रार्थी के व्यक्तित्व के विकास की ओर भी ध्यान देता है। जे० एम० फास्टर के अनुसार मनोवैज्ञानिक परामर्श का उद्देश्य "उपबोध्य के भावी विकास-प्रक्रमों में अवरोध उत्पन्न करने वाली बाधाओं को समझना तथा व्यक्तित्व के विकास को गतिशील करने के लिए उन्हें दूर

करना है।" इस प्रकार मनावैज्ञानिक परामर्श, परामर्श का वह प्रारूप है जिसका उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में आने वाली बाधाओं को दूर करने में सहायता करना होता है।

मनोवैज्ञानिक एवं मनोचिकित्सक परामर्शों के अन्तर का जहाँ तक सम्बन्ध है, यह कहा गया है कि यह अन्तर परामर्शदाता एवं उपबोध्य के सम्बन्धों की प्रकृति एवं गहराई की सापेक्षता में है। दूसरा अन्तर यह है कि मनोवैज्ञानिक परामर्श सामान्य व्यक्ति के अपसमायोजनों को दूर करने में सहायता करता है। बाद में प्रौढ़ता के विकास एवं बेहतर समझ विकसित करने में सहायता करता है।

एफ० सी० थार्न के अनुसार' "मनोवैज्ञानिक परामर्श मनोचिकित्सा का एक प्रकार है।" उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जाता है कि नैदानिक, मनोवैज्ञानिक एवं मनोचिकित्सात्मक परामर्शों की भिन्नताएं उनके उपगमों, विधियों तथा प्रविधियों की भिन्नताओं में खोजी जा सकती हैं।

2.3.4 छात्र परामर्श

छात्र-परामर्श का सम्बन्ध छात्रों की समस्याओं से होता है। ये समस्याएँ शैक्षणिक संस्था को चुनने, पाठ्यक्रमों, अध्ययन की विधियों, समायोजन तथा व्यावसायिक चयन आदि से सम्बद्ध होती है। नैदानिक परामर्श की भाँति ही छात्र-परामर्श का सम्बन्ध छात्रों के सम्पूर्ण शैक्षिक परिवेश की समस्याओं से होता है। यह छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ग्रहण करता है। अन्तर केवल इतना है कि "छात्र-परामर्श में छात्रों का मूल चरित्र शैक्षिक होता है| शिक्षा का प्रयोग वैयक्तित्व सम्पर्क की स्थिति में सीधे व्यक्ति की आवश्यकताओं के लिए होता है।" इस प्रकार छात्र-परामर्श का सम्बन्ध शैक्षिक जीवन को प्रभावित करने वाली समस्याओं से होता है। इसमें शिक्षा को व्यक्तिगत सम्पर्क के माध्यम से व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रयुक्त किया जाता है।

2.3.5 नियोजन परामर्श

यह परामर्श उपबोध्य को उसकी योग्यताओं, अभिरूचियों एवं दृष्टिकोणों के अनुरूप व्यवसाय का चयन करने में सहायता देता है। दूसरे शब्दों में, उपबोध्य जिस प्रकार के कृत्य अथवा पद के अनुरूप योग्यता रखता है एवं जिससे उसे कार्य सन्तोष मिल सकता है| उस प्रकार के कृत्य में नियोजन प्राप्त करने में नियोजन-परामर्श सहायता करता है। नियोजन परामर्श के द्वारा व्यक्ति वृत्तिका विकास के लिये परामर्श प्राप्त करता है और तदनुसार कार्य करता है। यह परामर्श सही व्यवसाय या वृत्ति अपनाने पर बल देता है। इससे व्यक्ति की शक्ति तथा समय, दोनों की बचत होती है, और इसके अच्छे परिणाम आते हैं।

2.3.6 वैवाहिक परामर्श

परामर्श के इस प्रकार में व्यक्ति को उपयुक्त जीवन-साथी के चुनाव के लिए राय या सहायता प्रदान की जाती है। यदि उपबोध्य शादीशुदा है तो उसको वैवाहिक जीवन से सम्बद्ध समस्याओं के समाधान का परामर्श प्रदान किया जाता है। पाश्चात्य देशों में अत्यधिक शहरीकरण एवं औद्योगीकरण के कारण परिवारों में विघटन की गति तेज हो रही है। फलस्वरूप वहाँ पर आजकल वैवाहिक परामर्श की बड़ी माँग है। भारत में भी महानगरों की स्थिति बहुत पाश्चात्य देशों जैसी ही हो रही है और यहाँ पर भी लोग वैवाहिक परामर्श की आवश्यकता गम्भीरता से महसूस करने लगे हैं। आधुनिकीकरण और शहरीकरण की प्रक्रियाएं जितनी तेज होंगी, पारिवारिक विघटन भी उसी अनुपात में तीव्र होगा। औद्योगिक क्षेत्रों में पारिवारिक जीवन के लिए आवश्यक सुविधाओं एवं दशाओं की कमी रहती है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में अभी ऐसी स्थिति नहीं है।

2.3.7 व्यावसायिक एवं जीविका परामर्श

इंगलिश तथा इंगलिश के अनुसार इस प्रकार के परामर्श का सम्बन्ध उन प्रक्रियाओं से हो ता है जो व्यक्ति के द्वारा किसी व्यवसाय के वरण एवं उसकी तैयारी की समस्याओं पर केन्द्रित होती हैं। दूसरे शब्दों में, व्यावसायिक परामर्श व्यक्ति की उन समस्याओं को अपना केन्द्र बनाता है जो किसी व्यवसाय या जीविका के चुनाव और उसके लिए तैयारी करते समय उसके सम्मुख आती हैं।

2.3.8 परामर्श के प्रकारों के सम्बन्ध में रोजर्स तथा वैलेन के विचार

परामर्श के विभिन्न प्रकार केवल समस्याओं के उन क्षेत्रों का संकेत देते हैं जिनके लिए परामर्श की आवश्यकता पड़ती है। यह उपबोध्य द्वारा अनुभव की जाने वाली समस्याओं की प्रकृति पर आधारित होते हैं। रोजर्स तथा वैलेन के अनुसार परामर्शदाता को हर स्थिति में व्यक्ति उपबोध्य में रूचि लेनी चाहिए न कि केवल प्रारम्भिक समस्या में। यह मान लेने पर व्यक्तिगत समस्याओं में परामर्श प्रदान करने तथा शैक्षिक एवं व्यावसायिक कठिनाइयों में परामर्श देने में कोई मूल अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता। रोजर्स तथा वैलेन के इस विचार से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति की समस्याओं में परामर्श प्रदान करते समय उपबोध्य को एक व्यक्ति के रूप में समझना होता है तथा उपबोध्य का व्यक्तित्व ही परामर्श का केन्द्र होता है। वैसे भी व्यक्तित्व को विभिन्न अंगों में विभाजित करके देखना कठिन एवं अनुपयोगी है।

2.4 निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श

परामर्श के जितने प्रारूपों पर विचार किया गया वे प्रकारान्तर से परामर्श के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बद्ध हैं। वस्तुतः स्वरूपगत आधार पर परामर्श के दो ही प्रारूप किये जा सकते हैं- निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श। यह प्रारूप उपबोध्य एवं परामर्श के सम्बन्धों को निर्धारित करने के उपागमों तथा उनके महत्व के क्रम पर आधारित है। इन दोनों प्रारूपों पर अलग-अलग विस्तार से विचार करना वांछनीय होगा।

2.4.1 निदेशात्मक परामर्श

निदेशात्मक उपबोधन में परामर्शदाता का महत्व अधिक होता है। वह उपबोध्य की समस्याओं के समाधान के लिए उपाय बताता है एवं निर्देश देता है। इस प्रकार के परामर्श में परामर्शदाता समस्या पर अधिक ध्यान देता है। निदेशीय परामर्श में साक्षात्कार एवं प्रश्नावली पद्धति का प्रयोग किया जाता है।

विली तथा एण्ड्रयू के अनुसार निम्नलिखित अभिग्रह निदेशीय परामर्श के औचियत्य को स्थिर करते हैं-

1. अपने प्रशिक्षण, अनुभव तथा ज्ञान के आधार पर परामर्शदाता समस्या के समाधान के लिए अच्छी सलाह कर सकता है।
2. परामर्श एक बौद्धिक प्रक्रिया है।
3. अपने पूर्वाग्रहों तथा सूचनाओं के अभाव के कारण उपबोध्य समस्या का समाधान नहीं खोज पाता है।
4. समस्या के समाधान की अवस्था के माध्यम से ही परामर्श का प्रयोजन उपलब्ध होता है।

निदेशात्मक परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य की समस्या के समाधान में विशेष दिलचस्पी लेता है। वह विभिन्न प्रविधियों तथा उपकरणों के माध्यम से आँकड़े संग्रहित करता है तथा उनका विश्लेषण करके छात्र की समस्या के कारणों की खोज करता है। कारणों का निदान कर लेने पर वह समस्या के समाधान के लिए निदेशात्मक परामर्श करता है। इस प्रकार निदेशात्मक परामर्श को समस्या-केन्द्रित परामर्श भी कहा जा सकता है।

2.4.2 अनिदेशात्मक परामर्श

निदेशात्मक परामर्श के विपरीत अनिदेशात्मक परामर्श उपबोध्य-केन्द्रित होता है। इस प्रकार के परामर्श में उपबोध्य को बिना किसी प्रत्यक्ष निर्देश के आत्मोपलब्धि एवं आत्मसिद्धि तथा आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख किया जाता है।

अनिदेशीय परामर्श का प्रमुख एवं जोरदार व्याख्याता कार्ल रोजर्स को माना जाता है। उन्होंने परामर्श के इस प्रारूप का उपयोग शैक्षिक, व्यावसायिक तथा वैवाहिक आदि अनेक समस्याओं के समाधान के लिए किया है। रोजर्स ने अनिदेशीय परामर्श की तीन विशेषताएँ बताई हैं-

(1) **उपबोध्य-केन्द्रित सम्बन्ध -** रोजर्स ने अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य एवं परामर्शदाता के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए कहा है कि ऐसे परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य की वैयक्तिक स्वायत्तता को सम्मान प्रदान करता है। परामर्शदाता उपबोध्य के लिए किसी निर्णय विशेष को नहीं सुझाता अर्थात् अन्तिम निर्णय उपबोध्य को ही करना होता है। परामर्शदाता ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है जिसमें उपबोध्य अपनी समस्या का समाधान स्वयं खोज लेता है।

(2) **भावना तथा आवेग को महत्व -** अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य को अपनी भावनाओं को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है और इससे उसकी भावनाओं एवं अभिरूचियों का सही ज्ञान प्राप्त होता है और इस प्रकार समस्या का वास्तविक हल प्राप्त करने में सुविधा होती है। इसमें महत्व भावों की अभिव्यक्ति को दिया जाता है तथा बौद्धिक प्रक्रिया को गौण माना जाता है।

(3) **उचित वातावरण -** उपबोध्य-केन्द्रित होने के कारण अनिदेशीय परामर्श में उपबोध्य को भावों तथा अभिरूचियों को व्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है। यह तभी सम्भव है जबकि परामर्शदाता इस प्रकार का वातावरण उत्पन्न करने में सहयोग दे जिसमें प्रार्थी अपने विवेक का उपयोग निर्णय लेने के लिए कर सके तथा वह अपने को अच्छी तरह जान सके। इसमें परामर्शदाता तटस्थतापूर्वक उपबोध्य की बातों पर गौर करता है, वह कोई निर्णायक नहीं होता।

अनिदेशात्मक परामर्श के सम्बन्ध में स्नाइडर के विचार :

अनिदेशात्मक परामर्श के स्वरूप को स्पष्ट करने में विलियम स्नाइडर के निम्नलिखित विचार बड़े उपयोगी हैं जो उन्होंने एक लेख में व्यक्त किये हैं। उन्होंने अनिदेशीय परामर्श के चार प्रमुख अभिग्रह स्वीकार किये हैं-

1. जीवन लक्ष्य में स्वतन्त्रता - उपबोध्य अपने जीवन के प्रयोजन को निर्धारित करने में स्वतन्त्र है, चाहे परामर्शदाता की राय कुछ भी हो।
2. अधिकतम सन्तोष - अधिकतम सन्तोष की प्राप्ति के लिए उपबोध्य उद्देश्य का वरण स्वयं करेगा।
3. स्वतन्त्र निर्णय की क्षमता - परामर्श की प्रक्रिया के द्वारा वह थोड़े समय के बाद स्वतन्त्र रूप से निर्णय लेने की क्षमता विकसित कर लेगा।
4. समायोजन समस्या - भावात्मक संघर्ष वास्तविक समायोजन की प्रमुख बाधा हैं।

अनिदेशात्मक परामर्श के प्रमुख सिद्धान्त

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर अनिदेशात्मक परामर्श के आधारभूत सिद्धान्तों का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है -

(1) उपबोध्य की सत्यनिष्ठा का आदर- अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य की सत्यनिष्ठा एवं उसकी वैयक्तिक स्वायत्तता को पर्याप्त आदर प्रदान किया जाता है। परामर्शदाता बिना कोई निर्णय या निर्देशन दिये उपबोध्य की सहायता के लिए तत्पर रहता है। अन्तिम निर्णय उपबोध्य को ही लेना होता है। यह कहा जा सकता है कि अनिदेशीय परामर्श उपबोध्य की समायोजन एवं अनुकूलन क्षमता को स्वीकार करता है। उपबोध्य का इस क्षमता में विश्वास अनिदेशात्मक परामर्श का आधारभूत सिद्धान्त स्वीकार किया गया है।

(2) उपबोध्य के समग्र व्यक्तित्व का ज्ञान - अनिदेशीय परामर्श का दूसरा प्रमुख सिद्धान्त यह है कि उपबोध्य के समग्र व्यक्तित्व को अपनी दृष्टि में रखता है इसीलिए इस प्रकार के परामर्श का लक्ष्य किसी उपस्थिति अथवा विशेष समस्या का समाधान प्रस्तुत करना न होकर व्यक्ति की समायोजन एवं अनुकूलन क्षमता का विकास है।

(3) उपबोध्य के विचारों की भिन्नता के प्रति सहिष्णुता एवं स्वीकृति का सिद्धान्त- अनिदेशात्मक परामर्श के दौरान या बिल्कुल स्वाभाविक है कि उपबोध्य परामर्शदाता के विचारों से भिन्न विचार रखता हो। इसलिए वैचारिक भिन्नता के प्रति सहिष्णु होना अनिदेशात्मक परामर्श का प्रमुख एवं महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। परामर्शदाता को तटस्थ रहकर उपबोध्य में यह विश्वास उत्पन्न करना चाहिए कि वह उसकी बात को ध्यानपूर्वक सुन रहा है और मान रहा है।

(4) उपबोध्य को स्वयं को तथा अपनी शक्ति को समझने में समर्थ बनाना - अनिदेशात्मक परामर्श का लक्ष्य उपबोध्य को अपनी शक्तियों को समझने एवं अपनी सम्भावनाओं को यथास्थिति जानने में सहयोग देना होता है। परामर्श की अवस्थाओं का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे परामर्शदाता की निर्णय लेने की एवं अनुकूलन की शक्ति का विकास हो।

निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श में अन्तर

निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श में अन्तर विभिन्न परामर्शदाताओं द्वारा स्वीकृत सिद्धान्तों एवं प्रयुक्त प्रविधियों पर आधारित है। वस्तुतः दोनों में कोई लक्ष्यगत भिन्नता नहीं है। कहा जाता है कि निदेशात्मक एवं अनिदेशात्मक परामर्श एक ही लक्ष्य को प्राप्त करने के अलग-अलग साधन हैं। फिर भी साधनगत अन्तरों को समझ लेना वांछनीय है। दोनों में प्रमुख अन्तर निम्नलिखित हैं-

(1) समस्या हल करने की क्षमता- अनिदेशीय परामर्श में यह स्वीकार किया जाता है कि व्यक्तियों में अपनी समस्याओं के हल के लिए शक्ति एवं क्षमता मौजूद होती है, उसे केवल इस शक्ति एवं क्षमता के अहसास अथवा पहचान करने की आवश्यकता होती है। निदेशीय परामर्श इसे स्वीकार नहीं करता। निदेशात्मक परामर्श का यह अभिग्रह है कि व्यक्ति की क्षमता की सीमाएँ होती हैं। उसके लिए अपनी समस्याओं का पूर्वाग्रहमुक्त अध्ययन सम्भव नहीं हो पाता।

(2) भावात्मक दृष्टिकोण- दूसरा अन्तर यह है कि अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य के भावात्मक दृष्टिकोण को अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा जाता है और भावात्मक तनावों की अभिव्यक्ति का प्रयत्न किया जाता है, जबकि निदेशीय परामर्श में समस्या के बौद्धिक पहलू को अधिक महत्व दिया जाता है। समस्या के समाधान का प्रयत्न निदेशीय परामर्श के द्वारा किया जाता है।

(3) व्यक्ति केन्द्रित होना - अनिदेशीय परामर्श व्यक्ति-केन्द्रित है तथा निदेशीय परामर्श समस्या केन्द्रित।

(4) संश्लेषण को महत्व - अनिदेशात्मक परामर्श में संश्लेषण को अधिक महत्व दिया जाता है तथा निदेशात्मक परामर्श में विश्लेषण को।

(5) अधिक समय लगना - समय की दृष्टि से अनिदेशीय परामर्श अपेक्षाकृत अधिक समय लेता है।

(6) जीवन इतिहास का अध्ययन - अनिदेशीय परामर्श उपबोध्य के जीवन-इतिहास का अध्ययन नहीं करता है जबकि निदेशात्मक परामर्श के अन्तर्गत व्यक्ति के गत जीवन का अध्ययन अनिवार्य समझा जाता है।

2.4.3 संग्रही परामर्श

जो परामर्शदाता निदेशात्मक अथवा अनिदेशात्मक विचारधाराओं से सहमत नहीं हैं उन्होंने परामर्श के अन्य प्रारूप का विकास किया है जिसे संग्रही या समन्वित परामर्श कहा जाता है। संग्रही परामर्श में निदेशात्मक एवं अनिदेशात्मक दोनों प्रारूपों की अच्छी बातों को ग्रहण किया गया हैं। एक प्रकार से यह दोनों के बीच का परामर्श प्रारूप है जिसे मध्यमार्गीय कहा जा सकता है।

संग्रही परामर्श की प्रकृति के अनुरूप इसमें आवश्यक होने पर तथा उपबोध्य के हित में होने पर भावात्मक अभिव्यक्ति को नियन्त्रित भी किया जाता है। इसमें परामर्शदाता पूर्णतः तटस्थ नहीं रहता। यह प्रारून उपबोध्य को अनावश्यक रूप से अत्यधिक महत्व देना उचित नहीं समझता। अवस्था के अनुरूप उपबोध्य एवं परामर्शदाता के सम्बन्धों में कुछ अधिकारगत दूरी विद्यमान रहती है।

परामर्श का संग्रही प्रारूप अभी विकसित हो रहा है और इसका निश्चित स्वरूप निर्धारित हो पाया है। व्यवहार में परामर्शदाताओं द्वारा जिन प्रविधियों का उपयोग किया जा रहा है वे संग्रही ही हैं। ये प्रविधियाँ निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक दोनों प्रकार के परामर्शों से ग्रहण की जाती है। वस्तुतः संग्रही परामर्श अतिवादी विचारधाराओं से हटकर परामर्श का एक सन्तुलित प्रारूप विकसित करने का एक सराहनीय प्रयत्न है। अच्छी और आवश्यक बातों का ग्रहण एवं अनावश्यक तथा कम उपयोगी बातों का परित्याग करके इससे परामर्श के सर्वोत्तम स्वरूप को प्राप्त करने का यत्न किया जाता है।

2.5 सारांश

प्रयोजनों, क्षेत्रों एवं लक्ष्यों की भिन्नता के आधार पर परामर्श के विभिन्न प्रारूपों का विकास हुआ है। एच० बी० पेपिंस्की ने नैदानिक परामर्श को परामर्श का एक प्रारूप माना। नैदानिक परामर्श का सम्बन्ध व्यक्ति के सामान्य कार्य-व्यापार-सम्बन्धी अपसमायोजनों से है। इसमें उपबोध्य तथा परामर्शदाता का आमने-सामने का सम्बन्ध विद्यमान रहता है। आर० डब्ल्यू० ह्वाइट ने मनोवैज्ञानिक परामर्श को चिकित्सा का एक प्रारूप माना। इस प्रारूप में परामर्श को चिकित्सा का एक रूप माना जाता है। किन्तु इसमें उपबोध्य तथा चिकित्सक के वार्तालाप का महत्व अधिक होता है।

परामर्श का सम्बन्ध चिकित्सा से जुड़ जाने पर मनोवैज्ञानिकों ने मनोचिकित्सात्मक परामर्श का विकास किया। इन मनोवैज्ञानिकों में स्नाइडर का नाम प्रमुख है। स्नाइडर के अनुसार, "मनोचिकित्सा वह प्रत्यक्ष सम्बन्ध है जिसमें मनोवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति या व्यक्तियों के सामाजिक अपसमायोजन वाले भावात्मक दृष्टिकोणों के परिष्कार के लिए शाब्दिक माध्यम से सचेत रूप से प्रयत्न करता रहता है और जिसमें विषयी सापेक्षतः अपने व्यक्तित्व के पुनर्संगठन से अवगत रहता है, जिसमें से वह गुजर रहा है।" रूथ स्ट्रैंग ने परामर्श एवं मनोचिकित्सा में काफी समानता स्वीकार की है। परामर्श का नैदानिक दृष्टिकोण व्यक्ति की संघटित सम्पूर्णता मानता है। मनोवैज्ञानिक परामर्श का उद्देश्य "उपबोध्य के भावी विकास प्रक्रमों में अवरोध उत्पन्न करने वाली बाधाओं को समझना तथा व्यक्तित्व के विकास को गतिशील करने के लिए उन्हें दूर करना है।" (जे० एम० फा ॅस्टर) जहाँ तक मनोवैज्ञानिक एवं मनोचिकित्सात्मक परामर्शों के अन्तर का सम्बन्ध है, यह अन्तर परामर्शदाता एवं उपबोध्य के सम्बन्धों की प्रकृति एवं गहराई की सापेक्षता में है।

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. परामर्श को समझाते हुए इसके प्रकारों का विस्तृत रूप से वर्णन कीजिए।
2. परामर्श के विकासात्मक कार्य एवं सामूहिक परामर्श में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
3. नैदानिक, मनोवैज्ञानिक, मनोचिकित्सकीय परामर्श में अन्तर स्पष्ट करते हुए समझाइये।
4. टिप्पणी लिखिये:-

i. वैवाहिक परामर्श

ii. नियोजन परामर्श

iii. निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श

2. 7सन्दर्भ ग्रन्थ

- आलम, डा. शाह एवं गुफरान, डा. मोहम्मद, निर्देशन एवं परामर्श का मूलभूत आधार, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011
- जायसवाल, डा. सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, 2011
- सिंह, डी॰ के॰, भारती, ए॰ के॰, सोशल वर्क कान्सेप्ट ऐंड मैथड्स, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.
- सिंह, डी॰ के॰, पालीवाल, सौरभ, मिश्र, रोहित, मानव समाज, संगठन एवं विघटन के मूल तत्व, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2010.
- मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक सामूहिक कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1977.
- सिंह, सुरेन्द्र, मिश्र, पी॰ डी॰, समाज कार्य- इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ,
- रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2006.
- मिश्र, पी॰ डी॰, सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वर्ष 1985.
- सिंह, डी॰ के॰, भारत में समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा एवं विषय क्षेत्र, रायल बुक डिपो लखनऊ, वर्ष 2011.
- सिंह, सुरेन्द्र, वर्मा, आर॰ बी॰ एस॰, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2009.
- मिश्रा, पी॰ डी॰, मिश्रा, बीना, व्यक्ति और समाज, न्यू रायल बुक कम्पनी लखनऊ, वर्ष 2007.

इकाई- 3

परामर्श :मनोविश्लेषण उपागम

इकाईकीरूपरेखा

3.1 उद्देश्य
3.2 प्रस्तावना
3.3 मन के स्तर
3.4 व्यक्तित्व का निर्माण
3.5 विकासात्मक अवस्थाएं
3.6 अहंरक्षात्मक प्रक्रम
3.7 मनोविश्लेषण सिद्धान्त की अनुप्रयोगविधियां
3.8 मनोविश्लेषण के लक्ष्य
3.9 परामर्शदाता का कार्य
3.10 मनोविश्लेषण सिद्धान्त की विशेषताएं
3.11 मनोविश्लेषण सिद्धान्त की सीमाएं
3.12 सारांश
3.13 बोध प्रश्न
3.14 संदर्भग्रंथ

3.1 उद्देश्य

इसइकाईकोपढ़नेकेबादआप-

- मनोविश्लेषण का अर्थ समझ सकेगें।
- मनोलैंगिक अवस्थाओं को व उसके महत्व को समझ सकेंगे।
- व्यक्तित्व निमार्ण में उपांह,अहं,व पराहं की भूमिका को समझ पाएगें।
- रक्षात्मक युक्तियों को समझ पाएगे,जो मानव व्यवहार को एक परामर्शदाता की भांति समझन में आपकी सहायता करेगा।
- मस्तिष्क के भाग अचेतन ,अवचेतन ,चेतन के संप्रत्यय को समझ उनका महत्व जान पाएगे।
- एक परामर्शदाता के रूप में मनोविश्लेषण सिद्धान्त को आपको कैसे उपयोग करना है कि विधियों को जान पाएगें।
- मनोविश्लेषण सिद्धान्त को समझ इसके उपयोग,सीमाओं से भलीभांतीपरिचित हो जाएगें।

3. 2 प्रस्तावना

सिंगमण्ड फ्रायड (1856,1939) ने मनोविश्लेषणात्मक सिंद्धान्त का प्रतिपादन किया । ऐतिहासिक रूप से मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ये उन शरूआती अवधारणाओं मे से है जिन्हें जनता में पहचान

मिली। सिंगमण्ड फ्रायड ने अपने अनुभवों, विचारो के तथा वर्षों के नैदानिक चिकित्सा के अनुभवों के आधार पर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । अनेकों मनोवैज्ञानिक उनके इस सिंद्धान्त से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित है ।या तो वे फ्रायड के सिंद्धान्त का समर्थन करते है जैसे रोलोमे ,एल्बर्ट एलिस या फ्रायड के सिंद्धान्त के विपरित सिंद्धान्त का प्रतिपादन किया है जैसे रॉजर्स, स्कीनर आदि। तथा कुछ मनोवैज्ञानिकोंजैसे अन्ना फ्रायड,एरिक्सन ,कार्लेजुंग, सुल्लीवानने फायड के सिद्धान्त में अपने समप्रत्यय ,विचार जोड़ उसे विकसित कर अपने नये सिद्धान्त दिये।

3.3 मन के स्तर

फ्रायड के अनुसार मानव प्रकृति को उसके मन के तीन स्तरों के आधार पर समझा जा सकता है ।ये तीन स्तर है- चेतन,अर्द्धचेतन,अचेतन

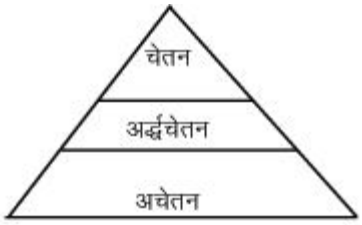

चेतन, अर्द्धचेतन, अचेतन का आरेखीय चित्रण

(i) **चेतन (Concious)**-से तात्पर्य मन के उस भाग से है जिसका सम्बन्ध वर्तमान से होता है अर्थात इसमें बाहरी वातावरण से सम्बन्धित तात्कालिक अनुभूतियां व संवेदनाएं होती है जो इस समय व्यक्ति के मन में चल रही होती है।

(ii) **अद्वचेतन**(Sub-Concious)-यह चेतन व अचेतन के मध्य का भाग है अर्थात न पूर्णत चेतन हे ना पूण्रत अचेतन। इसमें अनुभूति, इच्छाएं, विचार भाव होते है जो वर्तमान में तो चेतन में नही होते है पंरतु जरा से प्रयास से हमारे चेतन मन में आ जाते है । यह चेतन व अचेतन के मध्य पूल का कार्य करता है।

(iii) अचेतन (Unconcious)-फ्रॉयड के अनुसार हमारे व्यक्तित्व व व्यवहार पर अचेतन का प्रभाव अहचेतन की अनुभूतियां व विचारों की तुलना में अधिक होता है । इसका आकार सबसे बड़ा होता है। अचेतन का शाब्दिक अर्थ है चेतन से परे। अर्थात जो भाव, अनुभूतिया, इच्छाएं, आवश्यकताएं कर दी जाती है वे अचेतन मे संग्रहित हो जाती है। पर समाप्त नही होती है व अवसर मिलते ही चेतन में आकार हमारे व्यवहार व अनुभूतियों को प्रभावित करती है ।

3.4 व्यक्तित्व का निर्माण

फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व का निर्माण तीन भागों से होता है। उपाहं (id), अहं (ego) ,पराहं (super ego)

1. **उपाहं (id) :-**उपाहं की प्रवृतिया जन्मजात होती है यह अनैतिक, अतार्किक, आक्रामक, कामुक ,नियमों को ना मानने वाला होता है। उपाहं ''आनन्द सिंद्धान्त'' पर काम करता हैं छोटे बच्चों में उपांह की भरमार होती है। परिस्थितियों व नैतिकता को न ही समझता व हर शर्त पर अपनी आवश्यकता की पूर्ति चाहता है ।उपांह पूर्णत अचेतन होता है। इसका सम्बन्ध वास्तविकता से नहीं होता है।

अगर उपांह को नियंत्रित ना किया जाए व अपनी मर्जी से कार्य करने के लिए छोड़ दिया जाए तो उपांह व्यक्ति को खत्म कर सकता हैं या संकट में डाल सकता हैं क्योंकि उपांह अत्यधिक कामुक व अक्रामक

है। जिन लोगो में उपांह की प्रधानता होती है। बडे होने पर भी उपांह नियंत्रित नही होता है वे कार्य करने से पहले उसके परिणामों का ढंग से चिंतन नही कर पाते है।

उपाहं में दो प्रकार की शक्तियां होती है।

1. जीवनी शक्ति ''इरोस'' नृत्यु मूल प्रवृति ''थैनाटोस'' पहले फ्रायड ने इरोस को कामुकता से सम्बन्धित किया पर बाद में अपने सिंद्धान्त में सुधार करते हुए इरोज को जीवन संवर्द्धन उर्जा के रूप में परिभाषित किया।

2 मृत्यु मूल प्रवृति व्यक्ति के आवश्यक खतरा लेने अक्रामक व्यवहार करने की प्रवृति में प्रदर्शित होती है। इन दोनों शक्तियों को फ्रायड ने ''लिबिडो'' नाम दिया। उपांह के सोचने के तरीकों को ''प्राथमिक प्रक्रम कहा जता है यह प्रणोद, मूलप्रवृति, तस्वीरों के रूप में कार्य करता है।

2. अहं (ego) :- बच्चा जन्म के बाद पूर्णित उपांह के अधीन होता है व अपनी हर इच्छा की पूर्ति चाहता हैं पर सामाजिक व नैतिक मूल्यों के कारण उसकी हर इच्छा की पूर्ति नही होती जिससे तनाव व निराशा उत्पन्न होती है व धीरे-धीरे बालक का सम्बन्ध वास्तविकता से स्थापित होता है। इस प्रकार बालक में अहं का विकास होता है। अहं ''वास्तविकता सिद्धान्त'' पर कार्य करता हैं अहं को सोचने के तरीकों को ''द्धितिय प्रक्रम'' के नाम से जाना जाता है। यह हमारे सोचने का तार्किक तरीका है जो कि परिस्थितियों द्वारा विकसित होता है, एक स्वस्थ व्यक्तित्व के लिए अहं का मजबूत होना अत्यन्त आवश्यक है।

3. परांह (super ego) :-पराहं को व्यक्तितत्व की ''नैतिक शाखा'' माना गया है। यह क्या आदर्श है उसके अनुरूप कार्य करता है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है। सामाजीकरण के प्रकम्र में माता-पिता के साथ तादात्मीकरण स्थापित करता है। जिससे बालक अपने माता-पिता से सही व गलत सीखते है तथा माता-पिता व समाज के नियमों व शिक्षाओं के अनुसार कार्य करने पर बालक कोधनात्मक पुनर्बलन अर्थात प्यार प्रशंसा मिलती है । नियमों के उल्लघंन से सजा मिलती है। जिससे बालक मे ''अपराध-भाव''उत्पन्न होता है। इस प्रकार शनै-शनै बालक में परांह का विकास होता है।

परांह भी उपांह की तरह अवास्तविक होता है। यह वास्तविकता का ख्याल नहीं रखता है। पराहं, अहं को नैतिक आदेशो की पूर्णता के लिए बाध्य करता हैं। पराहं इस बात का ख्याल नहीं करता की इससे अहं केा वातावरण में उपस्थित किन-किन परेशानियों को सामना करना पड़ेगा।

3.6 विकासात्मक अवस्थाएं

इसे ''मनौलैंगिक विकास का सिंद्धान्त'' भी कहते हैं इसके अनुसार बच्चों में जन्म से ही लैंगिक उर्जा उपस्थित होती है जो विभिन्न मनोलैंगिक अवस्थाओं से होकर विकसित होती है । फ्रायड के अनुसार प्रत्येक अवस्था में एक स्वतंत्र ''कामुकता क्षेत्र'' होता हैं परामर्शदाता के लिए इन मनोलैंगिक अवस्थाओं का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इन मनोलैंगिक अवस्थाओं का उपचार से सीधा सम्बन्ध है। फ्रायड ने अपने सिद्धान्त में पांच विकासात्मक अवस्थाओं का वर्णन किया जो निम्न प्रकार है-

(i) **मुखावस्था**(Oral Stage)**:-**यह मनोलैंगिक विकस की पहली अवस्था है। 1वर्ष से कम आयु के बच्चे इन अवस्था में होते है। इस अवस्था में कामुकता क्षेत्र ''मुख'' होता हैं फलस्वरूप बच्चे मुख से की जाने वाली सभी क्रियाओं से जैसे चूसना, काटना, के द्वारा सुख प्राप्त करते हैं इस अवस्था में कम या अधिक मात्रा में मुखवर्ती उतेजन प्राप्त होने से व्यस्कावस्था में दो तरह के व्यकितत्व विकसित होते है। मुखवर्ती

नि'ि'क्रय व्यक्तित्व (Oral Passive persoality) तथा अनुवर्ती अक्रामक व्यक्तित्व (Oral Aggressive personality) ।मुखवर्ती निष्क्रिय व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में आशावादिता, विश्वास तथा दुसरों पर अत्यधिक निर्भरता का शील गुण पाया जाता है।

इसके विपरीत मुखवर्ती अकामक्र व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों में अत्यधिक प्रभुत्व, शोषण, पर पीड़न का शील गुण पाया जाता है। व्यवस्था में पुरूषों द्वारा अत्यधिक धुम्रपान इसी अवस्था में कम मुखवर्ती उतेजना की प्राप्ति को दर्शाता है।

(ii). गुदावस्था (Anal Stage)यह अवस्था 1 से 2 साल के मध्य वाले बच्चों में पायी जाती हैं इसको कामुकता का क्षेत्र अब मुख के स्थान पर 'गुदा' होती हैं फलस्वरूप बच्चे मल-मुत्र त्याग ने एवं उन्हें रोके रखने में आनन्द महसूस करते है। इस अवस्था में पहली बार बालक अंतद्वर्द्व का अनुभव करता है। यह अंतद्वर्द्व उसकी आन्तरिक मूल प्रवृति व वातावरण की मांगों के मध्य होता है। जैसे-मल मूत्र विसर्जन का प्रशिक्षण।

(iii)**. लिंग प्रधानावस्था (Phalic Stage) :**-यह मनोलैंगिक विकास की तीसरी अवस्था है जो उसे 5 वर्षो की अवस्था में पायी जाती हैं इस अवस्था में कामुकता क्षेत्र जनेन्द्रिया होती हैं इस अवस्था में प्रत्येक बच्चे में मातृ- मनोग्रन्थि (oedipus complex) विकसित होती है। यह लड़कों में ज्यादा स्पष्ट व जटिल होता हैं दोनों लड़का व लडकी मॉ के प्रति आकर्षित होते हैं क्योंकि माँ आनन्द का स्त्रोत होती हैं दोनो ही मॉ का प्यार व दुलार पाने के लिए पिता को प्रतिद्वद्वी की तरह देखते है।

मातृ मनो-ग्रन्थि में लड़का अचेतन रूप से अपनी माता से लैंगिक प्रेम की इच्छा रखता हैं पर पिता से डरता है क्योंकि वह जानता है कि पिता उससे ज्यादा शक्तिशाली हैं व वे उसके लिंग को कटावा देगे। लड़का सोचता है कि ये लिंग उसके व उसके पिता के मध्य अंतद्वर्द्व का कारण है लड़का पिता के प्रति शत्रुता महसुस करता है पिता के प्रति अक्रामक व्यवहार प्रदर्शित करना चाहता हैं पर वह माता के प्रति अपनी इच्छा को दबा देता है। व धीरे-धीरे पिता के साथ अपनी तादात्मीकरण स्थापित करता है।

मातृ-मनो ग्रन्थि को लड़कियों में पितृ-मनोग्रन्थि (electra complex) के नाम से जाना जाता हैं लड़कियां सोचती है कि उसके पास लिंग नही है जबकि लड़कों के पास है तो वह अपनी माता को इसके लिए दोषी महसुस करती हैं व पिता से उनके पास लिंग होने के कारण ईष्या महसुस करती है। इस प्रकार लड़कियों में माता व पिता दोनो के प्रति धनात्मक व ऋणातमक भाव होते है।

4. अव्यक्तावस्था (Latancy Stage) –यह अवस्था 6 से 12 वर्ष की आयु तक रहती है इस अवस्था में कोई कामुकता क्षेत्र नही होता है इस अवस्था में उर्जा का केरन्द दोस्तों के साथ खेलना तथा संज्ञानात्मक व शारिरिक कोशलों में प्रवीण होने मे होता है।

5. जननेन्द्रियावस्था (Genital Stage)-मनोलैंगिक विकास की पांचवी व अन्तिम अवस्था 12 वर्ष के पश्चात से निरन्तर चलती रहती है मगर प्रारम्भिक तीन अवस्थाओं जिन्हें एक साथ पूर्व-जननेन्द्रियवस्था (pre-genital stage) कहते है में सब अगर ठीक चलता है तो इस अवस्था में विषम लिंग कामुकता विकसित होने लगती हैं प्रत्येक लिंग अपने से विपरीत लिंग के प्रति अधिक आकर्षण महसुस करता है परन्तु यदि शुरूआती तीन अवस्थाओं अर्थात पूर्व-जननेन्द्रियवस्था में कुछ कठिनाई रहीतो तो व्यक्ति एक व्यस्क की भांति अपनी जीम्मेदारियों को निभाने में कठिनाई महसुस करता है जो इस जननेन्द्रियावस्था से

प्रारंभ होती है। वह या तो अवस्था में फंस जाता है या फिक्स हो जाता है। या वह अत्यधिक रक्षात्मक युक्तियों का सहारा लेता है।

5 **रक्षात्मक प्रक्रम-** का संप्रत्य मूलभूत रूप से सिगमण्ड फ्रायड ने दिया परन्तु उनकी पुत्री अन्ना फ्रायड व नव-फ्रायडि मन द्वारा फ्रायड के इस मूलभूत विचार को विस्तृत किया गया। रक्षात्मक प्रक्रम चाहे वातावरण के साथ समायोजन स्थापित कर या घटना के स्वरूप के प्रत्यक्षीकरण को विवृत कर या घटना के मानने से इंकार कर। रक्षात्मक प्रक्रम अचेतन स्तर पर होता है यह समस्या का समाधान नही करता है पर समस्या के स्वरूप को विकृत कर हमें चिंता से तुंरत राहत देता है रक्षात्मक प्रक्रम का ज्यादा उपयोग स्वस्थ व्यक्तित्व के विकास ने बाधा उपस्थित करता है।

प्रमुख रक्षात्मक प्रक्रम निम्नहै:-

(i) दमन (Repression):-यह सबसे प्रांरम्भिक व मूलभूत रक्षायुक्ति है इसमें व्यक्ति में तनाव, चिन्ता, भय मानसिक संघर्ष उत्पन्न करने वाली असामाजिक व कामुक इच्छाओं को चेतन से हटा अचेतन में भेज दिया जाता है। यह प्रक्रम अचेतन होता है। अत: स्वयं व्यक्ति को भी इसका ज्ञान नहीं हाता है। व्यक्ति पहले कुछ भूलता हैं बाद में ये भी भूल जाता है कि वह क्या भुला हैं पर अचेतन में दबी दमित सामग्री पूर्णतया नष्ट नहीं होती हैं वह ''जिंदा कब्र'' के समान होती हैं अवसर मिलते ही दमित सामग्री ''जबान फिसलना'' या ''पेन फिसलना'' के रूप में बाह रअभिव्यक्त होती है।

(ii) युक्तिकरण (Rationalization):-युक्तिकरण अर्थात सामान्य अर्थ में ''बहाने बनाना''। किसी कार्य को करने का वह कारण बताना जो वास्तविकता से अलग है । इस प्रक्रम में व्यक्ति अपनी असफलताओं के लिए, सामाजिक रूप से अस्वीकारणीय व्यवहार के लिए, सामाजिक स्वीकार्य कारण देना। जैसे:-एक छात्र परीक्षा में कम अंक आने पर कहता है कि हॉस्टल का वातावरण पढ़ने मे सहयोगी नहीं था। एक परेशान पिता अपने बेटे की पिटाई कर कहता है कि उसने बेटे की भलाई के लिए उसे मारा।

युक्तिकरण झुठ बोलना नहीं हैं, बल्कि व्यक्ति वास्तव में उस कारण पर विश्वास करता है जो वह बताता है अर्थात यह प्रक्रम अपनी कमजोरियों को छुपाने मे एक कम्बल का कार्य करता है।

(iii) प्रतिक्रिया निर्माण (Reaction formation) :-इस प्रक्रम में व्यक्ति अपने किसी कष्ट कर या अप्रिय इच्छा या प्रेरणा से ठीक विपरीत इच्छा या प्रेरण अभिव्यक्त करता है इसे प्रतिक्रिया निर्माण कहते हैं जैसे:-एक महिला जो बच्चा नहीं चाहती है ,गर्भपात की इच्छा रखती है, खुद को दोषी महसुस करती है तथा बच्चा होने के पश्चात अपने आपको एक अच्छी माँ साबित करने के लिए बच्चे की जरूरत से ज्यादा देखभाल करती हैं। एक व्यक्ति जो किसी को पंसद नहीं करता कहता है वह मुझे पंसद नहीं करता। एक नर्स डॉक्टर से उस मरीज की विशेष देखभाल करने को कहते है जिसे वह पंसद नहीं करती है।

इस प्रक्रम में प्रतिक्रिया मे दो चरण सम्मिलित होते है:-

(a). पहले चरण में व्यक्ति अप्रिय व कष्टकारो विचारों,भावों को अचेतन में दमन कर देता है।

(b दुसरे चरण में व्यक्ति दमित इच्छाओं व विचारों के ठीक विपरीत इच्छा चेतन स्तर पर व्यक्त करता है।

(iv). प्रतिगमन (Regression) :-प्रतिगमन अर्थात ''पीछे की और लौटना'' व्यवहार प्रतिगमन का तात्पर्य कम परिपक्व ढंग से व्यवहार करना है अगर एक व्यक्ति बालक की तरह व्यवहार करता है तो वह प्रतिगमन का प्रदर्शन करता हैं जब व्यक्ति जिंदगी में परेशानी व तनावपूर्ण अनुभवों से गुजरते है तो कम

परिपक्व व्यवहार कर चिन्ता को कम करने का प्रयास करता है। किसी के कंधे पर सर रखकर रोना भी प्रतिगमन का ही उदारहण है।

(v) प्रक्षेपण (Projection) :-प्रक्षेपण अपनी कमियों,कमजोरियों को दुसरे व्यक्ति पर आरोपित करना हैं व स्वयं में उन कमियों के होने से इन्कार करना है अर्थात दुसरे लोगो या वातावरण के प्रति अपनी अमान्य प्रस्तुतियों, मनोवृतियों एवं व्यवहारों की अचेतन रूप से आरोपित करने की प्रक्रिया को प्रक्षेपण कहा जाता है। जैसे एक छात्र फेल हो जाने पर उसके लिए पेपर बनाने वाले को या कॉपी जांचने वाले को या कक्षा में अध्यापक के ना पढ़ाने को अपनी असफलता का कारण बता अपनी चिंता को दूर करता है।

(v) विस्थापन (Displacement)-इस रक्षात्मक प्रक्रम में व्यक्ति अपनी भावनाओं को किसी वस्तु विशेष से हटाकर दूसरे व्यक्ति या वस्तु से संबंधितकर लेता है सामान्यत: ये भावनाएं अक्रामता से संबंधितहोती है जैसे एक व्यक्ति जो अपने ऑफिस में अपने बॉस से नाराज होने पर अपना गुस्सा बॉस पर नोकरी छूट जाने के भय से नहीं उतार पाता है तो वहां खुद को नियंत्रित कर लेता है पर घर पहुंचने पर अपना गुस्सा अपनी पत्नि, बच्चों या नौकर पर उतार देता है।

(vi) उद्वातीकरण (Sublimation)-इस रक्षात्मक प्रक्रम में सामाजिक रूप से अस्वीकार्य इच्छाओं को सामाजिक रूप से स्वीकार्य कार्यों में परीवीत कर प्रकट किया जाता है ये इच्छाएं कामुकता, आक्रमता, लालच से संबंधितहोती है।

समाज में जितने की कलात्मक व सांस्कृतिक उपलब्धियां देखने को मिलती है वह उद्वातीकरण का परिणाम है। उदाहरणार्थ एक लड़का किसी लड़की से अत्यधिक प्रेम करता है पर वह उस प्रेम को प्राप्त नहीं कर सकता तो वह उस प्रेम में उस लड़की के लिए कविताएं लिखकर अपनी भावनाओं की कलात्मक व सामाजिक रूप से स्वीकार्य अभिव्यक्ति करता है उद्वातीकरण-एक सकारात्मक रक्षात्मक प्रक्रम है।

(vii) नकारना (Denial)-अगर कोई तथ्य या घटना हमारे लिए अत्यन्त अरूचिकर व कष्टप्रद होता है तो हम उसके अस्तित्व को ही मानने से इन्कार कर देते है इस प्रकार हम अपने को थोड़े समय के लिए तकलीफ से बचा लेते है मृत्यु, बीमारी की घटनाओं में अक्सर इस रक्षात्मक प्रक्रम का उपयोग होता है।

(viii) क्षतिपूर्ति (Compensation)-जब व्यक्ति किसी एक क्षेत्र में असफल होता है तो दूसरे क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर पहले क्षेत्र में अपने हार की क्षतिपूर्ति करता है इसे ही क्षतिपूर्ति रक्षात्मक युक्ति कहते है जैसे-अगर एक बच्चा पढ़ाई में अच्छा नहीं पर खेलों में अच्छा प्रदर्शन कर उसकी क्षतिपूर्ति करता है तो इसे एक सकारात्मक प्रतिरक्षायुक्ति कहते है।

(viii) दिवास्वप्न (Fantasy or Day dreaming)-जब व्यक्ति वास्तविक जीवन में अत्यधिक परेषानियों का सामना करता है अपनी इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पाता है तो वह अपनी काल्पनिक दुनिया बना जिसमें जब संभव है थोड़ा आराम पाता है उदाहरणार्थ-कोई व्यक्ति पैसे की तंगी से गुजर होता है तो वह काल्पनिक रूप से सोच आराम पाता है कि जब उसके पास बहुत साराध न होगा तो वह उसे कैसे खर्च करेगा दिवास्वप्न की प्रवृति तरूणावस्था में अधिक देखने को मिलती है यह परेषानियों से थोड़ी देर पलायन का तरीका है।

(ix)रूपान्तीकरण (Conversion)-रूपान्तरण एक ऐसी प्रतिरक्षा युक्ति है जिसमें व्यक्ति अपना संवेगात्मक द्वंद्व, षारीरिक लक्षण के रूप में प्रकट करता है जबकि उन शारीरिक लक्षण के रूप में आधार नहीं होता है

जैसे एक औरत जो किसी पार्टी में जाने से बचना चाहिती है तो पार्टी का वक्त पास आते ही तेज सरदर्द की षिकायत करती है जेसे ही पार्टी का समय खत्म होता है सरदर्द भी अपने आप खत्म हो जाता है रूपान्तरण तीव्र संवेगात्मक द्वंद्व को दर्षाता है।

(i) शमन (Supression)-जब हमें कुछ विचार, यादें, भावनाएं अच्छी नहीं लगती तब हम स्वयं ही उन्हें अपनी इच्छा से दबा देते है इसेश मन कहते हे दबायी हुई सामग्री हमारे अन्दर चेतन में होती है जो जरा से ध्यान से ही वापस चेतन में आ जाती है जब हम जानबूझ की किसी विषय पर बात नहीं करना चाहते है जो हमें नापसंद है यह शमन का उदाहरण है।

दमन वशमन में अंतर यह है कि शमन हम स्वयं जानबूझकर करते है दमन स्वयं होता है हमें उसके होने का पता नहीं कर चलता

है।

3.7 मनोविश्लेषण सिद्धान्त की अनुप्रयोग प्रविधियां

(i) मुक्त साहचर्य (Free association):-अचेतन मन में दबी हुई पड़ी दमित सामग्री हमेशा बाहर आने के रास्ते ढूंढती रहती हैं हमार जीवन में अकामक्रता, कामुक मजाक व जबान फिसलना, पैन फीसलना आदि के माध्यम से ये दमित सामग्री बाहर निकलती रहती हैं मनोविश्लेषण में परामर्शदाता, परामर्श ग्राही को शांत कर उसे अपने बाल्यकालीन यादों, भावनात्मक अनुभवों को बेहिचक यादकर, बताने को कहता है। कि वह बीना यह सोचे की जो वह बता रहा है वह अर्थहीन है या बेतुका या दुख: भरा बिना कुछ सोचे बस जो उसमें चल रहा है बताने को प्रेरित किया जाता है। इस तरह अहम्को शांत कर उपाहं को बोलने के लिये कहा जात है। इस प्रकार अचेतन सामग्री चेतन मन में प्रवेश करती है। व परार्षदाता इसे समझ उसके साथ कार्य करता है। कई बार परामर्शग्राही सहयोग नही करते ,खुद को दमित करते हैं वहॉ परामर्शदाता उन्हें प्रेरित करता है कि वह कुछ ना छुपाए ,बोले, उनके द्वारा दी गई छोटी सी छोटी जानकारी भी बहुत महत्वपूर्ण हो सकती है।

(ii) स्वप्न विश्लेषण (dream analysis):-फ्रायड के अनुसार स्वप्न अचेतन को समझने का एक सशक्त माध्यम है मनोविश्लेषण ने परामर्शग्राही को रोजाना अपने स्वप्न परामर्शदाता को बताने को कहा जाता है। परामर्शदाता उनका विश्लेषण करते हैं विश्लेषण दो आधार पर किया जाता हैं परामर्श ग्राही ने क्या बताया है व बताए गए तथ्यों में छुपा हुआ अर्थ क्या है । परामर्श ग्राही द्वारा स्वप्न की सामग्रियों के चेतन वर्णन को ''व्यक्तविषय'' कहा जाता है। तथा इस प्रकार स्वप्न के द्वारा प्रतिकात्मक रूप से चेतन अभिव्यक्ति को ''अव्यक्तविषय'' कहा जाता है। इस प्रकार स्वप्न का विश्लेषण कर अचेतन को समझने की कोशिश की जाती है। फ्रायड के अनुसार स्वप्न बाल्यकालीन चाहतों, इच्छाओं को पूरा करने का माध्यम है। इसलिए मनोविश्लेषण में परामर्शग्राही को स्वप्न देखने व उन्हें याद रख बताने को प्रेरित किया जाता है।

(iii) अंतरण का विश्लेषण(Analysis of Tranference) :-अंतरण परामर्शग्राही का परामर्शदाता के प्रतिधनात्मक प्रतिक्रिया है इसमें परामर्शग्राही, परामर्शदाता को अपने भूतकालीन जीवन के महत्वपूर्ण व्यक्ति सामान्यत: अभिभावक के रूप में देखता हैं व अपनी भावनाओं को व्यक्त करता हैं इन भावनाओं के व्यक्त होने का चिकित्सकीय प्रभाव होता है यह एक प्रकार से संवेगात्मक विसर्जन का कार्य करता है साथ ही व्यक्त भावनाओं का विश्लेषण कर परामर्शग्रही के स्व:ज्ञान में वृद्धि होती है वह समझ पाता है कि भूत में क्या हुआ था तथा वहाँ से वह अगली विकासात्मक अवस्था में आगे बढ़ जाता है।

(iv) अवरोध का विश्लेषण (Analysis of resistance) :-कई बार परामर्शग्राही शुरू में सुधार प्रदर्शित करता हैं पर बाद में गति अत्यधिक धीमी या कम हो जाती है। इस उपचारात्मक प्रक्रम में परामर्शग्रही के अवरोध को कई प्रकार से समझा जा सकता है जैसे:-नहीं आना, देर से आना ,फीस नहीं देना, बाल्यकालीन अनुभवो को या स्वप्नो को ना बताना,विचारों को रोकना आदि जैसे ही अवरोध दिखे,परामर्शदाता को इसके प्रति तुंरत कार्य कर इसे दूर करना चाहिए।

(v) स्पष्टीकरण (Interpretation) :-मनोविश्लेषण प्रक्रम में स्पष्टीकरण का अर्थ है परामर्शग्राही की सोच, विचार, भाव अनुभवों, तथ्यों, को समझना व उसका विश्लेषण करना। हर चरण में परामर्शदाता, परामर्शग्राही के स्वप्नों, अनुभवों, अवरोधों को समझने व का कार्य करता है। इसके द्वारा परामर्शदाता, परामर्शग्राही को अपने भूत व वर्तमान के निजी जीवन के अनुभवो को स्वयं समझने में मदद करता हैं परन्तु स्पष्टीकरण का इस्तेमाल परामर्शदाता को बहुत ध्यान से करना चाहिए अगर परामर्शदाता इस उपचारात्मक प्रक्रम के पं ारभ में ही स्पष्टीकरण का उपयोग करेंगा तो परामर्शग्राही दूर हो जाएगा व नही करेंगा तो परामर्शग्राही में अंतर्ज्ञान उत्पन्न नहीं कर पाएगा। इसलिए स्पष्टीकरण का इस्तेमाल तब करें जब वह परामर्शग्राही के वृद्धि व विकास पर अनुचित प्रभाव न डालें।

3.8 मनोविश्लेषण का लक्ष्य

मनोविश्लेषण का लक्ष्य परामर्शग्राही के अनुसार बदलता रहता है पर विशेष रूप से मनोविश्लेषण के निम्न लक्ष्य है:-

1. व्यक्तिगत अभियोजन व समायोजन:-मनोविश्लेषण का प्राथमिक लक्ष्य परामर्शदाता केा अपने व्यक्तित्व के अचेतन भाग के प्रति जागरूक करना होता है। अचेतन में दमित इच्छाएं, विचार, अनुभव, होते है जो बहुत दर्द भरे या डरावने हाते है। दमित होने पर भी उनका प्रभाव खत्म नहीं होता,वे व्यक्तित्व को प्रभावित करते है दमित होने से उनका समझना अत्यन्त मुश्किल हो जाता है। मनोविश्लेषण परामर्शग्राही में अप ने प्रति अंतर्ज्ञान पैदा कर व्यक्तिगत समायोजन में मदद करता है।
2. विकासात्मक अवस्था को पूर्ण करना:- दूसरा मनोविश्लेषण का महत्वपूर्ण लक्ष्य विकासात्मक अवस्था पर कार्य करना हे जो बाल्यावस्था में अच्छे से पूर्ण नहीं हो पाई थी। इसके लिए व्यक्तित्व के पुर्नगठन की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रम लम्बा व खर्चीला है पर इससे व्यक्ति अवरोधित विकासात्मक अवस्था को पार कर अगली अवस्था मे प्रवेश करता है।
3. मनोविश्लेषण का उद्देश्य व्यक्तिगत समायोजन के साथ वातावरणीय समायोजन को भी सशक्त करना है विशेषकर कार्य व नजदीकी रिश्तों को । इसमें अहंम्पर कार्य कर इसे मजबूत बनाया जाता है ताकि व्यक्ति का प्रत्यक्षण व कार्य वास्तविक होता कि वातावरणीय समायोजन में मदद मिले।

3.9 परामर्शदाता का कार्य

परामर्शदाता सौहार्दपूर्ण वातावरण का निर्माण कर परामर्शग्राही को अपने को अभिव्यक्त करने को प्रेरित करता हैं विशेषकर बाल्याकालीन अनुभवो को जब परामर्शग्राही अपने अनुभव बताता है तब परामर्शदाता चुपचाप सुनता है तथा परामर्शदाता इन बाल्यकालीन अनुभवों, भूतकालीन अनुभूतियों को विश्लेषण कर इसके माध्यम से परामर्शग्राही में अंतर्ज्ञान पैदा करने की कोशिश करता है। यहां पर परामर्शदाता सक्रिय व असक्रिय दोनों भूमिकाएं

निभाता है तथा परामर्शग्राही के लिए विश्लेषण का कार्य करता है। यहां परामर्शदाता मूल्यांकन प्रविधियों विशेषकर प्रक्षेपण प्रविधियां (Projective techniques) जैसे स्याही धब्बा परीक्षण (Ink – blot test) काभीइस्तेमालकरसकताहै।मूल्यांकनकेआधारपरवपरामर्शग्राहीकोसमस्याकेअनुसारवर्ग्गीकृतकरकेइलाजकेलिएयो जनातैयारकरताहै।

3.10 मनोविश्लेषणसिद्धान्तकीविशेषताए

1. अचेतन मन के मानव व्यवहार पर महत्वपूर्ण प्रभाव को बताती है।
2. सेक्सुअलीटी के मानव व्यवहार पर प्रभाव को
3. यह विधि अनेकों विश्लेषणात्मक यंत्रों को आधार प्रदान करती है जैसे:-रोशास्याही-धब्बा परीक्षण
4. ऐसे रोगियों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है जिन्हें अनेक प्रकार के डिसआर्डर है जैसे:- हीस्टीरीया, चिन्ता, फोबिया
5. विकासात्मक प्रक्रम की महत्ता पर बल देती है।
6. तीव्र समायोजन कठिनाईयों वाले मरीजों को ठीक करने का सशक्त माध्यम है।

3.11 मनोविश्लेषण सिद्धान्त की सीमाएं

1. मनोविश्लेषण प्रक्रम अत्यधिक खर्चिला व समय लेने वाला है इसमें परामर्शग्राही को सप्ताह में तीन से पॉच बार कई वर्षो तक परामर्शदाता के सम्पर्क में रहना पड़ता है।
2. इसका प्रयोग ज्यादा उम्र के व्यक्तियों के साथ नही किया जा सकता है।
3. महिलाओं को साथ इसका उपयोग सीमित है।
4. इस विधि का उपयोग नैदानिक मनोवैज्ञानिको द्वारा अधिक किया जाता है।
5. यह विधि समायोजन की अत्यधिक कठिनाईयों के साथ जुडी है। सामान्य परिस्थितियों में उपयोगी नही है।
6. इस प्रक्रम में ऐसे बहुत सारे सोपान है जिन्हे ना आसानी से समझा जा सकता हैं ना बताया जा सकता है जैसे:- SS, Etc.

3.12 सारांश

मनोविश्लेषण का सिद्धान्त सिंगमण्ड फ्राड ने अपने नैदानिक चिकित्सा के 4 0 साल के अनुभवों के आधार पर दिया ।उन्होंने अपने सिद्धान्त में अचेतन, लैगिंक उर्जा, मूल प्रवृतियों, बाल्य-कालिन परवरिष अनुभवों को व्यक्तित्व निमार्ण में अत्यधिक महत्वपूर्ण कारको के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने मन को 3 स्तरों में विभाजित किया चेतन, अद्धचेतन, अचेतन साथ ही व्यक्तित्व निर्माण को तीन भागों में- उपाहं,अहं व पराहं में बांटा। उनके अनुसार उपाहं बच्चा, है जो सिर्फ आनन्द सिद्धान्त पर कार्य करता है व अपनी इच्छाओं की पूर्ति चाहता है पर सामाजिकरण के परिणास्वरूप बालक में अहम्विकसित होता है व वह स्वयं की इच्छाओं पर नियंत्रण रखना सीख वातावरण के साथ समायोजन स्थापित करता है पराहं नैतिक भाग है जो हमेशा आदर्श पूर्ण कार्यों की ओर हमें प्रवृत करता है।

फ्रायड के अनुसार मनुष्य में अत्यधिक लैंगिक उर्जा होती हैं जिसे उन्होंने ''लिबिडो'' कहा ।व इसे दो भागों में विभाजित किया- जीवनी शक्ति-इरोस व मृत्यु मूल प्रवृति थैनाटोस।इरोस को सभी सृजनात्मक कार्यों में वथैनाटोस को अनावश्यक खतरा लेने की प्रवृति अक्रामता आदि व्यवहारों द्वारा समझा जा सकता है।

फ्रायड ने बताया कि लैंगिक उर्जा बच्चों में जन्म से ही उपस्थित होती है व विभिनन मनोलैंगिक अवस्थाओं से होकर विकसित होती है। प्रत्येक लैंगिक अवस्था में एक ''कामुकता क्षेत्र'' होता है जो उस अवस्था में आनन्द स्रोत होता है उन्होंने मनोलैंगिक विकास की पांच अवस्थाएं बतायी-मुखावस्था (मुखद्ध, गुदावस्था (गुदा), लिंग प्रधानावस्था (लिंग), अध्यक्तावस्था व जननेन्द्रिवस्था (जननअंग)

लिंग प्रधानावस्था में उन्होंने लड़कों में मातृ मनोग्रन्थि व लड़कियों में पितृमनोग्रंथि का होना बताया,जिससे दोनों मां के प्रति प्रेम व पिता के प्रति अक्रामक भाव रखते है व आगे चलकर लडका पिता से व लड़किया माता से तादात्मीकरण स्थापित करता है।

फ्रायड ने स्पष्ट किया कि व्यक्ति, अत्यधिक तनाव की अवस्थाओं में अचेतन रूप से अपने प्रत्यख को परिवर्तित कर तनाव से थोडे समय के लिए राहत प्राप्त करता है जो समायोजन में सहायक होता है इसे उन्होंने रक्षात्मक युक्तियां कहा उन्होंने अनेक रक्षात्मक युक्तियों की व्याख्या की जैसे-दमन, प्रतिक्रिया निर्माण, प्रतिगमन, प्रक्षेपण, क्षतीपूर्ति, विस्थापन इत्यादि।

मनोविश्लेषण का उद्देश्य अचेतन को समझ व्यक्तिगतव वातावरणीय समायोजन मे सहायता प्रदान करना है जिसमें परामर्शदाता स्वप्न विश्लेषण, युक्तसाहचर्य, अंतरणविश्लेषण, अवरोध विश्लेषण व स्पष्टीकरण विधियों की सहायता से प्राप्त सूचनाओं, अनुभवों, अनुभूतियों का विश्लेषण कर परामर्शग्राही को स्वयं के प्रति अंतर्ज्ञान विकसित करने का प्रयास करता है इस प्रकार मनोविश्लेषण तीव्र समायोजन संबंधी कठिनाइयों, अनेकों मनोविकारों का ठीक करने की एक प्रभावशाली विधि है परन्तु यह अत्यन्त लम्बी व खर्चीली विधि है।

3.13 बोधप्रश्न

1- रक्षात्मक युक्तियां क्या है मानव व्यवहार पर इनके उपयोग का क्या प्रभाव होता है?
2- फ्रायड के अनुसार विकासात्मक अवस्थाएं क्या व कितनी है? प्रत्येक अवस्था का वर्णन करते हुए उसका व्यक्तित्व निर्माण में प्रभाव को समझाइये?
3- मनोविश्लेषण सिद्धान्त की सीमा एंव विशेषताएं बताइये?
4- मनोविश्लेषण सिद्धान्त के उपयोग हेतु उपयुक्त प्रविधियों का वर्णन कीजिए।
5- मनोविश्लेषण सिद्धान्त का लक्ष्य क्या है? व उसे प्राप्त करने मे परामर्शदाता की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
6- मजबूत व्यक्तित्व के निर्माण में अहं की भूमिका समझाइये।
1मातृ मनोग्रंथि
2अचेतन,चेतन,अद्धचेतन
3पितृ मनोग्रंथि
4उपाहं,अहं व पराहं

7निम्न को समझाइये-

1स्वप्न विश्लेषण

2पूर्व जननेन्द्रियवस्था

3विस्थापन अहंयुक्ति

4मुक्त साह्चर्य

1 फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व के निर्माण में अचेतन की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

2 फ्रायड के सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए व इसमें ओर सुधार के लिए अपनी तरफ से सुझाव दीजिए।

3.14 संदर्भग्रंथ

1. Counseling A Comprehensive Profession _ Samuel T. Glading
2. Advanced Generalpsychology – Arun Kumar Singh
3. The interpretation of dream – freud
4. The ego and the much anisms of defence – freud
5. New introductory lectures on psychoanalysis – Siqmund frend
6. An introduction to theories of personality – B.R.Herqeshahn
7. The life and work of siqmund frend – Jones
8. Oiagnasis and treatment planning as is counseling – Seligman
9. Three psychologies: perspectives from freud, skinner – Rogess- R.D. Nye
10. Introduction to personality – Walter Mischel
11. Psychology for graduate Nurses – Jacob Anthkad

इकाई 4

परामर्श :संज्ञानात्मक हस्तक्षेप

(Cognitive Interventions)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 परामर्शन हस्तक्षेप यसंप्रत्य :
4.3 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप परामर्शन की एक विधा :
4.4 परामर्शन हेतु संज्ञानात्मक हस्तक्षेप तकनीक में निहित मुख्य संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की विशेषताएँ
4.5 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप दार्शनिक व मनोवैज्ञानिक आधार :
4.6 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम के मूलभूत अभिग्रह
4.7 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम के लक्ष्य
4.8 परामर्शन हेतु संज्ञानात्मक हस्तक्षेप की विविध तकनीक
4.9 संज्ञानात्मक उपागम में परिवर्तन अर्जित करने की प्रविधियाँ तथा परामर्शदाता की आवश्यक विशेषताएँ
4.10 सारांश
4.11 शब्दावली
4.12 अभ्यासार्थ प्रश्न
4.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- संज्ञानात्मक हस्तक्षेप का अर्थ बता सकेंगे एवं परिभाषित कर सकेंगे।
- संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के उद्देश्यों को बता सकेंगे।
- संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के कार्य क्षेत्र को बता सकेंगे।
- संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के सिद्धान्तों को बता सकेंगे।
- संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के आवश्यक्ताओं को बता सकेंगे।
- संज्ञानात्मक हस्तक्षेप से होने वाले लाभों को बता सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना (Introduction):

व्यक्ति को अपने व्यवस्थित जीवन जीने लिए दैनिक जीवन से सम्बंधित बहुत सारी समस्याओं पर विजय पानी होती हैं| कुछ समस्याएँ जो आसान प्रकृति की होती हैं उन्हें तो व्यक्ति खुद हल कर लेता है और कुछ समस्याएँ ऐसी जटिल होती हैं कि उन्हें हल करने के लिए उसे विशेषज्ञ की मदद लेनी होती है| परामर्श एक विशिष्टीकृत सेवा का पर्याय है जो समस्याग्रस्त व्यक्ति को समस्याओं से निजात पाने में मदद करता है, ताकि वह समायोजित व खुशहाल जीवन व्यतीत कर सके| परामर्श सेवा के तहत समस्याग्रस्त व्यक्ति को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र यथा विद्यालय, परिवार, समाज, तथा नौकरी जैसे जीवन के क्षेत्रों के अनुकूल समायोजित करने का प्रयास किया जाता है ताकि वे अपनी दिन-प्रतिदिन की समस्या ाओं को हल करने में सक्षम हो सके। परामर्श सेवा बहुत सारी हस्तक्षेप विधियों द्वारा प्रदान की जा सकती है यथा संज्ञानात्मक, भावातक,व्यवहारात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, गेस्ताल्त्वादी, फेनोमेनोलॉजिकल इत्यादि| प्रस्तुत इकाई में आप संज्ञान की परिभाषा व अर्थ, संज्ञानात्मक परामर्शन हस्तक्षेप का अर्थ, संज्ञानात्मक हस्तक्षेप को परामर्शन की एक विधा के रूप में, संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के उद्देश्य, इसका कार्य क्षेत्र, इसके मूलभूत अभिग्रह, संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम की तकनीक व प्रविधियां का विस्तार् पूर्वक अध्यअयन करेंगें।

4.2 परामर्शन हस्तक्षेप: संप्रत्यय (Cognitive Intervention: Connotation)

व्यक्ति की समस्याओं एवं आवश्यकताओं के अनेक रूप होते हैं, जैसेलक्ष्य का चयन-, लक्ष्य का नियंत्रण, लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सामर्थ्य का विकास और बाधाओं का निराकरण | परामर्शदाता व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सामर्थ्य का विकास और बाधाओं का निराकरण| परामर्शदाता व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उनके संज्ञान,अनुभूति,संवेग व्यवहार को प्रभावित करता है तथा इसके लिए अनेक तकनीकों को प्रयुक्त करता है | फेल्थम और हार्टन विधियां हैं जो किसी सिद्धांत द्वाराके अनुसार परामर्शन और मनोचिकित्सा ऐसी गति (2000) रूप्चारित,समर्थित और निर्देशित होती है' परामर्शन के सैद्धांतिक आधारों में विविधता पायी जाती है, जिसे हस्तक्षेप, अभिमुखता उपागम, सम्प्रदाय आदि अनेक रूपों में संबोधित किया जाता है | परामर्शन और मनोचिकित्सा के क्षेत्र में हस्तक्षेपन का सम्बन्ध व्यक्तित्व के सिद्धांत के साथ रहा है| परामर्शन हस्तक्षेपन के वर्णन में अधिकांशतः चार तत्वों का समावेश देखा जा सकता है|मूल अभिग्रह का दर्शन

- मानव व्यक्तित्व और विकास का औपचारिक सिद्धांत
- नैदानिक सिद्धांत
- परामर्शन और मनोचिकित्सकीय संक्रियाएं और तकनीक

इन तत्वों को दृष्टिगत करते हुए यदि परामर्शन हस्तक्षेप किया जाय तो निश्चित तौर पर परामर्श प्राप्तकर्ता को अपने दैनिक जीवन तथा व्यावसायिक जीवन से सम्बंधित समस्याओं के समाधान में मदद की जा सकती है |

4.3 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप: परामर्शन की एक विधा (Cognitive Intervention: As a method of counseling)

संज्ञानात्मक हस्तक्षेप को परामर्शन की एक प्रभावशाली विधा के रूप में जानी जाती है| संज्ञानात्मक हस्तक्षेप को परामर्शन की एक प्रभावशाली विधा के रूप में जानने से पूर्व संज्ञानात्मक मनोविज्ञान तथा संज्ञान का मनोवैज्ञानिक अर्थ जानना बहुत ही आवश्यक है|

संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक नई शाखा है| कुछ मनोवैज्ञानिकों ने मनोवैज्ञानिक संज्ञान को सूचना संसाधन की प्रक्रिया माना है, तो कुछ लोग उसे मानसिक प्रतीकों के प्रहस्तन के रूप में मानते हैं, कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि मनोवैज्ञानिक संज्ञान समस्या समाधान के रूप में, चिन्तन के रूप में तथा विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं के रूप में होता है। इस प्रकार मनोवैज्ञानिक संज्ञान के बारे में पाँच दृष्टिकोण या उपागम प्रचलित हैं। इसलिये संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं पर विचार करते समय हमें इन सभी उपागमों को ध्यान में रखना चाहिए।

संज्ञान का तात्पर्य ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया से है, जिसमें समस्त मानसिक प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं। संज्ञान या मानसिक क्रिया में अर्जन, संग्रहण, पुनर्प्राप्ति एवं ज्ञान के उपयोग की प्रक्रियाएँ शामिल हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि संज्ञान में अनेक मानसिक प्रक्रियायें सन्निहित होती हैं तथा इन्हीं मानसिक प्रक्रियाओं के आधार पर किसी भी व्यक्ति को जिसे परामर्शन की आवश्यकता है हम परामर्श देते हैं|

संज्ञानात्मक मनोविज्ञान को परिभाषित करते हुए राबर्ट ने कहा है कि, 'संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के सम्पूर्ण प्रसार-संवेदना से प्रत्यक्षीकरण, तंत्रिका विज्ञान, प्रतिरूप, प्रतिभिज्ञा, अवधान, चेतना, अधिगम, स्मृति, सम्प्रत्यय निर्माण, चिन्तन, कल्पना, भाषा, बुद्धि, संवेग एवं विकासात्मक प्रक्रियाओं को सम्मिलित करता है और व्यवहार के अदृश्य क्षेत्रों को सीमा से बाहर करता है|'

इस प्रकार स्पष्ट है कि संज्ञानात्मक मनोविज्ञान समस्त मानसिक प्रक्रियाओं का एक वैज्ञानिक अध्ययन है।

संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की अनेक विशेषताएँ होती हैं, जो आन्तरिक स्तर पर घटित होती हैं, उनका बाह्य प्रेक्षण नहीं किया जा सकता है।

जब संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के माध्यम से परामर्शन प्रक्रिया का कार्य पूर्ण करते हैं तो इन संप्रत्ययों तथा उपागमों को अवश्य हमें ध्यान में रखना चाहिए|

4.4 परामर्शन हेतु संज्ञानात्मक हस्तक्षेप तकनीक में निहित मुख्य संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की विशेषताएँ (Salient features of cognitive processes used in cognitive interventions for counseling):

- संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ परस्पर सम्बन्धित होती हैं च जटिल संज्ञानात्मक प्रक्रिया के विभिन्न तत्वों के बी - अन्तःक्रिया होती है। एक निश्चित संप्रत्यय सीखने में कई सोपान तथा प्रक्रियाएँ सन्निहित होती है।
- संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ सक्रिय होती हैं -संज्ञानात्मक उपागम की मान्यता है कि व्यक्ति वातावरण से भिन्न - नये ज्ञान एवं विकास के लिए-हता है। वह नयेभिन्न तरह की सूचनाओं को ग्रहण करने के लिए तत्पर र सतत् प्रयास करता है।

- संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं में सूक्ष्मता तथा शुद्धता पाई जाती है इससे न -िर्णय में शुद्धता बढ़ती है।
- संज्ञानात्मक मनोविज्ञान में धनात्मक सूचनाओं की व्याख्या नकारात्मक सूचनाओं की तुलना में अधिक अच्छे ढंग से की जाती है। धनात्मक सूचनाएँ अधिक उपयोगी हैं।
- संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ आन्तरिक स्तर पर घटित होती हैं संज्ञानात्मक प्रक्रिय -ाओं का प्रत्यक्षतः प्रेक्षण नहीं कर सकते हैं। जैसे यदि हम किसी को कोई पाठ याद करते हुए या समस्या का समाधान करते हुए या -ई निर्णय करते हुए देखते हैंको, तो मात्रा देखकर निहित संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के बारे में अनुमान नहीं लगाया जा सकता है।

संक्षेप में, संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की कतिपय विशेषताएँ होती हैं तथा संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ आन्तरिक स्तर पर घटित होती हैं। उनका बाह्य प्रेक्षण नहीं किया जा सकता है।

संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के माध्यम से जब परामर्शन की जाती है तो संज्ञान के अंतर्गत आनेवाली निम्न मानसिक प्रक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए -

1- संज्ञानात्मक न्यूरोगतिविधियां (Cognitive neuro activities)

2- प्रत्यक्षीकरण (Perception)

3- पैटर्न पहचान (Pattern recognition)

4- अवधान (Attention)

5- चेतना (Consciousness)

6- स्मृति (Memory)

7- चिन्तन (Thinking)

8- संज्ञानात्मक विकास सम्बंधित पहलू (Cognitive developmental related aspects)

9- भाषा (Language)

10- प्रतिमावली (Imagery)

11- ज्ञान का निरूपण (Representation of Knowledge)

12- मानव बुद्धि एवं कृत्रिम बुद्धि (Human intelligence and Artificial intelligence)

1. **संज्ञानात्मक न्यूरोगतिविधियां (Cognitive-neuro activities):**इसमें संज्ञानात्मक मनोविज्ञान एवं न्यूरोविज्ञान सम्बंधित पहलू विशेषकर स्मृति, संवेदना, प्रत्यक्षीकरण, समस्या समाधान, भाषा संसाधन आदि से सम्बन्धित सिद्धान्तों एवं उनके जैविक आधारों को आधार मान कर संज्ञानात्मक परामर्शन किया जाता है।

2. **प्रत्यक्षीकरण (Perception)-**संवेदना को अर्थ देना प्रत्यक्षीकरण है। संज्ञानात्मकमनोविज्ञान का यह प्रमुख क्षेत्र है।
3. **पैटर्न पहचान (Pattern recognition)-**इसके अन्तर्गत व्यक्ति अपने पर्यावरणीय उद्दीपकों का शायद ही कभी एक एकाकी संवेदी घटना के रूप में प्रत्यक्ष करता है बल्कि इन उद्दीपकों को वह एक जटिल पैटर्न)complex patternत्यक्षण करता है।के रूप में प्र (
4. **अवधान (Attention)-**अवधान संज्ञानात्मक प्रक्रिया है। व्यक्ति किसी भी समय या एक समय पर सीमित वस्तुओं पर ही ध्यान दे पाता है।
5. **चेतना (Consciousness)-**चेतना का अध्ययन संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों के लिए काफी महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि इन अध्ययनों से व्यक्ति के कई संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को समझने में मदद मिलती हैं। इसका आशय वातावरण के बारे में बोध या समझ से है।
6. **स्मृति (Memory)-**संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों के लिए स्मृति महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इनके स्मृति के दो प्रकार हैं- कालीन स्मृति । लघुकालीन स्मृति में व्यक्ति सूचनाओं को करीब लघुकालीन स्मृति एवं दीर्घ20-30 सेकेण्ड तक ही संचित रख पाता है। दीर्घकालीन स्मृति में व्यक्ति सूचनाओं को लम्बे समय तक या स्थायी तौर पर संचित करके रखता है।
7. **चिन्तन (Thinking)-**चिंतन ऐसी प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से प्राणी विभिन्न तरह की मानसिक प्रक्रियाओं द्वारा मानसिक प्रतिमाओं का निर्माण करता है। इसी प्रकार संप्रत्यय भी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है।
8. **संज्ञानात्मक विकास सम्बंधित पहलू(Cognitive developmentrelated aspects)-**इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की संज्ञानात्मक विकासात्मक प्रक्रियाओं को आधार मान कर संज्ञानात्मक परामर्शन किया जाता है। पियाजे ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया है।
9. **भाषा (Language)-**भाषा संप्रेषण का सशक्त माध्यम है। यह योग्यता मात्रा मनुष्यों में पाई जाती है। चौमस्की ने इस क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है।
10. **प्रतिमावली (Imagery)-**मानसिक प्रतिमावली को परिभाषित करते हुए यह कहा जाता है कि किसी अनुपस्थित वस्तु या घटना का मानसिक चित्राण करना ही मानसिक प्रतिमावली है। ऐसे अध्ययनों से संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों को स्मृति का स्वरूप समझने में सहायता प्राप्त हुई है। सूचनाओं को स्मृति में शब्दिक तथा काल्पनिक में से किसी रूप में या दोनों ही रूप में संचित किया जा सकता है। उसे द्विकूट संकेतन परिकल्पना कहते हैं।
11. **ज्ञान का निरूपण (Representation of Knowledge)-**ज्ञान के निरूपण से तात्पर्य है कि सूचनाओं का संकेतीकरण किस तरह से होता है और मस्तिष्क में संचित सूचनाओं के साथ वे किस तरह से संयोजित होती हैं। यह कार्य संप्रत्यात्मक निरूपण तथा संज्ञानात्मक शब्दार्थ संरचना के आधार पर होता है।
12. **मानव बुद्धि एवं कृत्रिम बुद्धि(Human intelligence and Artificial intelligenc**e)- बुद्धि एक प्रमुख संज्ञानात्मक प्रक्रिया है जिनमें अनेक मानसिक क्षमताएँ सम्मिलित होती हैं। सचमुच में यह एक सार्वभौम क्षमता है यह समायोजन, चिन्तन तथा उद्देश्यपरक व्यवहार करने में सहायक है। यह क्षेत्र भी संज्ञानात्मक मनोविज्ञान में सम्मिलित है।

4.5 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम (Cognitive Intervention Approach):दार्शनिक व मनोवैज्ञानिक आधार (Philosophical and Psychological Bases)

मनोचिकित्सा एवं परामर्शन के क्षेत्र में जब एक प्रणाली का विकास हुआ तो कुछ समय के बाद उसका विरोध भी शुरू हो गया इसी क्रम में मनोविश्लेषणात्मक प्रणाली का भी विरोध हुआ। मनोविश्लेषणात्मक प्रणाली के समर्थकों के बीच इसके अभिग्रहों के बारे में मतभेद आरम्भ हुआ। इसी मतभेद के बीच दूसरी उपचार प्रणाली के विकास का प्रयत्न आरम्भ हो गया। इसी प्रयास के तहत आरोन बेक (Aeron Beck, 1921) ने संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम को विकसित किया। बेक तार्किक संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम के प्रणेता अल्बर्ट एलिस के साथही ग्रीक, रोमन और पूर्व के दार्शनिकों (oriental philosophers) के विचारों से काफी प्रभावित थे। उन दार्शनिकों का मत था कि हम अपने जगत और स्वयं के बारे में जैसा चिन्तन करते हैं उसका हमारे संवेग और व्यवहार पर गहरा प्रभाव पड़ता है। गौतम बुद्ध ने भी कहा था हम जैसा सोचते हैं वैसा ही होते हैं। हम जो कुछ हैं उसका उद्भव हमारे विचारों में होता है, अपने विचारों से हम संसार की रचना करते हैं।

1663-64 में चिन्तन और विषाद के सम्बन्धों पर आरोन बेक (Aeron Beck, 1921) ने नकारात्मक संज्ञान संप्रत्यय (concept of negative concept) प्रस्तुत किया और कहा कि विषाद से पीडित व्यक्ति जगत, भविष्य और स्वयं के बारे में नकारात्मक दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करता है। विषाद चिन्तन का एक विकार है। अन्य मानसिक समस्याओं में भी संज्ञानात्मक विकार प्रदर्शित किया गया इसलिए उपचार हेतु संज्ञान के स्तर पर हस्तक्षेप की प्रणाली विकसित की गई। संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम में अनेक व्यवहार हस्तक्षेप तकनीकों को भी सम्मिलित किया गया है। इसलिए इस उपागम का प्रमुख रूप संज्ञानात्मक वहार उपागमव्य -(Cognitive Behavioural Approach(का होता है।

परामर्शदाता परामर्शी के लक्ष्यों की सिद्धि के लिए अनेक प्रकार से सहायता प्रदान करता है । परामर्शदाता परामर्शी के सम्मान और अधिकार की रक्षा करते हुए लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु उपयुक्त तकनीक का उपयोग करता है। यहाँ परामर्शन तकनीकों का उद्देश्य व्यक्ति को सशक्त करना होता है और ऐसा करते समय व्यक्ति की पसन्द, वरीयता, तकनीकी उपागम की वरीयता को भी ध्यान में रखा जाता है। विभिन्न परामर्शन उपागमों में व्यक्ति की सहायता करने के लिए हस्तक्षेप का बिन्दु उस व्यक्तित्व सिद्धान्त के आधार पर सुनिश्चित हो जाता है जिसके साथ उस उपागम का संबंध होता है। व्यक्तित्व सिद्धान्त द्वारा समस्या की व्याख्या अलगअलग ढंग से की जाती है-, किन्तु जैसा कि गार्डन जिंक्स (Garden Jinks, 2000) का विचार है सैद्धान्तिक आधार संबंधी विभिन्नताओं के बावजूद विभिन्न उपागम कुछ हस्तक्षेप तकनीकों का सुविधापूर्वक कतिपय अनुकूलनों (adaptations)के साथ उपयोग कर सकते हैं। हस्तक्षेप की प्रमुख तकनीकों को पाँच वर्गों में बाँटा जा सकता है। इस वर्गीकरण का आधार उन बिन्दुओं को बनाया गया है, जहाँ परामर्शन तकनीकें अपनी गतिविधियों को केन्द्रित करते हैं। ये हस्तक्षेप नीतियाँ (intervention strategy) संज्ञान (cognition), व्यवहार (behavior),बिम्ब (imagery)और अंतर्वैयक्तिक कारकों (interpersonal factors) को प्रभावित करने का प्रयत्न करती हैं।

अनुभूतियाँ (Feelings)- अनुभूतियों एवं भावनाओं के स्तर पर हस्तक्षेप करने के लिए परामर्शदाता परानुभूति (empathy) के विभिन्न स्तरों का संप्रेषण करने, भावनात्मक अभिव्यक्ति के लिए व्यक्ति को अवसर देने और रिक्तकुर्सी कार्य जैसी तकनीकों का उपयोग करता है।-

परानुभूति के स्तर की अभिव्यक्ति और संप्रेषण (Expressing and communicating levels of empathy)- परामर्शदाता की गतिविधियाँ परामर्शी के बारे में प्रत्यक्षण, संज्ञान, भावानुभूति आदि का विकास और संप्रेषण करने जैसी होती हैं। परानुभूति के स्तरों का अर्थ परामर्शी के बारे में बोध की प्राप्ति की गहनता और उसके संप्रेषण से है। जिंक्स ने परानुभूति के स्तरों को तीन रूपों में विभाजित किया है-

i. सरल परानुभूति प्रतिक्रियाएँ अनुभूतियों का प्रत्यावर्तन), वार्ता का सार संक्षेपण आदि(

ii. उच्च परानुभूति प्रतिक्रियाएँ परामर्शी के) अनुभवों के उन पक्षों के संदर्भ में संचार करना जिसके विषय में वह अनभिज्ञ था, यथा वार्ता के समय बिम्बों का वर्णन, उसके चेहरे पर तनाव, परामर्शी के बारे में परामर्शदाता की गहन अनुभूति वर्णन

iii. सांस्कृतिक परानुभूति क्लायंट और उसकी संस्कृति के बीच की)अंतःक्रिया के बारे में समझ विकसित करना और क्लायंट को परामर्शदाता और उसकी संस्कृति के विषय में ऐसी ही समझ विकसित करने के लिए प्रेरित करना

उक्त तीनों स्तरों पर परानुभूति का विकास और संप्रेषण परामर्शन संबंध को मजबूत बनाता है और भावानुभूति के क्षेत्र में हस्तक्षेप की क्रिया को संभव एवं सहज रूप प्रदान करते हुए परामर्शी की सहायता करता है।

भावनात्मक अभिव्यक्ति (catharsis): समायोजनात्मक एवं संवेगात्मक समस्याओं के क्षेत्र में परामर्शन कार्य के लिए परामर्शी के द्वारा भावनात्मक अभिव्यक्ति अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। भावनाओं को अभिव्यक्त करने का अर्थ है कि परामर्शी उन अनुभूतियों को जो दुखद हैं, जिनका संबंध विगत अनुभवों से है, जिनके विरूद्ध क्लायंट ने मनोरचनाएँ प्रयुक्त की हुई हैं, के साथ पुनः सम्पर्क स्थापित करे और उन्हें अभिव्यक्त करे। जिंक्स का कहना है कि परामर्शदाता विरेचन कार्य (cathartic work) दो रूपों में करा सकता है पहला अत्यल्प संरचित उपागम - और दूसरा संरचित उपागम।

अत्यल्प संरचित उपागम में परामर्शदाता सरल और उच्च परनुभूति पर शुद्धतापूर्वक ध्यान केन्द्रित करता है। इस क्रिया से स्वाभाविक रूप से क्लायंट को उसके संवेगों के साथ सम्पर्क की दिशा में उत्प्रेरित करने में सहायता मिलती है। विरेचन कार्य (cathartic work) में परानुभूति संबंधी व्यवहार उस समय अधिक प्रभावी होता है जबकि परामर्शी के वर्तमान अनुभवों पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाता है। ऐसी स्थिति में परामर्शी अपने विगत् मनोघातों और दुखद स्मृतियों के क्षेत्र में भी प्रवेश कर जाता है। इस हालात में परामर्शदाता उसके अनुभवों पर परानुभूतिपूर्ण अनुक्रिया करता है। परामर्शी को सुरक्षित परिवेश की अनुभूति होनी चाहिए जिसमें वह सहजतापूर्वक भावनात्मक अनुभूतियों को प्रवाहित कर सके। यहाँ यह भी आवश्यक होता है कि उसके कार्य के लिए निर्धारित सत्र लचीला हो। विरेचन कार्य के अन्त में सत्र से बाहर जाने के लिए परामर्शी को मानसिक तैयारी हेतु थोड़ा समय दिया जाता है।

संरचित उपागम में किसी एक मनोआघात का वर्णन करने के कार्य पर इस रूप में केन्द्रित किया जाता है कि जैसे कि घटनाएँ अभी घटित हो रही हों| परामर्शदाता विवरण के भावनात्मक पक्ष पर केन्द्रित करता है। परामर्शी की चुप्पी, टिप्पणी, स्लिप ऑफ टंग (slip of tongue), वार्ता में रूकावट आदि अन्य अवाचिक सूचनाओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है तथा परामर्शी को इसकी व्याख्या करने के लिए कहा जाता है, जिसके परिणामस्वरूप वह अपनी अनुभूतियों का गहराई से अन्वेषण करता है।

रिक्त स्थान कार्य (Empty chair work)- इस तकनीक का उपयोग ऐसे परामर्शी के लिए किया जाता है जो अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने लिए संघर्ष कर रह होते हैं। परामर्शी को दो पक्षों यं एवं अन्य कोईस्व) के मध्य की वार्ता में दोनों पक्षों की भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। जिंक्स (महत्वपूर्ण व्यक्ति)2000) ने इस द्विपक्षीय भूमिका निभाने के लिए दो या अधिक कुर्सियों पर बारीबार-ी से बैठते हुए इस कार्य के करने को अधिक लाभकारी बताया है। परामर्शी जब कभी भी यह कार्य जिस किसी बिन्दु पर बन्द करना चाहता है तब उसे अनुमति दी जाती है और प्रतिरोध के प्रति परानुभूतिपूर्ण अभिव्यक्ति करते हुए अन्वेषण कार्य सम्पन्न किया जाता है। इस प्रकार रिक्त स्थान कार्य विधि परामर्शी के बोध के स्तर को उठाने और जीवन की अनुभूतियों, संबधों, द्वन्द्वों को परामर्श कक्ष में लाने में उपयोगी सिद्ध होती है ।

4.6 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम के मूलभूत अभिग्रह(Basic Assumptions of Cognitive InterventionApproach):

परिवेश के साथ व्यक्ति का समायोजन स्थापित होने के लिए परिवेश, स्वयं अपने बारे में एवं अन्य लोगों के बारे में यथार्थपूर्ण सूचना की आवश्यकता होती है। हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ आँख), कान , नाक, त्वचा एवं जीभपरिवेश के (साथ मध्यस्थता स्थापित करके मौलिक सूचनाएँ अर्जित करती हैं। इन प्राप्त सूचनाओं के साथ चिन्तन, तर्क, कल्पना की प्रणालियाँ सम्मिलित होकर हमारे अन्दर व्यक्तियों ,घटनाओं एवं परिवेश के बारे में बोध जिस स्वरूप में विकास करता है, उसमें घटना का वस्तुनिष्ठ वर्णन ही नहीं अपितु हमारी व्याख्या, मूल्यांकन और निष्कर्ष का समावेश होता है।

संज्ञान का हमारी अनुभूतियों, व्यवहार और दैहिक अवस्था के साथ सम्बन्ध के बारे में विश्वास इस सिद्धान्त का मूलभूत अभिग्रह है। यदि सामने उपस्थित व्यक्ति का संज्ञान आतंकवादियों के कृत्य को देखने में हो रहा है तो व्यक्ति की दैहिक अवस्था प्रभावित होगी, उसकी श्वसन क्रिया और हृदयगति तीव्र हो जायेगी, व्यक्ति को भय या क्रोध की अनुभूति होगी तथा उसका व्यवहार पलायन या आक्रमण के रूप में होगा।

बेक (Beck) ने व्यक्ति की अनुभूतियों और व्यवहार को प्रभावित करने वाले तीन प्रकार के संज्ञान का वर्णन किया है -

व्यक्ति को निरन्तर बाहरी परिवेश और आन्तरिक संरचना से सूचनाएँ प्राप्त होती रहती हैं जिसको आधार बनाकर हमारा मस्तिष्क उसे संज्ञानात्मक अर्थपूर्णता के रूप में प्रस्तुत करता है।

व्यक्ति के अनेक संज्ञान स्वतः स्फूर्त होते हैं, उनकी उत्पत्ति आन्तरिक संवाद द्वारा होती है। व्यक्ति के लिए ऐसे संज्ञानों का चेतन बोध प्राप्त होना आवश्यक नहीं होता है।

स्कीमा (Schema) ऐसी काल्पनिक संज्ञानात्मक संरचनाएँ होती हैं जो वर्तमान प्रसंग में आवश्यक सूचनाओं पर ध्यान केन्द्रित करने और अनावश्यक सूचनाओं की उपेक्षा करने के लिए अवछनन प्रणाली की भाँति हमारी सहायता करती हैं। स्कीमा अनकहा नियम या अन्तर्निहित विश्वास होता है जिसका आरम्भिक अनुभवों के माध्यम से विकास होता है।

बेक (Beck) के संज्ञानात्मक प्रतिरूप की अवधारणा यह है कि व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक या संवेगात्मक समस्याओं का कारण परिस्थितियों और अनुभवों में नहीं बल्कि व्यक्ति के विकृत चिन्तन की प्रणाली में निहित होता है। जब अवस्था या कुसमायोजित स्कीमा विकसित और सक्रिय हो जाता है तब सूचना संसाधन (Information Processing) में विकृति आ जाती है। सूचना को व्यक्ति के अन्तर्निहित विश्वासों के अनुरूप परिवर्तित कर लिया जाता है या प्रतिकूल सूचनाओं की उपेक्षा कर दी जाती है। बेक ने विकृत सूचना संसाधन के तीन रूपों का वर्णन किया है -

1. ऐसा संज्ञानात्मक निष्कर्ष जिसका कोई आधार या समर्थन करने वाला साक्ष्य नहीं है।

2. चिन्तन की ऐसी शैली जिसमें व्यक्ति सदैव द्विध्रुवीय मूल्यांकन में किसी एक छोर पर पाया जाता है, मध्यवर्ती मूल्यांकन का स्वरूप नहीं पाया जाता है।

3. अधिकीकरण या अल्पीकरण का विचार आने पर संज्ञानात्मक प्रक्रिया या घटनाओं का मूल्यांकन या तो बढ़ा चढ़ाकर या अत्यन्त घटाकर प्रस्तुत करती है।

कुसमायोजनात्मक संज्ञानात्मक स्कीमा, संज्ञानात्मक विकृति और स्वतः स्फूर्त स्कीमा जो कि व्यक्ति को) संवेगात्मक विकार की दिशा मे ले जाते हैं को बेक ने अर्जित प्रक्रम माना है। उनके बहुकारक सिद्धान्त ((Multifactor theory) में मनोवैज्ञानिक समस्याओं को जनेटिक, बाल्यकालीन अनुभवों और सामाजिक अधिगम की अनुक्रिया के माध्यम से उत्पन्न रोग उन्मुखता (vulnerability) का प्रतिफल मानते हैं। तात्कालिक परिवेश के कारक अस्वस्थ संज्ञानात्मक प्रक्रिया के लिए सक्रियकरण का कार्य करते हैं।

संज्ञानात्मक विकृति के माध्यम से मनोवैज्ञानिक समस्याओं का रूप यथावत बना रहता है। एक बार अस्वस्थ स्कीमा सक्रिय हो जाती है तो व्यक्ति सूचनाओं का अवछनन करके उसे उस रूप में ही संसाधित करता है कि प्राप्त सूचना व्यक्ति की स्वयं अपने बारे में, अन्य लोगों, परिवेश एवं घटनाओं के बारे में विश्वास या व्याख्या के अनुरूप हो। पूर्वाग्रहपूर्ण सूचना संसाधन का प्रभाव संसाधन स्वचालित विचार पर भी पड़ता है। अन्ततः व्यक्ति का अस्वस्थसंज्ञान पुर्नबलित होता है और संवेगात्मक समस्याओं की निरन्तरता बनी रहती है।

4.7 संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम के लक्ष्य (Goals of cognitive intervention)

संज्ञानात्मक उपागम का लक्ष्य व्यवस्थित प्रक्रिया के माध्यम से संवेगात्मक समस्याओं का उपचार और व्यवहार में परिवर्तन स्थापित करना होता है। वैसे संज्ञान में परिवर्तन स्थापित करना ही इस उपागम का प्रधान एवं प्रथम लक्ष्य है। किन्तु इस कार्य के लिए परामर्शी की सक्रिय सहभागिता भी काफी अनिवार्य होती है। परिवर्तन के लक्ष्य और प्रक्रिया की निम्न अवस्थाएँ होती हैं-

1. परामर्शी को संज्ञानात्मक प्रतिरूप और संवेग एवं व्यवहार में विचार की भूमिका के बारे में शिक्षित करना परामर्शी में समस्या का संप्रत्ययन विकसित करना।

2. परामर्शदाता परामर्शी को संज्ञानात्मक त्रुटियां, स्वतः स्फूर्त विचार और स्कीमा को चुनौती देने एवं व्यवहार में परिवर्तन की योजना बनाने तथा लक्ष्य निर्धारित करने के लिए सहायता देता है।

3. परामर्शी को स्वयं के लिए परामर्शदाता बनने हेतु सहायता दी जाती है।

4. परामर्शी के विकृत विचारों में दीर्घकालिक लाभ के लिए परिमार्जन उत्पन्न किया जाता है।

5. परामर्शी में उसकी समस्याओं की उत्पत्ति और अनुरक्षण के विषय में अन्तरिम परिकल्पनाओं के रूप में विश्लेषण का प्रतिपादन किया जाता है। यह विश्लेषणात्मक प्रतिपादन संज्ञानात्मक विकृति, पूर्वनिहित कारकों और तात्कालिक कारकों के पदों के रूप में तैयार किया जाता है।

4.8 परामर्श हेतु संज्ञानात्मक हस्तक्षेप की विविध तकनीक (Various techniques of counselling through cognitive intervention):

संज्ञानात्मक हस्तक्षेप को परामर्शन की एक प्रभावशाली विधा के रूप में संज्ञान(Cognition)म संज्ञान के माध्य - से परामर्शन के विभिन्न क्षेत्रों में लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रकार की तकनीकों का उपयोग किया जाता है। इनमें निम्न मुख्य हैं-

संज्ञानात्मक पुनर्गठन (Cognitive restructuring)- संज्ञानात्मक पुनर्गठन तकनीक व्यक्ति के विश्वास को बढ़ाकर उसके संवेगात्मक और व्यवहरात्मक प्रतिक्रिया में परिवर्तन के लिए सहायता करती है। यदि व्यक्ति का विश्वास अधिक तर्कसंगत रूप धारण कर ले तो व्यक्ति घटनाओं के प्रति अधिक उपयुक्त ढंग से अनुक्रिया करेगा। हस्तक्षेप के लिए व्यक्ति को A-B-C-मॉडल के आधार पर परामर्शन दी जाती है। इस मॉडल में A का तात्पर्य परामर्शन की पूर्व अवस्था को जानने से है अर्थात पूर्व कारण (Antecedent causes) या घटना है, B का तात्पर्य विश्वास)Belief/Behaviour) से है जिसका संबंध स्वयं व्यक्ति से है अन्य लोगों के विश्वास से होता है तथा C का तात्पर्य संवेगात्मक एवं व्यवहारात्मक परिणाम)emotional and behavioural consequencesसे है। इस (प्रकार यदि किसी घटना के घटित होने के पश्चात् उत्पन्न हुए व्यक्ति के घटना और उसको प्रभावित करने वाले कारकों केबारे में व्यक्ति के संज्ञान में विश्वास तथा तर्कसंगत रूप में रखा जाये तथा उसे अधिक व्यवहारोपयोगी आधृत वास्तविकता के रूप में ढाल कर पेश किया जाये तो उन ऋणात्मक संवेगों और प्रतिक्रियाओं को दूर किया जा सकता है जो कि ऋणात्मक विश्वास अथवा संज्ञान के कारण व्यक्ति के अंदर उत्पन्न हो गयी थी। संज्ञानात्मक पुनर्गठन की अन्य तकनीकें (Beck 1989; Meichenbaum1977) व्यक्ति के स्वतः स्फूर्त विचारों तथा स्व-वार्ता पर ध्यान केन्द्रित करती है। व्यक्ति को समस्यात्मक घटनाओं और उससे संबंधित वार्ता के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। परामर्शदाता व्यक्ति को अधिक स्वस्थ अनुक्रिया अपनाने के लिए प्रेरित करता है। परामर्शदाता स्वचालित अनुक्रिया की आदत (habit of automatic response) को रोकने, कल्पनाओं में अधिक स्वस्थ प्रतिक्रिया का अभ्यास करने के लिए सहायता देता है।

नये परिप्रेक्ष्य का विकास (Development of new perspectives)- इस तकनीक द्वारा उन व्यक्तियों को जिन्होंने अपना संप्रत्ययन सदैव असमर्थ व्यक्ति के रूप में किया है, प्रोत्साहित किया जाता है और यह पुनर्विचार करने के लिए कहा जाता है कि उनके अपने नियंत्रण में क्या है। उनके समक्ष एक सकारात्मक चुनौती पेश की जाती है और घटनाओं को दूसरे ढंग से देखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार व्यक्ति अपनी कमियों के स्थान पर अच्छाइयों पर ध्यान केन्द्रित करता है। इर्गन (Ergan1998) ने इस हेतु परानुभूति की दो परतों का संप्रत्यय प्रस्तुत किया है।

विगत्संबंध की रचनाव्वर्तमान- (Making past-present connection)- परामर्शी की संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं की व्याख्या पूर्णतया वर्तमान परिस्थितियों के संदर्भ में नहीं की जा सकती है। अतः परामर्शदाता परामर्शी को उसकी संवेगात्मक अनुभूतियों को विगत अनुभवों के परिप्रेक्ष्य में देखने हेतु सहायता देता है। वर्तमान और विगत को जोड़ने के लिए रिक्त कुर्सी वार्ता विधि भी प्रयुक्त की जाती है।

सकारात्मक संसाधन अन्वेषण (Search of positive assets)- इस तकनीक में परामर्शी को उसके पुराने अनुभवों के पुनर्मूल्यांकन के लिए सहायता दी जाती है। व्यक्ति जहाँ ऋणात्मक मूल्यांकन विकसित कर लेता है, वहाँ नये सकारात्मक अर्थ की खोज की जाती है, उसके अन्दर नये संसाधनों का अन्वेषण किया जाता है।

लक्ष्य का निर्धारण (Setting the goal)- संभव हो कि परामर्शी की समस्याओं का केन्द्र बिन्दु उपयुक्त लक्ष्य का अभाव हो। शैक्षिक एवं व्यावसायिक परामर्शन के क्षेत्र में उपयुक्त लक्ष्यों का निर्धारण महत्त्वपूर्ण पड़ाव होता है। लक्ष्य का निर्धारण व्यक्ति के वर्तमान एवं भविष्य की समस्याओं के समाधान के लिए उपयोगी होता है। लक्ष्यों के निर्धारण में SMART सिद्धान्त का उपयोग किया जाता है लक्ष्य विशिष्ट रूप में वर्णित -(Specified-S) होना चाहिए, मापे जाने योग्य (Measurable-M),उपयुक्त (Appropriate-A) यथार्थ पूर्ण (Realistic-R) और निर्धारित समय सीमा (Time-T) वाला होना चाहिए।

शक्ति क्षेत्र विश्लेषण (Force Field Analysis): कुर्ट लेविन (Kurt Lewin, 1969) की यह तकनीक परामर्शी को उन कारकों के अन्वेषण में सहायता देती है जो लक्ष्यों की प्राप्ति में या योजनाओं को कार्य रूप देने में सहायक या बाधक सिद्ध होते हैं। परामर्शी को चरणबद्ध ढंग से परिवेश से संबंधित कारकों की पहचान करने, उन कारकों की शक्ति का मापन करने और अन्त में सहायक कारकों की शक्ति बढ़ाने और बाधक कारकों की शक्ति क्षीण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसके लिए विशेष कार्य योजनाओं का विकास किया जाता है।

निर्णय रचना (Decision Making)- जीवन के विविध क्षेत्रों में उपलब्ध अनेक लक्ष्यों में से व्यक्ति की गुणवत्ता के आधार पर एक उपयुक्त लक्ष्य के चयन करने की आवश्यकता होती है। परामर्शन प्रक्रिया व्यक्ति के इस कार्य में सहायता करती है। शिक्षा , व्यवसाय, मनोरंजन, व्यक्तिगत जीवन आदि अनेक क्षेत्रों में विद्यमान अनेक लक्ष्यों के बीच चयन का कार्य पूरा करने के लिए परामर्शन प्रक्रिया व्यक्ति की सहायता करती है। व्यक्ति सभी संभव लक्ष्यों के दोनों पक्षों पर विचार करते हुए निर्णय लेता है कि कौन सा लक्ष्य उसके लिए अधिक लाभकारी होगा।

4.9 संज्ञानात्मक उपागम में परिवर्तन अर्जित करने की प्रविधियाँ तथा परामर्श दाता की आवश्यक विशेषताएँ (Techniques for acquiring changes through cognitive interventionand essential characteristics of counsellor)

संज्ञानात्मक उपागम के सम्बन्ध में जिल्ल मिट्टन (Jill Mytton) का कहना है कि संज्ञानात्मक परामर्शदाता या उपचार एवं व्यवहार प्रविधियों को अपनाने के लिए परामर्शदाता को अच्छे परामर्शन सम्बन्ध की आवश्यकता होती है। इसमें संज्ञानात्मक परामर्शदाता का कार्य एक शिक्षक की तरह होता है। इसलिए उसमें एक अच्छे शिक्षक के गुण होने चाहिए ताकि वह परामर्शी को संज्ञान, संवेग, शरीर क्रिया और व्यवहार के सम्बन्धों के बारे में शिक्षित कर सके।

जिल्ल मिट्टन (Jill Mytton, 2000)ने संज्ञानात्मक - उपागम में प्रयुक्त होने वाली छः संज्ञानात्मक तथा पाँच व्यवहारात्मक तकनीकों को सूचीबद्ध किया है -

1. सुकरात के तरीके से प्रश्न पृच्छा)Socratic Questioning method)चुनौती देने वाला संवाद -

2. लागत लाभ विश्लेषण् (Cost-benefit analysis)किसी प्रकार के विश्व -ास से लाभ हानि का आकलन करना।

3. परामर्शी को स्वतः स्फूर्त विचारों की पहचान करने एवं संवेग तथा व्यवहार पर उसके प्रभाव को समझने में सहायता करना

4. वैकल्पिक परिप्रेक्ष्यों का विकास (Alternative perspectives(

5. वास्तविक परीक्षण (Reality testing)विचारों के ल -िए साक्ष्य की खोज

6. संज्ञानात्मक अभ्यास (Cognitive rehearsal)-

इस हेतु संज्ञानात्मक परामर्शदाता द्वारा पाँच व्यवहार प्रविधियाँ भी प्रयुक्त की जाती हैं जो निम्नवत हैं -

1. क्रमिक अनावृत्तिकरण (Graded exposure)

2. गतिविधियों का प्रबोधन (Monitoring activities)प्रतिदिन की गतिविधि की रिकार्डिंग और मूल्यांकन - की क्रिया

3. गतिविधियों की अनुसूची तैयार करना (Scheduling activities)-

4. व्यवहार परीक्षण भय चिन्ता का परीक्षण

5. विश्रांति या शिथिलीकरण प्रविधियाँ

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि संज्ञानात्मक उपागम में संज्ञानात्मक परामर्शदाता या उपचारक को परामर्शी से अच्छे परामर्शन सम्बन्ध की आवश्यकता होती है। इसमें संज्ञानात्मक परामर्शदाता का कार्य एक तार्किक शिक्षक की तरह होनी चाहिए जिसे संज्ञान, संवेग, शरीर क्रिया और व्यवहार के सम्बन्धों के बारे में अच्छी समझ हो |

4.10 सारांश (Summary)

परामर्श एक विशिष्टीकृत सेवा का पर्याय है जो समस्याग्रस्त व्यक्ति को समस्याओं से निजात पाने में मदद करता है ताकि वह समायोजित व ,खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकेपरामर्श सेवा के तहत समस्याग्रस्त | ओं को हल करने में सक्षम हो सकता है।प्रतिदिन की समस्या-क्ति अपनी दिनव्य
,संज्ञानात्मक :परामर्श सेवा को बहुत सारी हस्तक्षेप विधियों द्वारा प्रदान की जा सकती है यथा मनोविश्लेष ,व्यवहारात्मक,भावात्मकणात्मकइस इकाई में |फेनोमेनोलॉजिकल इत्यादि ,गेस्ताल्त्वादी , | पने परामर्शन के संज्ञानात्मक हस्तक्षेप विधि के बारे में अध्ययन किया हैआ

परामर्शन और मनोचिकित्सा के क्षेत्र में हस्तक्षेपन का घनिष्ठ सम्बन्ध व्यक्तित्व के सिद्धांत के साथ रहा है | परामर्शन हस् तक्षेपन के वर्णन में अधिकांशतः चार मूल तत्वों का समावेश देखा जा सकता है |

- मूल अभिग्रह का दर्शन
- मानव व्यक्तित्व और विकास का औपचारिक सिद्धांत
- नैदानिक सिद्धांत
- परामर्शन और मनोचिकित्सकीय संक्रियाएं और तकनीक

संज्ञानात्मक हस्तक्षेप को परामर्शन की एक प्रभावशाली विधा के रूप में जानी जाती है |

संज्ञानात्मक हस्तक्षेप विधि में मुख्यतः व्यक्ति के संज्ञानात्मक प्रक्रिया पर केन्द्रित किया जाता है | संज्ञानात्मक प्रक्रिया का तात्पर्य ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया से है, जिसमें समस्त मानसिक प्रक्रियायें शामिल होती हैं। संज्ञान या मानसिक क्रिया में अर्जन, संग्रहणएवं ज्ञान के उपयोग की प्रक्रियायें पुनर्प्राप्ति , शामिल हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि संज्ञान में अनेक मानसिक प्रक्रियायें सन्निहित होती हैं तथा इन्हीं मानसिक प्रक्रियाओं के आधार पर किसी भी व्यक्ति को जिसे परामर्शन की आवश्यकता है हम परामर्श देते हैं |

संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ परस्पर सम्बन्धित होती हैं संज्ञानात्मक -संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ सक्रिय होती हैं -संज्ञानात्मक म -इससे निर्णय में शुद्धता बढ़ती है -प्रक्रियाओं में सूक्ष्मता तथा शुद्धता पाई जाती है नोविज्ञान में धनात्मक सूचनाओं की व्याख्या नकारात्मक सूचनाओं की तुलना में अधिक अच्छे ढंग से की जाती है। धनात्मक सूचनाएँ अधिक उपयोगी हैं। संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ आन्तरिक स्तर पर घटित होती हैं-संज्ञानात्मक उपागम का लक्ष्य व्यवस्थित प्रक्रिया के माध्यम से संवेगात्मक समस्याओं का उपचार और व्यवहार में परिवर्तन स्थापित करना होता है।

संज्ञान में परिवर्तन स्थापित करना ही संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम का प्रधान एवं प्रथम लक्ष्य है। किन्तु इस कार्य के लिए परामर्शी की सक्रिय सहभागिता भी काफी अनिवार्य होती है। परिवर्तन के लक्ष्य और प्रक्रिया की निम्न अवस्थाएँ होती हैं-

1. परामर्शी को संज्ञानात्मक प्रतिरूप और संवेग एवं व्यवहार में विचार की भूमिका के बारे में शिक्षित करना परामर्शी में समस्या का संप्रत्ययन विकसित करना।

2. परामर्शदाता परामर्शी को संज्ञानात्मक त्रुटियां, स्वतः स्फूर्त विचार और स्कीमा को चुनौती देने एवं व्यवहार में परिवर्तन की योजना बनाने तथा लक्ष्य निर्धारित करने के लिए सहायता देता है।

3. परामर्शी को स्वयं के लिए परामर्शदाता बनने हेतु सहायता दी जाती है।

4. परामर्शी के विकृत विचारों में दीर्घकालिक लाभ के लिए परिमार्जन उत्पन्न किया जाता है।

5. परामर्शी में उसकी समस्याओं की उत्पत्ति और अनुरक्षण के विषय में अन्तरिम परिकल्पनाओं के रूप में विश्लेषण का प्रतिपादन किया जाता है। यह विश्लेषणात्मक प्रतिपादन संज्ञानात्मक विकृति, पूर्वनिहित कारकों और तात्कालिक कारकों के पदों के रूप में तैयार किया जाता है।

संज्ञानात्मक उपागम में प्रयुक्त होने वाली छः संज्ञानात्मक तथा पाँच व्यवहार तकनीकों को सूचीबद्ध किया है -

1. सुकरात के तरीके से प्रश्न पृच्छा (Socratic Questioning method) - चुनौती देने वाला संवाद

2. लागत लाभ विश्लेषण् (Cost-benefit analysis)-किसी प्रकार के विश्वास से लाभ हानि का आकलन करना।

3. परामर्शी को स्वतः स्फूर्त विचारों की पहचान करने एवं संवेग तथा व्यवहार पर उसके प्रभाव को समझने में सहायता करना

4. वैकल्पिक परिप्रेक्ष्यों का विकास (Alternative perspectives)

5. वास्तविक परीक्षण (Reality testing)-विचारों के लिए साक्ष्य की खोज

6. संज्ञानात्मक अभ्यास (Cognitive rehearsal)

संज्ञानात्मक हस्तक्षेप को परामर्शन की एक प्रभावशाली विधा के रूप में संज्ञान(Cognition)संज्ञान के - माध्यम से परामर्शन के विभिन्न क्षेत्रों मेंे लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न प्रकार की तकनीकों का उपयोग किया जाता है। इनमें मुख्य हैं संज्ञानात्मक पुनर्गठन-(Cognitive reconstructuring)नये , परिप्रेक्ष्य का विकास(Development of new perspectives)संबंध की रचना-वर्तमान-विगत् , (Making past-present connection) सकारात्मक संसाधन अन्वेषण ,(Positive asset search) , निर्धारण लक्ष्य का (Setting the goal) शक्ति क्षेत्र विष्लेषण ,(Force Field Analysis) निर्णय रचना , (Decision Making)

इस तरह आपने प्रस्तुत इकाई में संज्ञान की परिभाषा व अर्थसंज्ञानात्मक परामर्श ,न हस्तक्षेप का अर्थ , इसका कार्य ,संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के उद्देश्य ,में संज्ञानात्मक हस्तक्षेप को परामर्शन की एक विधा के रूप र पूर्वक संज्ञानात्मक हस्तक्षेप उपागम की तकनीक व प्रविधियों का विस्ता ,इसके मूलभूत अभिग्रह ,क्षेत्र यन किया है ।अध्य

4.11 शब्दावली: (Glossary)

संज्ञान :संज्ञानका तात्पर्य ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया से है, जिसमें समस्त मानसिक प्रक्रियायें शामिल होती हैं। संज्ञान या मानसिक क्रिया में अर्जन, संग्रहण पुनर्प्राप्ति एवं ज्ञान के उपयोग की प्रक्रियायें शामिल हैं। ,

संज्ञानात्मक मनोविज्ञान :संज्ञानात्मक मनोविज्ञान समस्त मानसिक प्रक्रियाओं का एक वैज्ञानिक अध्ययन है।

संज्ञानात्मक हस्तक्षेप : संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को केंद्र बिंदु मानते हुए परामर्श की प्रक्रिया को किसी भी व्यक्ति को जिसे परामर्शन की आवश्यकता है के लिए संचालित करना|

स्कीमा :स्कीमा अनकहा नियम या अन्तर्निहित विश्वास होता है जिसका आरम्भिक अनुभवों के माध्यम से विकास होता है।

भावनात्मक अभिव्यक्ति :भावनाओं को अभिव्यक्त करने का अर्थ है कि परामर्शी दुखद अनुभूतियों को जिनका संबंध विगत अनुभवों से है, जिनके विरूद्ध व्यक्ति ने मनोरचनाएँ प्रयुक्त की हुई हैं, के साथ पुनः सम्पर्क स्थापित करके अभिव्यक्त करता है।

9.12 अभ्यास प्रश्न

1. संज्ञानात्मक हस्तक्षेप प्रविधि में परामर्शदाता की मुख्य विशेषताओं को लिखिए|
2. संज्ञानात्मक परामर्शदाता द्वारा प्रयुक्त व्यवहार प्रविधियों के नाम लिखिए|
3. जिल्ल मिट्टन (Jill Mytton होने वाली द्वारा उल्लिखित संज्ञानात्मक उपागम में प्रयुक्त (संज्ञानात्मक तकनीकों को सूचीबद्ध कीजिये |
4. संज्ञानात्मक अभ्यासको स्पष्ट कीजिये|
5. वास्तविक परीक्षण क्या है ?
6. संज्ञानात्मक हस्तक्षेप से आप क्या समझते हैं करें।ख्या की व्याइसके उद्देश्यों ?
7. संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के कार्य क्षेत्रों का विस्तृत वर्णन करें।
8. संज्ञानात्मक हस्तक्षेप के सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं को संक्षेप में वर्णन करें।इनके सिद्धान्तों ?
9. संज्ञानात्मक हस्तक्षेप की आवश्यकता पर संक्षेप में लेख लिखें।
10. संज्ञान से आप क्या समझते हैकरें। संज्ञान के विभिन्न प्रकारों का वर्णन्?

9.13 संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

Rogers, C.R. (1942). Counselling and Psychotherapy, Boston, Houghton, Mittlin.

Ray. A. and Asthana, M. (2005). Guidance and Counselling, Concepts, Areas and Approaches, Patna, Motilal Banarsidas Co.Ltd.

सिंह (2001) ,मारअरूण कु ,शिक्षा मनोविज्ञानटर्स।ब्यूपब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,भारती भवन ,पटना ,

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,संज्ञानात्मक मनोविज्ञानमोत ,वाराणसी ,ीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,उच्चतर मनोविज्ञानटर्स।ब्यूशर्स एड डिस्ट्रीपब्लि ,भारती भवन,पटना ,

Lewis, E.C. (1970). Psychology of Counselling, New York, Holt Rienehant and Winston.

इकाई - 5

परामर्श :व्यवहारवादी उपागम

(Behavioral approach of Counseling)

इकाई की रूपरेखा

5.0उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 व्यवहारवादी दृष्टिकोण एवं उसकी मान्यताएं

5.3 परामर्श की व्यवहारवादी तकनीकें (Behavioural Techniques of Counselling)

5.4 परामर्श की क्लासिकल कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें

5.4.1 क्लासिकल कंडीशनिंगका प्रयोग

5.4.2 व्यवस्थित विसंवेदीकरण (Systematic Desensitization)

5.5 परामर्श की ऑपरेंट कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें

5.5.1 पुनर्बलन (Reinforcement)

5.5.2 शेपिंग (Shaping)

5.6 परामर्श की सामाजिक अधिगम पर आधारित तकनीकें

5.7 विशेष आवश्यकता वाले बालकों के परामर्श की व्यवहारवादी विधियाँ

5.8 सारांश

5.9 महत्वपूर्ण शब्द एवं पद

5. 10 अभ्यास प्रश्न

5.0 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन के बाद

- परामर्श के व्यवहारवादी उपागम का संक्षिप्त परिचय बता सकेंगे
- परामर्श के व्यवहारवादी तकनीकों के मान्यताएं एवं आधार बता सकेंगे
- परामर्श के व्यवहारवादी तकनीकों की विशेषताएं बता सकेंगे

- परामर्श के व्यवहारवादी तकनीकों की सीमायें बता सकेंगे
- क्लासिकल अनुबंधन पर आधारित विभिन्न परामर्श की तकनीकों पर चर्चा कर सकेंगे
- क्लासिकल अनुबंधन का प्रयोग बता सकेंगे
- क्लासिकल अनुबंधन से व्युत्पन्न सिद्धांतों का परामर्श में उपयोग बता सकेंगे
- ऑपरेंट अनुबंधन से व्युत्पन्न सिद्धांतों का परामर्श में उपयोग बता सकेंगे
- सामाजिक अधिगम पर आधारित परामर्श की तकनीकों की व्याख्या कर सकेंगे

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

अब तक आप परामर्श एवं परामर्श की प्रक्रियाओं से परिचित हो चुके होंगे। आपने यह भी जान लिया होगा कि परामर्श में परामर्शदाता को परामर्शी के व्यक्तित्व को ध्यान में रखते हुए कार्य करना चाहिए। आपने यह भी जाना कि परामर्श की तकनीकें मनोविज्ञान के सिद्धांतों पर आधारित हैं। मनोविज्ञान के इतिहास पर गौर करें तो यह पहले दर्शन शास्त्र का एक अंग था जो १९ वीं सदी के उत्तरार्ध में दर्शन शास्त्र से अलग एक स्वतंत्र विषय के रूप में विकसित हुआ ।मनोविज्ञान के विकास के क्रम में मनोविज्ञान के अध्ययन क्षेत्र के बारे में कई विचारधाराएँ सामने आई जिनमे प्रमुख हैं :

- संरचनावाद (Structuralism)
- प्रकार्यवाद (Functionalism)
- मनोविश्लेषण वाद (Psychoanalysis)
- व्यवहारवाद (Behaviourism)
- गेस्टाल्टवाद (Gestalt Psychology)
- संज्ञान वाद (Cognitivism)
- मानवतावादी दृष्टिकोण (Humanistic Psychology)

सभी ने अपने अपने अनुसार मनोविज्ञान के अध्ययन क्षेत्र को परिभाषित किया और तदनुसार विभिन्न तकनीक विकसित हुए । परामर्श में हम विभिन्न मनोवैज्ञानिक तकनीकों का प्रयोग करते हैं, अतः परामर्श हेतु प्रयुक्त तकनीकें भी मनोविज्ञान के विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में बांटी गयी है: जैसे संज्ञानात्मक तकनीकेंव्यवहारवादी तकनीकें ,, मनोविश्लेषण वादी तकनीकें, आदि परन्तु एक परामर्शदाता किसी एक उपागम पर आधारित तकनीक का प्रयोग करके प्रभावी परिणाम नहीं प्राप्त कर सकताइस लिए अक्सर परामर्श के दौरान , उसे एकाधिक उपागमों पर आधारित विभिन्न तकनीकों का मिश्रित प्रयोग करना चाहिये। वर्तमान समय में लोकप्रिय हो रही **संज्ञानात्मक– व्यवहारवादी युक्तियां (Cognitive Behaviour Therapy CBT)**इसका सटीक उदहारण हैं जिनके बारे में आप आगे की इकाइयों में पढेंगे। आइये हम वर्तमान इकाई में परामर्श के विभिन्न व्यवहारवादी उपागम पर आधारित तकनीकों का अध्ययन करें ।

5.2 व्यवहारवादी दृष्टिकोण एवं उसकी मान्यताएं(Behaviourist approach and its assumptions)

बीसवीं शताब्दी का आरम्भ मनोविज्ञान के इतिहास में व्यापक परिवर्तनों का दौर था । विभिन्न मनोवैज्ञानिक मनोविज्ञान को दर्शन शास्त्र से अलग एक स्वतंत्र विषय के रूप में जिसका वैज्ञानिक आधार होके रूप में , कसित करने में प्रयासरत थेवि।इस क्रम में सबसे प्रभावी व्यवहारवादी दृष्टिकोण है जिसका जनक सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जे बी वाटसन को माना जाता है। वाटसन एक अमेरिकी मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने १९१३ में एक शोध पत्र व्यवहारवादी दृष्टिकोण :मनोविज्ञान '(Psychology: How a Behaviourist Views it)' प्रकाशित करवाया जिसके बाद मनोविज्ञान के अध्ययन में क्रांति आ गयी। संरचनावादियों के अंतरदर्शन फ्रायड ,के मनोविश्लेषण चेतना का अध्ययन एवं स्वप्न विश्लेषण जैसी अवैज्ञानिक विधियों को दरकिनार करते हुए मनोविज्ञान को मानव के बाह्य क्रियाकलापों और वातावरणीय उद्दीपकों के प्रति उसकी प्रतिक्रिया के अध्ययन को मनोविज्ञान का क्षेत्र बताते हुए व्यवहारवाद की नीव रखी।यहाँ यह जानना दिलचस्प होगा की **व्यवहारवाद के जनक जे बी वाटसन** ने कहा था मुझ एक दर्जन स्वस्थ बच्चे दे दीजिए ", मै व्यावहारिक तकनीकों का प्रयोग करके उनको एक नेता एक वकील या आप कहें तो चोर लुटेरा बना सकता हूँ"।

परामर्श का व्यवहारवादी उपागम मुख्यतः इस मान्यता पर आधारित है कि वातावरण मानव व्यवहार का निर्धारक होता है । एक व्यक्ति एक परिस्थिति विशेष में क्या अनुक्रिया स पर निर्भर है कि पिछले व्यवहार करता है यह इ/ परामर्श की व्यवहारवादी उपागम पर आधारित ?समान परिस्थितियों में उसके व्यवहार का परिणाम क्या रहा है तकन ीकें मुख्यतः व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित सीखने के सिद्धन्तों पर आधारित हैं। व्यवहारवादिओं का मत है कि मानव व्यवहार निरिक्षण योग्य एवं मापनीय होना चाहिए साथ ही उनका यह भी मत है कि व्यावहारिक क्रियायें उद्दीपकअनुक्रिया और पुनर्बलन की क् ,रमिक पुनरावृति द्वारा सीखने का परिणाम होती हैं । व्यवहारवादियों की यह मान्यता मनोविश्लेषण वादियों की मान्यता कि जन्मजात प्रवृतियाँ मानव व्यवहारों का निर्धारक होती हैं और संज्ञानात्मक मान्यता कि व्यक्ति के व्यवहारों पर उसकी संज्ञानात्मक विशेषताओं यथा सोचना तर्क क्षमता आदि का प्रभाव होता है से बिलकुल अलग है । व्यवहारवादी मानते हैं कि हर व्यवहार अनुबंधानात्मक अधिगम का परिणाम हैअतः इस अनुबंधन को समाप्त करके उस व्यावहार विशेष को विलोपित भी किया जा सकता है और नए व्यवहार सिखाए भी जा सकते हैं।

व्यवहारवादियों की प्रमुख मान्यताएं निम्नंकित हैं:

- मानव व्यवहार प्रायः सीखे गए होते हैं।
- अनुबंधन की जिस प्रक्रिया का प्रयोग करके व्यवहार सीखा जाता है उसी प्रक्रिया का प्रयोग करके उस व्यवहार को विलोपित भी किया जा सकता है।
- मानव व्यवहार प्रायः परिस्थितियों एवं वातावरणीय कारकों पर निर्भर करता है।
- अदृश्य व्यवहारों यथा भावनाओं विचारों आदि को भी ,अधिगम सिद्धांतों का प्रयोग करके परिवर्तित किये जा सकता है।

- प्रत्येक व्यक्ति अद्वितीय होता है और तदनुसार सबकी वातावरण के प्रति अनुक्रिया भी अद्वितीय होती है ।

5.3 परामर्श की व्यवहारवादी तकनीकें (Behavioural Techniques of Counselling)

परामर्श की व्यवहारवादी तकनीकों में प्रमुख है:

- परामर्श की क्लासिकल कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें
- परामर्श की ऑपरेंट कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें
- परामर्श की सामाजिक आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें

परामर्श की क्लासिकल कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें

क्लासिकल कंडीशनिंग के सिद्धांतों का प्रतिपादन रूसी चिकित्सक इवान पावलोव ने किया था। इवान पावलोव पेशे से एक चिकित्सक थे जिन्हें १९०४ में उनके पाचन सम्बन्धी अध्ययन के लिए नोबेल पुरस्कार भी दिया गया था। पावलोव ने अपने सीखने के सिद्धांत का आधार अनुबंधन को माना है ।अनुबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा उद्दीपक एवं अनुक्रिया के बीच एक साहचर्य स्थापित किया जाता है ।पावलोव ने अपने इस प्रयोग को क्लासिकल कंडीशनिंग का नाम दिया क्योकि अधिगम की प्रक्रिया का पहला प्रयोगशाला अध्ययन पावलोव ने किया था ।पावलोव ने अपने इस प्रयोग से यह निष्कर्ष निकला कि यदि कोई तटस्थ उद्दीपक को किसी उपयुक्त एवं स्वाभाविक उद्दीपक के साथ बार बार दिया जाये तो तटस्थ उद्दीपक के प्रति व्यक्ति वैसी ही अनुक्रिया करना सीख लेता है जैसा कि वह प्राकृतिक उद्दीपक के साथ करता है पावलोव मुख्यतः चिकित्सक थे। वे जीवों में भोजन के पाचन पर लार का अध्ययन कर रहे थे जिसके क्रम में क्लासिकल कंडीशनिंग के अधिगम सिद्धांत का विकास हुआ।

क्लासिकल कंडीशनिंगका प्रयोग (Classical Conditioning Experiment)

पावलोव ने अपने अध्ययन के लिए एक कुत्ते को एक पिंजरे में रखा और कुते के गले से लार ग्रंथियों से लार को एकत्र करने के लिए एक छोटे ऑपरेशन से एक पाईप जोड़ दिया।कुत्ते को कई दिन भूखा रखा गया और फिर उसे भोजन दिया गया और स्रावित लार की मात्रा मापी गयी । अपने प्रयोग के क्रम में पावलोव ने देखा कि भोजन मिलने के तुरत पहले उस से सम्बंधित संकेत मिलते ही कुत्ते के मुंह से लार का श्रवण होने लगा । इसे देखकर पावलोव ने कुत्ते को भोजन देने के के ठीक पहले घंटी बजाना शुरू कर दिया । घंटी की आवाज के तुरत बाद लगातार कुछ दिनों तक भोजन दिए जाने पर धीरे धीरे कुत्ते ने घंटी की आवाज पर ही लार टपकाना शुरू कर दिया और बाद में कुत्ते ने सिर्फ घंटी की आवाज पर लार टपकाना सीख लिया चाहे उसके बाद भोजन नहीं भी दिया जाये । इसी प्रयोग को और आगे बढ़ाते हुए पावलोव ने पहले तेज प्रकाश उत्पन्न किया, फिर तुरत घंटी बजायी और भोजन दिया ऐसा कुछ दिनों तक लगातार किये जाने पर यह पाया गया कि कुत्ते के मुंह से लार का टपकना अब सिर्फ प्रकाश के जलने के साथ ही शुरू हो जा रहा है । साथ ही इस प्रयोग के दौरान यह देखा गया कि जब कई दिनों तक लगतार घंटी बजी पर तब भोजन नहीं दिया गया या प्रकाश किया गया घंटी भी बजायी गयी पर भोजन नहीं दिया गया । ऐसे में कुत्ते के मुंह से कुछ दिनों तक घंटी की आवाज़ या तेज प्रकाश के बाद लार का

टपकाना धीरे धीरे कम होते होते विलोपित हो गया। तत्पश्चात कुछ दिनों तक कुत्ते को एकाधिक प्रकार की घंटियाँ सुनाई गयी पर भोजन एक घंटी विशेष के तुरत बाद दिया गया इसमें यह देखा गया कि कुत्ता पहले तो सभी घंटियों की आवाज पर लार टपकाना शुरू कर देता था परन्तु बाद में उसने उस घंटी विशेष की आवाज पहचानना सीख लिया और उस घंटी विशेष की आवाज पर ही अनुक्रिया देता था सभी घंटियों पर नहीं।

आइये अब पावलोव के प्रयोग का अर्थ समझने का प्रयास करें:

अनकन्डिसन्ड या प्राकृतिक उद्दीपक (Unconditionedor natural Stimulus):वे उद्दीपक जिनके प्रति कोई जीव प्राकृतिक अनुक्रिया (Natural Response) देता है उसे प्राकृतिक उद्दीपक कहते हैं- जैसे उपरोक्त प्रयोग में भोजन जो कुत्ते में प्राकृतिक अनुक्रिया लार का टपकाना उत्पन्न करता है।

तटस्थ उद्दीपक (Neutral Stimulus):ये वे उद्दीपक हैं जो प्रायः किसी जीव में परिस्थिति विशेष में कोई अनुक्रिया उत्पन्न नहीं करते वे उस परिस्थिति में तटस्थ उद्दीपक (Neutral Stimulus) माने जाते हैं जैसे उपरोक्त प्रयोग में घंटी एवं तेज प्रकाश।

कन्डिसन्ड उद्दीपक (Conditioned Stimulus): वे तटस्थ उद्दीपक जिन्हें प्राकृतिक उद्दीपकों के साथ कुछ समय तक प्रस्तुत करने पर धीरे धीरे प्राकृतिक अनुक्रिया उत्पन्न करने में सक्षम हो जाते हैं जैसे अनुबंधन के बाद प्रकाश या घंटी की आवाज़ से कुत्ते का लार टपकाना।

अनुबंधन से पहले: जब कुत्ते को प्राकृतिक उद्दीपक दिया गया तो कुत्ते ने प्राकृतिक अनुक्रिया की

अनकन्डिसन्ड उद्दीपक (Unconditionedor natural Stimulus)

(भोजन)

⇨ अनकन्डिसन्डअनुक्रिया (Unconditioned Response)

(लार टपकाना)

अनुबंधन के दौरान: जब कुत्ते को उदासीन उद्दीपक (घंटी) के साथ प्राकृतिक उद्दीपक (भोजन) दिया गया तो कुते ने प्राकृतिक अनुक्रिया दी

तटस्थ उद्दीपक (Neutral Stimulus)

(घंटी)

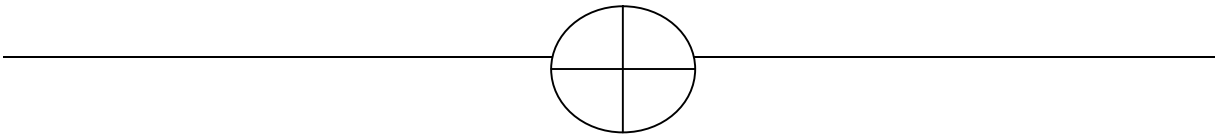

अनकन्डिसन्ड उद्दीपक (Unconditionedor natural Stimulus)

(भोजन)

(एक साथ कई बार)

⇨ अनकन्डिसन्डअनुक्रिया (Unconditioned Response)

(लार टपकाना)

अनुबंधन के बाद:जब प्राकृतिक उद्दीपक और उदासीन उद्दीपक कई बार क्रमिक रूप से प्रस्तुत किये गए तब कुते ने उदासीन उद्दीपक से भी वही अनुक्रिया देना सीख लिया जो प्राकृतिक उद्दीपक से देता था |

कन्डिसन्ड उद्दीपक ⇨ कन्डिसन्ड अनुक्रिया (Conditioned Response)

(घंटी) (लार टपकाना)

विलोपन (Extinction):अनुबंधन के बाद जब कई बार घंटी तो बजायी गयी पर भोजन नहीं दिया गया तब धीरे-धीरे कुत्ते द्वारा स्रावित लार की मात्रा कम होते होते खतम हो गयी अर्थात अनुबंधन का प्रयोग करके कोई व्यवहार सिखाया जा सकता है तो अनुबंधन को समाप्त करके उस व्यवहार को विलोपित भी किया जा सकता है |

तत्काल पुनर्प्राप्ति (Spontaneous Recovery):कुते में लार टपकने का व्यवहार विलोपित करने के बाद पुनःजब उसे घंटी के साथ भोजन दिया गया तो पाया गया कि कुत्ते ने जल्दी ही फिर से घंटी की आवाज पर लार टपकाना शुरू कर दिया अर्थात पहले सीखे गए व्यवहार को विलोपित करने के बाद यदि पुनः अनुबंधन की प्रक्रिया दुहरायी जाये तो भूले गए व्यवहार की तत्काल पुनर्प्राप्ति हो जाती है

सामान्यीकरण (Generalization):कुते को अलग अलग प्रकार की घंटियाँ सुनाई गयी पर भोजन एक ध्वनि विशेष के बाद ही दिया गया और यह पाया गया कि कुत्ता प्रत्येक घंटी की आवाज़ के साथ लार स्रावित कर रहा था | कुते ने सीखे गए व्यवहार का सामान्यीकरण सीख लिया था | अनुबंधन के बाद कन्डिसन्ड उद्दीपक से मिलते जुलते अन्य उद्दीपकों के प्रति सामान अनुक्रिया **सामान्यीकरण** है |

विभेदन क्षमता (Discrimination):जब कई बार मिलती जुलती ध्वनियों की घंटियाँ कुत्ते को सुनाई गयी पर भोजन सिर्फ विशेष आवाज पर दिया गया तो धीरे धीरे कुत्ते ने आवाज़ में विभेदन करना सीख लिया और जिस घंटी की आवाज़ पर उसे भोजन दिया जाता था सिर्फ उसी पर अनुक्रिया करना सीख लिया अन्य पर नहीं अर्थात अनुबंधन का प्रयोग करके दो सामान उद्दीपकों में विभेदन करना भी सिखाया जा सकता है।

क्लासिकल अनुबंधन का प्रयोग करके व्यक्ति को एक अच्छी आदत सिखाई जा सकती है, एक बुरी आदत को विलोपित किया जा सकता है, समान परिस्थितियों में समान अनुक्रिया सिखाई जा सकती है और दो समान दिखनेवाले व्यवहारों में अंतर करना भी सिखाया जा सकता है । विसंवेदीकरण (Desensitization) क्लासिकल अनुबंधन के विलोपन (Extinction) के सिद्धांत पर आधारित है|

व्यवस्थित विसंवेदीकरण (Systematic Desensitization)

व्यवस्थित विसंवेदीकरण (Systematic Desensitization):व्यवस्थित विसंवेदीकरण **क्लासिकल कंडीशनिंग** पर आधारित एक युक्ति है जिसमे किसी उद्दीपक के प्रति व्यक्ति की संवेदना को धीरे धीरे कम करते हुए उसे समाप्त कर देते है फलस्वरूप व्यक्ति की उस ,उद्दीपक के प्रति असामान्य प्रतिक्रिया समाप्त हो जाती है। विसंवेदीकरण का प्रयोग भय को दूर करने हेतु सर्वप्रथम जोसेफ वोल्पे (Joseph Wolpe) जो कि एक दक्षिण अफ्रीकी मनोवैज्ञानिक थे के दशक में किया गया था १९५०के द्वारा ,।विसंवेदीकरण मुख्यतः इस मान्यता पर आधारित है कि ***यदि कोई व्यक्ति किसी उद्दीपक के प्रति चिंता या भय का अनुभव करना सीख सकता है तो उसे उस उद्दीपक के प्रति चिंता या भय का अनुभव न करना भी सिखाया जा सकता है।*** विसंवेदीकरण मुख्यतः भय (Phobia)चिंता विकार ,(Anxiety Disorders) आदि को दूर करने में अत्यंत प्रभावी है । विसंवेदीकरण की प्रक्रिया में **परामर्शी को गहरी विश्राम तकनीकें सिखाई** जाती है। जिस परिस्थिति या उद्दीपक के प्रति व्यक्ति चिंता या भय अनुभव करता है उस स्थिति में वह सामान्य नहीं रह पाता है। ऐसे में वह विश्रांति का अनुभव नहीं कर पाता है । भय अथवा चिंता की परिस्थिति में विश्रांति (Deep Relaxation) एक विपरीत व्यवहार है जो विसंवेदीकरण में व्यक्ति की मदद करता है ।

विसंवेदीकरण के चरण :

विसंवेदीकरण के प्रक्रिया के **मुख्यत: तीन चरण** हैं:

१. **चिंता पदानुक्रम का निर्माण (Creating an Anxiety Hierarchy):**चिंता पदानुक्रम किसी उद्दीपक विशेष के प्रति उन परिस्थितियों का लिखित विवरण होता है जिनके प्रति व्यक्ति में चिंता की तीव्र संवेदना होती है। जो परिस्थिति सबसे ज्यादा परेशान करने वाली होती है उसे इस पदानुक्रम में सबसे नीचे रखते हैं और जो सबसे कम परेशानी पैदा करती है उसे सबसे ऊपर की ओर रखा जाता है। जब विसंवेदीकरण की प्रक्रिया शुरू की जाती है तो सर्वप्रथम सबसे ऊपर की ओर लिखी गयी परिस्थिति से आरम्भ कर के सबसे नीचे अर्थात सबसे ज्यादा भय अथवा चिंता पैदा करने वाली पारिस्थिति की ओर चरणबद्ध तरीके से आगे बढते हैं। चिंता पदानुक्रम का निर्माण, व्यक्ति को उसकी समस्या को **शाब्दिक रूप में लिखने एवं समस्या के विश्लेषण** में मदद करता है। साथ ही यह विसंवेदीकरण की प्रक्रिया का एक बुनियादी ढाँचा (Framework) भी प्रदान करता है।

उदहारण के लिए कई बार बालकों में कक्षा में बोलने के प्रति चिंता (Anxietyof Public Speaking) पाई जाती है। इस लक्ष्य व्यवहार को विसंवेदीकरण के द्वारा सामान्य करने हेतु एक चिंता पदानुक्रम का उदहारण निम्नांकित है:

लक्ष्य व्यवहार: **परामर्शी को कक्षा में बोलने में परेशानी**

- कक्षा मे बोलने से पूर्व रात को घर में
- स्कूल जाते समय रास्ते में
- कक्षा में जाते हुए

- कक्षा के अंदर उपस्थित व्यक्तियों को देख कर
- कक्षा में जाने के बाद किसी को हल्लो बोलने में
- अग्रिम पंक्ति में बैठने में
- वक्ता या श्रोता से आँख मिलाने में
- बोलने की बारी आने से तुरंत पहले
- बोलने के लिए खड़ा होने पर
- बोलते समय

विसंवेदीकरण की प्रक्रिया जो आरम्भ की जायेगी वह पहले स्थान के व्यवहार से शुरू करके चरणबद्ध तरीके से अंतिम व्यवहार तक जाकर पूर्ण होगी ।

गहरी विश्रांति का प्रशिक्षण (Training in Deep Muscle Relaxation):विसंवेदीकरण की प्रक्रिया में परामर्शी को गहरी विश्रांति का प्रशिक्षण अत्यंत आवश्यक है क्योंकि चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थितिओं के प्रति व्यक्ति का विसंवेदीकरण तभी किया जा सकता है जब चिंता पदानुक्रम के हर चरण पर उत्पन्न होने वाली 'चिंता(Anxiety) ' को 'विश्रांति (Relaxation)' से रोक दिया जाये। इसके लिए सर्वप्रथम व्यक्ति को पूर्ण विश्रांति का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए तत्पश्चात उसे **जब आवश्यकता हो तब विश्रांति** का संक्षिप्त प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इसे **गहरी मांसपेशीय विश्रांति (Deep Muscle Relaxation)**की संज्ञा दी जाती है जिसके अंतर्गत अपने स्थान पर मांसपेशिओं को ढीला छोडकर बैठना एवं धीमी परन्तु गहरी साँस लेना शामिल है।

चरणबद्ध तरीके से चिंता पदानुक्रम के पहले चरण से विसंवेदीकरण की क्रिया (Desensitizing the person beginning from the first step):

उदहारण के लिए कोई बच्चा अगर कुत्ते से डरता है तो उसको सर्वप्रथम कुत्ते की तस्वीर दिखाई जा सकती है। तत्पश्चात उसे दूर से कुत्ता दिखाया जा सकता है, फिर धीरे धीरे उसे कुते के पास ले जाया जा सकता है और तब जैसे जैसे उसकी कुते के प्रति संवेदना कम होती जाती है उसे कुते को छूकर देखने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। विसंवेदीकरण प्रायः विभिन्न प्रकार के भय को दूर करने के लिए अत्यंत प्रभावी है। परामर्श में विसंवेदीकरण का प्रयोग करके बच्चों में व्याप्त विभिन्न विषयों के प्रति भय को दूर किया जा सकता है । जैसे बच्चे को गणित से भयबच्चे को विद ,बच्चे को शिक्षकों से भय ,ियालय जाने से दर बच्चे को ,परीक्षा का भय बच्चे में व्याप्त , किसी वस्तु या स्थान विशेष या व्यक्ति विशेष से भय को दूर करने हेतु विसंवेदीकरण एक प्रभावी युक्ति है।

5.6 परामर्श की ऑपरेंट कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांतपर आधारित तकनीकें

परामर्श कीऑपरेंट कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें(Techniques based on Operant Conditioning):

ऑपरेंट कंडीशनिंग का प्रयोग (The Operant Conditioning Experiment): ऑपरेंट कंडीशनिंग के सिद्धांतों का विकास सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक **बी एफ स्किनर (B.F. Skinner)** द्वारा किया गया था। पावलोव का क्लासिकल अनुबंधन का सिद्धांत मुख्यतः अधिगम की प्रक्रिया में जन्मजात प्रवृतियों पर केंद्रित है अतः शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में इसका सीमित उपयोग है ।क्लासिकल अनुबंधन की इस कमी को दूर करने हेतु किए गए प्रयोगों में सबसे महत्वपूर्ण प्रयोग **बी एफ स्किनर का ऑपरेंट कंडीशनिंग** का प्रयोग एवं उसके आधार पर व्युत्पन्न सीखने के सिद्धांत हैं। क्लासिकल कंडीशनिंग मुख्यतः उन व्यवहारों पर आधारित है जो जीवन के लिए आवश्यक हैं परन्तु ऑपरेंट कंडीशनिंग का सिद्धांत उन सभी व्यवहारों पर केंद्रित है जिनके द्वारा कोई व्यक्ति/जीव वातावरण में अनुक्रिया करता अर्थात जिनके साथ कोई व्यक्ति / जीव वातावरण में 'ऑपरेट' करता है।इसी आधार पर इसे **ऑपरेंट कंडीशनिंग** का नाम दिया गया है।वैसे तो ऑपरेंट कंडीशनिंग के सिद्धांत स्किनर द्वारा किये गए कई प्रयोगों से व्युत्पन्न है पर जो आधारभूत प्रयोग था उसका संक्षिप्त विवरण निम्नां कित है:

स्किनर ने अपने प्रयोगों के लिए चूहों एवं कबूतरों को चुना ।स्किनर ने अपने प्रयोग हेतु एक विशेष रूप से बनाये गये बक्से का इस्तेमाल किया जिसे स्किनर बॉक्स का नाम दिया। इस बक्से में यह व्यवस्था थी कि इसमें एक लीवर दबाने पर खाद्य पदार्थ की अल्प मात्रा चूहे को मिल जाती थी। स्किनर ने अपने प्रयोग में एक चूहे को स्किनर बॉक्स मे बंद किया और उसे स्वतंत्र रूप से व्यवहार करने हेतु छोड दिया।आरम्भ में चूहा बॉक्स में अपनी स्वतंत्र अनुक्रिया करता रहा । इस क्रम में चूहे से वह लीवर दब गया और चूहे को थोड़ी खाद्य सामग्री मिल गयी । बाद में यह देखा गया कि चूहे की यादृच्छिक गतिविधियां धीरे धीरे कम होती गयी और अंततः चूहे ने लीवर दबाकर खाद्य पदार्थ प्राप्त करना सीख लिया ।

ऑपरेंट कंडीशनिंग से व्युत्पन्न प्रमुख संकल्पनाएँ:

- पुनर्बलन (Reinforcement)
- शेपिंग (Shaping)

पुनर्बलन (Reinforcement)

ऑपरेंट कंडीशनिंग के प्रयोगों द्वारा निकली अत्यंत महत्वपूर्ण संकल्पना है पुनर्बलन की संकल्पना । चूहे के द्वारा लीवर दबाने पर जो भोजन चूहे को मिलता था उसे स्किनर ने **पुनर्बलन (Reinforcement)**की संज्ञा दी और प्रयोगों के आधर पर निष्कर्ष निकाला कि उद्दीपक और अनुक्रिया के बीच अनुबंधन का कारक पुनर्बलन है । जिस व्यवहार के बाद व्यक्ति को पुनर्बलन मिलता है उस व्यवहार की के होने की संभावना बढ़ जाती है और जिन व्यवहारों को पुनर्बलन नहीं प्राप्त होता वे व्यवहार धीरे धीरे विलोपित हो जाते हैं।

पुनर्बलन का सामान्य अर्थ है किसी क्रिया के बाद उस उद्दीपक को प्रस्तुत करना जो क्रिया की दर का निर्धारक होता है एवं उसकी आवृत्ति को बढ़ा देता है । जो उद्दीपक क्रिया की दर को बढ़ाता है उसे **पुनर्बलक(Reinforcer)** कहते हैं। पुनर्बलन का प्रयोग विशेष आवश्यकता वाले बालकों के शिक्षण एवं प्रशिक्षण में बहुतायत से किया जाता है । पुनर्बलन का प्रयोग करके व्यक्तियों अथवा परामर्शी के अभिप्रेरणा स्तर, अध्ययन अथवा किसी अन्य क्रिया में उनकी रूचि बढाने में , अथवा परामर्श के दौरान उनसे जो व्यवहार परामर्शदाता चाहता है उसे बढ़ाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। साथ ही पुनर्बलन का प्रयोग करके हम अन्य परामर्श तकनीकों की प्रभाविता बढ़ाने के लिए अन्य तकनीकों के साथ उनके पूरक के रूप में किया जा सकता है। विशेष कर मादक द्रव्य

दुरूपयोगएवं नकारात्मक विचारों के कारण उत्पन्न समस्याओं के परामर्श के दौरान पुनर्बलन का प्रयोग अन्य तकनीकों के साथ किया जाना लाभ प्रद होता है।

पुनर्बलन के प्रकार:

पुनर्बलन प्रस्तुत करने के तरीकों के आधार पर इस के मुख्यतः दो प्रकार हैं:

सकारात्मक पुनर्बलन (Positive Reinfoecement)

नकारात्मक पुनर्बलन (Negative Reinforcement)

सकारात्मक पुनर्बलन (Positive Reinfoecement)का तात्पर्य है किसी वांछनीय व्यवहार के तुरंत बाद कोई सकारात्मक उद्दीपक भेंट करना जिससे प्रतिक्रिया की दर और आवृत्ति बढ़े जैसेकिसी बालक को वांछनीय व्यवहार के बाद चाकलेट या बिस्किट देना या शाबाश आदि कहना।

नकारात्मक पुनर्बलन (Negative Reinforcement)का तात्पर्य है किसी वाछंनीय व्यवहार के तुरंत बाद कोई नकारात्मक उद्दीपक वातावरण से हटा लेना जिससे वांछनीय व्यवहार की दर और आवृत्ति बढ़े जैसे:गृहकार्य पूरा कर लेने के बाद किसी बालक को खेलने जाने की इजाजत देना।

अक्सर नकारात्मक पुनर्बलन एवं दंड का समान होने का भ्रम होता है परंतु नकारात्मक पुनर्बलन दंड से अलग है। दंड की स्थिति में बच्चे के किसी अवांछनीय व्यवहार के बाद नकारात्मक / दुखदायक (Aversive Stimulus) भेंट किया जाता है ताकि अवांछनीय व्यवहार में कमी आए जैसे:किसी बच्चे को देर से आने पर कक्षा से बाहर निकाल देना। **यहाँ ध्यातव्य है कि पुनर्बलन सकारात्मक हो या नकारात्मक वह हमेशा वाछंनीय व्यवहार में वृद्धि करता है जबकि दंड अवांछनीय व्यवहार को कम करता है।** एक उदाहरण के द्वारा तीनों का अंतर स्पष्ट किया जा सकता है।

यदि शिक्षक गृहकार्य पूरा करने पर बालक को खेलने का अतिरिक्त समय देता है तो यह **सकारात्मक पुनर्बलन(Positive Reinforcement)**होगा।

यदि गृहकार्य पूरा न करने की स्थिति में शिक्षक छात्र को कहता है कि तुम तभी खेलने जाओगे जब गृहकार्य पूरा कर लोगे। यह **नकारात्मक पुनर्बलन(Negative Reinforcement)** है।

यदि शिक्षक कहता है कि चूंकि तुमने गृहकार्य नहीं किया है इसलिए तुम आज खेलने नहीं जाओगे यह **दंड** है। ध्यान दें उपरोक्त उदाहरण में नकारात्मक पुनर्बलन में बच्चे के पास अपनी गलती सुधारने का अवसर है जबकि दंड में ऐसा नहीं है।

इसके आलावा उद्दीपक की प्रकृति के आधार पर पुनर्बलन दो प्रकार के होते हैं: **प्राथमिक पुनर्बलन(Primary Reinforcement)** और **द्वितीयक पुनर्बलन (Secondary Reinforcement)** प्राथमिक पुनर्बलन में हम प्रायः जो उद्दीपक प्रयोग करते हैं वह मानव की शारीरिक आवश्यकताओं से सीधे जुड़ा होता है। जैसे: छोटे बच्चे को वांछित व्यवहार करने के बाद बिस्किट या खाने पीने की कोई अन्य वस्तु देना।**द्वितीयक पुनर्बलन** में जो उद्दीपक हम बच्चे को प्रदान करते है वह व्यक्ति की शारीरिक आवश्यकताओं से सीधे जुडी नहीं होती हैं पर उनका

सामाजिक महत्व होता है और कई बार उन द्वितीयक पुनार्बलकों के द्वारा हमे प्राथमिक पुनर्बलक की प्राप्ति होने की सम्भावना होती है जैसे किसी वांछित व्यवहार के बाद शाबाश कहना ।

शेपिंग (Shaping)

शेपिंग(Shaping):

स्किनर ने अपने **ऑपरेंट कंडीशनिंग** के अध्ययन के दौरान यह पाया की अगर किसी जीव में कोई व्यवहार जो हम सिखाना चाहते हैं उसके समान थोड़ी अनुक्रिया भी वह करता है तब उपयुक्त पुनर्बलन का प्रयोग प्रत्येक सफल प्रयास पर करते हुए उसे वांछित व्यवहार की आकृति दी जा सकती है।शेपिंग का सामान्य अर्थ है **आकार देना** अर्थात **शेपिंग शिक्षण / प्रशिक्षण/ परामर्श की वह विधि है जिसमे शिक्षक बालक के लक्ष्योन्मुख हर सफल प्रयास को तबतक प्रोत्साहित करता रहता है जब तक की लक्ष्य व्यवहार प्राप्त न कर लिया जाये।**

विशेष बालकों के सन्दर्भ में शेपिंग की यह विधि शिक्षण हेतु / परामर्श हेतु अत्यंत प्रभावी है। उदहारण के लिए शिक्षकों को मानसिक मंद बच्चों को कुछ ऐसे व्यवहार सिखाने पड़ते है जिसे बच्चे ने कभी न किये हो। ऐसे व्यवहारों को सिखाने में **शेपिंग की विधि** अत्यंत प्रभावी सिद्ध हो सकती है। शेपिंग में बच्चे द्वारा दिखाए गए थोड़े परिवर्तन पर भी ध्यान देना और पुरस्कृत करना होगा, जिससे लक्ष्य व्यवहार की ओर बढने में बच्चे को उत्साह मिलता रहे। मानसिक मंद बच्चों के प्रशिक्षण/ परामर्श के लिए शेपिंग के प्रयोग से बच्चे और शिक्षक/ परामर्शदाता दोनो की निराशा की भावना कम की जा सकती है। शिक्षण आनन्द दायक हो जाता है क्योंकि, बच्चे अपने थोड़े से प्रगति के लिए भी प्रोत्साहन पाते है।

5.7 परामर्श की सामाजिक अधिगम पर आधारित तकनीकें

परामर्श की सामाजिक अधिगम पर आधारित तकनीकें(Counselling Techniques based on Social Learning Theory):

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक अल्बर्ट बंडूरा (Albert Bandura) का मानना था व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है अतः वह निरिक्षण, अनुकरण एवं मॉडलिंग के द्वारा समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ सीखते है|

सामाजिक अधिगम की प्रमुख मान्यताएं निम्नांकित हैं:

व्यक्ति समाज के अन्य व्यक्तियों के देख कर उनका व्यव्हार, उनकी अभिवृत्ति एवं उनके परणामों को देखकर सीखता है ।

अधिकांशमानव व्यवहार अवलोकन के द्वारा **मॉडलिंग**के माध्यम से सीखे गए होते हैं।

अल्बर्ट बंडूरा (Albert Bandura) का अधिगम के उद्दीपक अनुक्रिया अनुबंधन से अलग यह मत था कि अधिगम केवल उद्दीपक अनुक्रिया के अनुबंधन का परिणाम नहीं बल्कि इसमें मानव के संज्ञानात्मक क्षमताओं का भी योगदान होता है । बंडूरा का सामाजिक अधिगम का यह सिद्धांत व्यवहारवादी दृष्टिकोण एवं संज्ञानात्मक दृष्टिकोण के मध्य एक सेतु माना जाता है क्यों कि बंडूरा ने अधिगम की प्रक्रिया में मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं एवं व्यवहार

दोनों को बराबर महत्व दिया है और अधिगम को संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों एवं व्यवहारवादियों दोनों के समन्वित परिप्रेक्ष्य में समझने की कोशिश की है।

मॉडलिंग का सावधानी पूर्वक किया गया प्रयोग परामर्श को अत्यंत प्रभावी बना सकता है खासकर उन परिस्थितियों में जब परामर्शी का अभिप्रेरणा स्तर कम हो, परामर्शी हीन भावना अथवा अवसाद से ग्रस्त हो, परामर्शी का आत्म विश्वास एवं आत्म सम्मान कम लग रहा हो या परामर्शी का सामाजिक व्यवहार एवं सामाजिक अनुकूलन कम होने के कारण उत्पन्न समस्याओं पर परामर्श दिया जा रहा हो। उसके अभिप्रेरणा स्तर को बढाने के लिए उसे किसी रोल मॉडल का जीवन वृत बताया जा सकता है, किसी प्रसिद्ध व्यक्ति का उदहारण दिया जा सकता है जिनका आत्म विश्वास आरम्भ में कम था या जो अवसाद से ग्रस्त थे परन्तु उन्होंने अपनी इन कमजोरियों पर विजय पाई और बाद में बड़े बने।

मॉडलिंग या अनुकरणत्मक सीखना (Modelling)

जाने अनजाने हम सभी बहुत से अपने व्यवहार अनुकरण द्वारा सीखते या अर्जित करते है। बच्चे भी अपने अनेक व्यवहार दूसरो को देख-देख कर सीखते रहते है। बच्चे उन लोगों को अनुकरण अधिक करते है जिन्हे वे अधिक महत्व देते है जैसे: शिक्षक, माँ-बाप, दोस्त, फिल्म या टेलीविज़न सितारे आदि। सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक सामाजिक अधिगम के सिद्धांत के अनुसार बच्चे अधिकांश सामाजिक व्यवहार अनुकरण करके सीख जाते हैं। इसी सिद्धांत का प्रयोग करके मॉडलिंग की विधि द्वारा भी कई व्यव्हार बालक सीख जाते हैं और उन्हें सिखाये भी जा सकते हैं। यदि मॉडलिंग पद्धति का उचित प्रयोग करें तो यह प्रभावकारी व्यवहार परिवर्तन ला सकता है।

5.7 विशेष आवश्यकता वाले बालकों के परामर्श की व्यवहारवादी विधियाँ

कार्य विश्लेषण (Task Analysis)

ऑपरेंट कंडीशनिंग के प्रयोगों के आधार पर यह बात भी सामने आई कि जटिल से जटिल कार्य को छोटे छोटे आसान उपखण्डों में बाँट कर, चरणबद्ध तरीके से एक के बाद एक सफलता पूर्वक सिखाया जा सकता है और अंततः वह पूरा कार्य व्यक्ति सफलता पूर्वक कर सकता है । किसी जटिल कार्य को छोटे छोटे उपखंडों में बाँटना तथा उसे एक तार्किक क्रम में जोड़ना **कार्य विश्लेषण** कहलाता है।

शेपिंग

जैसा कि आपने पहले देखा **शेपिंग शिक्षण / प्रशिक्षण/ परामर्श की वह विधि है जिसमे शिक्षक बालक के लक्ष्योन्मुख हर सफल प्रयास को तबतक प्रोत्साहित करता रहता है जब तक की लक्ष्य व्यवहार प्राप्त न कर लिया जाये।** उदाहरण के लिए यदि एक बच्चा "पानी" नही बोल पाता है, परन्तु उसके निकट कुछ "पा पा" जैसा बोल लेता है तो शेपिंग पद्धति का प्रयोग कर कदम पर कदम उसे "पा पा"-- पाई" कहलाते या बुलाते हुए अन्ततः "पानी" बुलवा सकेंगे।

शेपिंग पद्धति को प्रभावी बनाने के तरीके:

व्यवहार प्रशिक्षण के लिए शेपिंग के साथ अन्य पद्धतियों, जैसे प्रोत्साहन, श्रंखलाबद्धता, फेडिंग और माडलिग के साथ करें।

शेपिंग के कदम या चरण इतने बड़े न हो कि बच्चा उसे पूरा ही न कर सकें, और आगे वाले कदम पर न पहुँच पाए साथ ही इतना छोटा न हो कि, अनावष्यक समय बरबाद हो।

शेपिंग पद्धति के किसी भी समय चरणों के आकार में परिवर्तन के लिए तैयार रहे। यह बच्चे की प्रतिक्रिया पर निर्भर करेगा।

5.8 शेपिंग प्रक्रिया के चरण(Steps involved in Shaping)

लक्ष्य व्यवहार चुने।

बच्चे के उस प्रारम्भिक व्यवहार को चुने जो लक्ष्य व्यवहार से किसी रूप से मिलता हो।

प्रभावकारी पुरस्कार का चयन करें।

प्रारम्भिक व्यवहार को पुरस्कृत तब तक करते रहे जब तक वह बार-बार न आने लगे।

लक्ष्य व्यवहार से मिलता जुलता कोई भी प्रयास पुरस्कृत करते रहे।

लक्ष्य व्यवहार जब जब आता है, पुरस्कृत करते रहें।

लक्ष्य व्यवहार को कभी कभी पुरस्कृत करें।

शेपिंग प्रक्रिया का उदाहरण

ऐसा व्यवहार चुने जिसे बच्चा पहले से कर रहा हो, और जो लक्ष्य व्यवहार से मिलता हो। यदि आप का लक्ष्य है बच्चे को गोलाकार आकृति बनाना सिखानाऔर बच्चा पेन्सिल पकड़ लेता है, कागज पर कुछ लकीरें बना लेता है, तब आप शेपिंग पद्धति का प्रयोग कर सकते है।बच्चे के साथ, उसके स्तर पर काम करना प्रारम्भ करेऔर उसे लकीरें खींचने पर पुरस्कार दें । इससे बच्चे को मालूम हो जाएगा किउसके ऐसा करने से पुरस्कार मिलता है।

अब बच्चे को पहले से परिचित व्यवहार से थोड़ा आगे बढ़ाते हुए कुछ गोलाकार या अर्ध गोलाकार रेखाएं बनाना सिखायें और उसे पुरस्कृत करते रहें । इसके बाद बच्चे को लकीरे घसीटने पर कोई पुरस्कार ने दे। पुरस्कृत तभी करे जब बच्चा गोलाकार जैसी आकृति बनाए।

श्रंखलाबद्धता (Chaining)

हमने देखा कि, कई जटिल व्यवहार मानसिक मंद बच्चो को सिखाए जा सकते हैं यदि उन व्यवहारों को सरल और छोट-छोटे टुकड़ों में बाँट कर सिखाया जाए। श्रंखलाबद्धता का सामान्य अर्थ है किसी बड़े, जटिल कार्य के छोटे-छोटे खंडो को एक तार्किक क्रम में जोड़ना। श्रंखलाबद्धता पद्धति का प्रयोग दो प्रकार से किया जा सकता है अग्र श्रंखलाबद्धता (Forward Chaining) और पश्च श्रंखलाबद्धता (Backward Chaining) । अग्र श्रंखलाबद्धता में

पहला उपकार्य पहले और आखिर का सबसे अंत में सिखाते हैं जबकि पश्च श्रंखलाबद्धता में सबसे आखिरी कार्य पहले और सबसे पहला कार्य अंत में सिखाते हैं ।

श्रंखलाबद्धता का विशेष बालकों के शिक्षण /प्रशिक्षण /परामर्श में प्रभावी प्रयोग:

लक्ष्य व्यवहार तक पहुँचने के लिए जिन छोटे-छोटे चरणों को सीखते हुए आगे बढ़ना है, उनका वर्णन करें।

यदि एक व्यवहार उद्देष्य पाँच क्रमबद्ध चरणों में बाँटा गया है तब इसके लिए आप पहले चरण को सिखाएं , फिर दूसरे को और तब दोनो चरणों में उचित संबन्ध भी दर्शायें । इसी प्रकार जब तीसरा चरण सिखाएंगे तो दूसरे और तीसरे चरण में स्वाभाविक सम्बन्ध अवश्यदर्शायें । आगे इसी प्रकार प्रत्येक चरण को आपस में संबन्धित करते हुए दूसरे की कड़ी को मजबूत करते हुए व्यवहार लक्ष्य पूरा किया जा सकता है।

प्रत्येक चरण पर उचित पुरस्कार दे।

श्रंखला में जिस क्रम में चरण बनाए गए हो उन्ही चरणों में सिखाएँ।

अगले चरण की ओर तभी बढ़े जब उसने पहले चरण को सीख लिया हो।

सहायता करना (Prompting)

विशेष आवश्यकता वाले बालकों को परामर्श, शिक्षण अथवा प्रशिक्षण के दौरान उनकी सीमित मानसिक अथवा शारीरिक क्षमता के कारण सहायता की आवश्यकता पड़ सकती है परन्तु यदि आप नियमित सहायता देते रहे तो बच्चा कभी भी उस कार्य को स्वतंत्रता पूर्वक नहीं कर पायेगा इसलिए सहायता, बालक की आवश्यकता, उसकी क्षमता , कार्य का कठिनाई स्तर इत्यादि को ध्यान में रख कर दिया जाना चाहिए और उसे धीरे धीरे कम करते हुए समाप्त कर देना चाहिय ताकि वह अपना कार्य स्वतंत्र रूप से कर सके सहायता के विभिन्न प्रकारों में शारीरिक सहायता (Physical Prompt or PP) , इशारे के द्वारा सहायता (Gestural Prompt or GP) , शाब्दिक सहायता (Verbal Prompt or VP) एवं सांकेतिक सहायता(Occassional Cues or OC) प्रमुख हैं जिनमे से कोई एक अथवा मिश्रित प्रयोग आवश्यकता के अनुसार किया जाना चाहिए

5.9 इकाई सारांश

इस इकाई में आपने देखामनोविज्ञान के विकास के क्रम में मनोविज्ञान के अध्ययन क्षेत्र के बारे में कई विचारधाराएँ सामने आई जिनमे प्रमुख हैं संरचनावाद:(Structuralism) ,प्रकार्यवाद (Functionalism),मनोविश्लेषण वाद (Psychoanalysis) ,व्यवहारवाद (Behaviourism) ,गेस्ताल्ट वाद (Gestalt Psychology) ,संज्ञान वाद (Cognitivism) एवं मानवतावादी दृष्टिकोण (Humanistic Psychology)। परामर्श हेतु प्रयुक्त तकनीकें भी मनोविज्ञान के विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में बांटी गयी है: जैसे संज्ञानात्मक तकनीकें , व्यवहारवादी तकनीकें, मनोविश्लेषण वादी तकनीकें, आदि परन्तु एक परामर्शदाता किसी एक उपागम पर आधारित तकनीक का प्रयोग करके प्रभावी परिणाम नहीं प्राप्त कर सकताइस लिए अक्सर परामर्श के दौरान उसे , एकाधिक उपागमों पर आधारित विभिन्न तकनीकों का मिश्रित प्रयोग करना चाहिये।

व्यवहारवाद के जनक जे बी वाटसन को माना जाता है व्यवहारवादी प्रमुख मनोवैज्ञानिकों में थार्नडायक ,स्किनर , ब्रूनर आदि प्रमुख हैं व्यवहारवादियों के अनुसार ,पावलोवमानव व्यवहार प्रायः सीखे गए होते हैं एवं प्रायः परिस्थितियों एवं वातावरणीय कारकों पर निर्भर होते हैं। साथ ही सीखना उद्दीपक और अनुक्रिया के अनुबंधन का परिणाम है और अनुबंधन की जिस प्रक्रिया का प्रयोग करके व्यवहार सीखा जाता है उसी प्रक्रिया का प्रयोग करके उस व्यवहार को विलोपित भी किया जा सकता है ।परामर्श की व्यवहारवादी तकनीकों में प्रमुख है:**परामर्श की क्लासिकल कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें यथा ,व्यवस्थित विसंवेदीकरण ,परामर्श की ऑपरेंट कंडीशनिंग के आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें यथा पुनर्बलन शेपिंग आदि तथा ,परामर्श की सामाजिक आधिगम सिद्धांत पर आधारित तकनीकें जैसे मॉडलिंग आदि**। विशेष आवश्यकता वाले बालकों के परामर्श के लिए प्रमुख व्यवहार वादी तकनीकें हैं **कार्य विश्लेषण** (Task Analysis) ,**शेपिंग ,श्रंखलाबद्धता (Chaining) ,**सहायता करना (Prompting) आदि। यदि हम व्यवहारवादी तकनीकों का उपयुक्त प्रयोग परामर्श की अन्य तकनीकों के साथ करें तो परामर्श प्रभावी एवं अपेक्षित परिणाम प्रदान करने वाला हो सकता है ।

5.10 महत्वपूर्ण शब्द एवं पद

अनकंडीशंड या प्राकृतिक उद्दीपक (Unconditionedor natural Stimulus):वे उद्दीपक जिनके प्रति कोई जीव प्राकृतिक अनुक्रिया (Natural Response) देता है उसे प्राकृतिक उद्दीपक कहते हैं- जैसे उपरोक्त प्रयोग में भोजन जो कुत्ते में प्राकृतिक अनुक्रिया लार का टपकाना उत्पन्न करता है ।

तटस्थ उद्दीपक (Neutral Stimulus):ये वे उद्दीपक हैं जो प्रायः किसी जीव में परिस्थिति विशेष में कोई अनुक्रिया उत्पन्न नहीं करते वे उस परिस्थिति में तटस्थ उद्दीपक (Neutral Stimulus) माने जाते हैं जैसे उपरोक्त प्रयोग में घंटी एवं तेज प्रकाश।

सामान्यीकरण(Generalization): अनुबंधन के बाद कन्डिसन्ड उद्दीपक से मिलते जुलते अन्य उद्दीपकों के प्रति सामान अनुक्रिया **सामान्यीकरण** है |

कंडीशंड उद्दीपक (Conditioned Stimulus): वे तटस्थ उद्दीपक जिन्हें प्राकृतिक उद्दीपकों के साथ कुछ समय तक प्रस्तुत करने पर धीरे धीरे प्राकृतिक अनुक्रिया उत्पन्न करने में सक्षम हो जाते हैं

पुनर्बलन (Reinforcement):पुनर्बलन (Reinforcement) का सामान्य अर्थ है किसी क्रिया के बाद उस उद्दीपक को प्रस्तुत करना जो क्रिया की दर का निर्धारक होता है एवं उसकी आवृत्ति को बढ़ा देता है ।

किसी जटिल कार्य को छोटे छोटे उपखंडों में बाँटना तथा उसे एक तार्किक क्रम में जोड़नाकार्य विश्लेषणकहलाता है ।

व्यवस्थित विसंवेदीकरण (Systematic Desensitization):व्यवस्थित विसंवेदीकरण **क्लासिकल कंडीशनिंग** पर आधारित एक युक्ति है जिसमे किसी उद्दीपक के प्रति व्यक्ति की संवेदना को धीरे धीरे कम करते हुए उसे समाप्त कर देते है फलस्वरूप व्यक्ति की उस ,उद्दीपक के प्रति असामान्य प्रतिक्रिया समाप्त हो जाती है ।

शेपिंग(Shaping): शेपिंग (Shaping) का सामान्य अर्थ है आकार देना अर्थात शेपिंग शिक्षण / प्रशिक्षण/ परामर्श की वह विधि है जिसमे शिक्षक बालक के लक्ष्योन्मुख हर सफल प्रयास को तबतक प्रोत्साहित करता रहता है जब तक की लक्ष्य व्यवहार प्राप्त न कर लिया जाये।

सकारात्मक पुनर्बलन (Positive Reinfoecement)सकारात्मक पुनर्बलन (Positive Reinfoecement)का तात्पर्य है किसी वांछनीय व्यवहार के तुरंत बाद कोई सकारात्मक उद्दीपक भेंट करना जिससे प्रतिक्रिया की दर और आवृत्ति बढ़े जैसेकिसी बालक को वांछनीय व्यवहार के बाद चाकलेट या बिस्किट देना या शाबाश आदि कहना।

नकारात्मक पुनर्बलन (Negative Reinforcement): नकारात्मक पुनर्बलन (Negative reinforcement)का तात्पर्य है किसी वाछंनीय व्यवहार के तुरंत बाद कोई नकारात्मक उद्दीपक वातावरण से हटा लेना जिससे वांछनीय व्यवहार की दर और आवृत्ति बढ़े जैसे:गृहकार्य पूरा कर लेने के बाद किसी बालक को खेलने जाने की इजाजत देना।

5.11 अभ्यास प्रश्न

1. परामर्श की व्यवहारवादी उपागम पर आधारित तकनीकों की चर्चा करें
2. व्यवस्थित विसंवेदीकरण क्या है ? इसके प्रमुख चरणों को उदहारण के साथ समझाएं !
3. पावलोव का क्लासिकल कंडीशनिंग का प्रयोग क्या था? परामर्श में इसका निहितार्थ बताइए|
4. स्किनर का क्लासिकल कंडीशनिंग का प्रयोग क्या था? परामर्श में इसका निहितार्थ बताइए|
5. विशेष बालकों के परामर्श की व्यवहारवादी विधियों की चर्चा करें
6. टिप्पणी लिखिए:-
7. पुनर्बलन, शेपिंग , कार्य विश्लेषण, चेनिंग, प्रोम्प्ट

5.12 सन्दर्भ ग्रन्थ .

- अरुण कुमार सिंह (2005) सामान्य मनोविज्ञान, भारती भवन पटना से प्रकाशित
- रिचर्ड नेल्सन जोंस (2003) बेसिक काउंसलिंग स्किल्स, सेज प्रकाशन से प्रकशित
- रिचर्ड नेल्सन जोंस (2012) थ्योरी एंड प्रैक्टिस ऑफ़ काउंसलिंग एंड थेरेपी,सेज प्रकाशन से प्रकाशित
- रचना शर्मा (2006) उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान अटलांटीक प्रकाशन, नयी दिल्ली से प्रकाशित
- एस के मंगल (2007), शिक्षा मनोविज्ञान, पी एच आई लर्निंग नयी दिल्ली से प्रकाशित
- शाहीद हसन, नैदानिक मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास नयी दिल्ली से प्रकाशित
- हेवार्ड डब्ल्यू.जे., (2006), काउंसिल आफ एक्सेप्सनल चिल्ड्रेन सेप्रकाशित ।
- ल्यूकेसान एवं अन्य, (1992), मेंटल रिटार्डेशन, क्लासिफिकेशन एंड सिस्टम आफ सपोटर्स (9वीं मैनुअल)

रीता पेशवारिया एवं अन्य, बेसिक एम.आर. शिक्षक मैनुअल, NIMH, सिकंदराबाद से प्रकाशित।

डिसेविलिटी स्टेटस आफ इंडिया (2012) भारतीय पुनर्वास परिषद् से प्रकाषित।

यूनेस्को, (2001), अंडरस्टैडिंग एंड रेस्पाडिंग टू चाइल्ड नीड्स इन इनक्लूसिव क्लासरूम, यूनेस्को से प्रकाषित।

मंगल एस.के., (2007), विषिष्ट बालक, प्रेंटिल हाल आफ इंडिया से प्रकाशित।

हालाहन डी.पी. एंड काफ मैन जे.एम., (2006), एक्सेप्सनल चिल्ड्रेन इंट्रोडक्शन तो स्पेशल एजुकेशन , पार्सन एजुकेशन से प्रकाशित।

****

इकाई - 6

परामर्श : अस्तित्वावादी एवं मानवतावादी दृष्टिकोण

(Existentialist and Humanistic of counseling)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य (Objective)

6.1 प्रस्तावना(Introduction)

6.2 अस्तित्ववाद यत्यसंप्र : (Existentialism: Concept)

6.2 अस्तित्ववादी चिकित्सा (Existential therapy)अस्तित्ववादी चिकित्सा विधि लोगों थेरपी : (Existentialist therapy :Logo- therapy)

6.3 मानवतावाद संप्रत्यय :(Humanism: Concept)

6.4 मानवतावादी चिकित्सा (Humanistic therapy)

6.5 मानवतावादी चिकित्सा : गेस्टाल्ट (Humanistic Therapy :Gestalt Therapy)

6.6 क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा (Client- Centered therapy)

6.7 सारांश (Summary)

6.8 शब्दावली

6.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.10अतिरिक्त संदर्भ ग्रंथ सूची

6.0 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- अस्तित्ववाद के संप्रत्यय को समझ सकेंगे |
- अस्तित्ववादी चिकित्सा के लाभ एवं नुकसान को समझ सकेंगे |
- मानवतावाद के मूल भाव को समझ सकेंगे |
- मानवतावादी चिकित्सा के लाभ एवं नुकसान को समझ सकेंगे |

6.1 प्रस्तावना (Introduction):

परामर्शन एवं निर्देशन के लिए विभिन्न प्रकार के तरीको का इस्तेमाल व्यक्ति विशेष या समूह के आवश्यकताओं के अनुरूप किया जाता है नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने समस्या की गंभीरता को देखते | जब इन सारी समस्याओं पर विचार किया जा |हुए उसके अनुरूप समाधान खोजने की वकालत की रहा था तभी पूरे दुनिया में अस्तित्ववाद एवं मानवतावाद को लेकर बहस हो रही थी अस्तिवावाद एवं | मानवतावाद के कुछ सिद्धांतों को लेकर मनोवैज्ञानिकों ने निर्देशन एवं परामर्श के तकनीकें भी विकसित | की जिसके बारे में हम इस इकाई में हम विस्तार से पढेंगे

6.2 अस्तित्ववाद : संप्रत्यय (Existentialism: Connotation)

अस्तित्ववाद पाश्चात्य-दर्शन की एक आधुनिक शाखा है। इसमें प्रस्तुत और यथार्थ अस्तित्व का ही सबसे अधिक महत्त्व माना जाता है और आस्तिकता, तर्क, परम्परा आदि को व्यर्थ समझकर मानव-जीवन को भी निरर्थक माना जाता है, और कहा जाता है कि मनुष्य को संसार में दर्शक के रूप में ही रहना चाहिए| 1940 व 1950 के दशक में अस्तित्ववाद पूरे यूरोप में एक विचारक्रांति के रूप में उभरा। यूरोप भर के दार्शनिक व विचारकों ने इस आंदोलन में अपना योगदान दिया है। इनमें ज्यां-पाल सार्त्र, अल्बर्ट कामू व इंगमार बर्गमन प्रमुख हैं।अस्तित्वादी के अनुसार दुख और अवसाद को जीवन के अनिवार्य एवं काम्य तत्त्वों के रूप में स्वीकार करना चाहिए। परिस्थितियों को स्वीकार करना या न करना व्यक्ति की ही इच्छा पर निर्भर है। इनके अनुसार व्यक्ति को अपनी स्थिति का बोध दुख या त्रास की स्थिति में ही होता है, अतः उस स्थिति का स्वागत करने के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। दास्ताएवस्की ने कहा था- ''यदि ईश्वर के अस्तित्व को मिटा दें तो फिर सब कुछ (करना) संभव है।''

कालांतर में अस्तित्ववाद की दो धाराएं हो गई।

1- इश्वरवादी अस्तित्ववाद और
2- अनिश्वरवादी अस्तित्ववाद

6.3 अस्तित्ववादी चिकित्सा : संप्रत्यय (Existential therapy : Concept)

इस चिकित्सा विधि के प्रमुख समर्थक विन्स्विंगर)Binswanger) एवं एन्जिल तथा एलेंवर्गर(May,Angal & Ellenberger) है इस चिकित्सा पद्धति मे रोगी के उपचार या चिकित्सा मे कोई | विधि तो नहीं अपनाई जाती है किन्तु इसमें प्रत्येक व्यक्ति के वैयक्तिकता तथा उसके मूल्यों -निश्चित कार्य |एवं भावों को समजकर रोओगी के स्वास्थकर अस्तित्व के लिए एक वातावरण तैयार किया जाता है यद्यपि अस्तित्ववाद मे व्यक्ति के स्वतंत्र इच्छाओं तथा उत्तरदायित्व पर अधिक बल डाला जाता है | इसचिकित्सा विधि के प्रमुख समर्थक बिन्स्बेंगर)Binswanger,1942) तथा मेएन्जिल एवं एलेनवर्गर ,

(May,Angal & Ellenberger,1958) हैं इस चिकित्सा विधि में रोगी के उपचार या |चिकित्सा मे कोई निश्चित कार्य) विधि- procedure) तो अपनायी नहीं जाती है परन्तु इसमे प्रत्येक व्यक्ति की वैयक्तिकता (uniqueness) तथा उसके मूल्यों एवं भावों(feelings) को समझाकर रोगी के स्वस्थकर अस्तित्व के लिए एक माहौल तैयार किया जाता हैं अस्तित्वाद |(existentialism) मे व्यक्ति के स्वतंत्र इच्छाओ (Free will) तथा उतरदायित्व (responsibility)पर अधिक बल डाला जाता हैइसमे उन , चिंताओं को भी महत्वपूर्ण माना गया है जिसे व्यक्ति अपनी जिंदगी मे प्रमुख पसंद या चयन(choice) करने मे अनुभव करता है ऐसे पसंद या चयन को |अस्तित्ववादी चयन)existential choice) कहा जाता हैं किसी विशेष नौकरी को करना या उसे न |पर व्यक्ति का अस्तित्व निर्भर करता हैं ऐसे चयन | अस्तित्ववादी मनोवैज्ञानिको का मत है कि |करना ऐसे ही अस्तित्ववादी चयन का एक उदाहरण है वास्तव में जीवित रहने के लिएव्यक्ति को उन चिन्ताओ से अवगत करना ही पड़ता है जो अस्तित्ववादी चयन (existential choice) से उत्पन्न होते हैं अस्तित्ववादी चिंता निम्नलिखित स्त्रो |तों से उत्पन्न होता है |

- यह चिंतन कि हमलोग एक दिन मर जायेंगे, अस्तित्ववादी चिंता उत्पन्न करता है|
- यह चिंतन कि हमलोग अकेले हैं,अस्तित्ववादी चिंता उत्पन्न करता है|
- यह चिंतन कि हमलोग को अपने निर्णय लेना हैं, उसके अनुरूप कार्य करना हैं तथा फिर उसके परिणामों का भुगतना है |
- यह चिंतन कि आकस्मिक परिस्तिथियों जैसे दुर्घटना आदि के साथ हम लोग लड़ नही सकते हैं , अस्तित्ववादी चिन्ता उत्पन्न करता है |
- यह चिंतन कि हमें अपनी जिंदगी के सवारने कि जवाबदेही हम पर है , अस्तित्ववादी चिंतन उत्पन्न करता हैं

अस्तित्ववादी चिकित्सा का उद्देश्य व्यक्ति को उक्त तरह से मुक्त करना है ऐसा करने के लिए यहाँ | चिकित्सा रोगी के चेतन तथा उपचेतन क्रियाओं के अध्ययन तक अपने आप को बांधकर नहीँ रखते हैं गिर्द की वास्तविकता पर ध्यान केन्द्रित कर- वे रोगी को उसके इर्दबल्किके व्यक्ति को उसके आंतरिक पहलुओं का पुननिर्माण (reconstruct) करने में मदद करते हैं इसके लिए चिकित्सक विन्सवैन्ग्रर |)Winswanger,1942) द्वारा विकसित विधि जिसे) 'डेजिन एनालिसिस ' Dasein analysis or existential analysis) की संज्ञा दी गयी हैं का भी अनुसर ,ण करते है |

अस्तित्ववादी चिकित्सा के प्रमुख लक्ष्य)goal) निम्नाकिंत हैं –

- अस्तित्ववादी चिकित्सा रोगी को परिघटनात्मक **दृष्टिकोण** (phenomenological frame or references) अपनाने की सलाह देकर उसके प्रतिसमर्थन एव तदनुभूति (empathy) दिखाते हैं | इसके बाद चिकित्सक उसे अपना व्यवहार , भाव , संबंध एवं जिंदगी के सही अर्थ को समझते हैं | चिकित्सक क्लायंट को गत् एवं वर्तमान पसंद से रोगों का सामना कराते हैं तथा उसका स्पष्टीकरण करते हैं | इन दोनों में से रोगी के वर्तमान पसंद को वे अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं |

- अस्तित्ववादी चिकित्सा रोगी या क्लायंट को एक खुला एवं स्नेहपूर्ण वातावरण में अपने आप को दूसरों से सबंधित करने की पर्याप्त प्रेरणा देता है ताकि रोगी का यह चिंता दूर हो सके कि वह अकेला है |
- अस्तित्ववादी चिकित्सक का लक्ष्य रोगी या क्लायंट में वर्द्धन तथा उचित चयन के लिए छिपे अन्त: शक्ति (potential) से उसे अवगत करना है | अस्तित्ववादी चिकित्सा में यह मानकर चिकित्सक चलते हैं कि क्लायंट प्रत्येक क्षण अपना अस्तित्व नये ढंग से उत्पन्न करता है ताकि वह अर्थपुर्ण ढंग से जीवित रह सकें|

परमर्श तकनीक के रूप में अस्तित्ववादी चिकित्सा के अपने गुण (Merits) एवं दोष (Demerits) हैं | इसके प्रमुख गुण (Merits) इस प्रकार हैं –

- अस्तित्ववादी चिकित्साएक ऐसी चिकित्सा है जिसमे रोगी को अपने भीतर छिपे अन्त: शक्ति से अवगत कराकर उसे अर्थपूर्ण ढंग से जीवित रहने की प्रेरणा दी जाती है|
- तिल्लिक (Tillich,1992) के अनुसार अस्तित्वादी चिकित्सा का एक विशेष लाभ यह है कि इस तरह की चिकित्सा में क्लायंट अपने अस्तित्व को वास्तविक ढ़ग से समझने की कोशिश करता है इसलिए इससे अस्तित्वादी स्नायुविकृति (existential neurosis) के लक्षणों को स्थायी रूप से दूर करने में काफी मदद मिलती है |

इसमें बावजूद अस्तित्वादी चिकित्सा के कुछ दोष)demerits) है जो इस प्रकार हैं –

- अस्तित्वादी चिकित्सा का सबसे प्रमुख आलोचना के रूप में यह नहीं स्पष्ट है कि क्लायंटमें वर्द्धन उत्पन्न करने के लिए किन – किन तरह के चिकित्सीय प्रविधियों का उपयोग किया जाएगा| इससे चिकित्सा की वैधता संदेह के घेरे में आ जाती है|
- अस्तित्वादी चिकित्सा के स्पष्ट एवं ठोस संक्रियाओ की जिसकी माध्यम से वैज्ञानिक शोध किये जा सकते हैं , की कमी है | यद्यपि अस्तित्वादी चिकित्सक कई सफल केसेज का प्रकाशन कर चुके हैं , इस क्षेत्र में कोई शोध नहीं किया गया है |
- अस्तित्वादी चिकित्सा के नजर में आधुनिक विज्ञान मानव में मानवीय मूल्यों को कम करता है | अत: इन लोगों का विश्वास हैं कि विज्ञान का व्यक्ति पर उपयोग करने से व्यक्ति की वैयक्तिकता (uniqueness) समाप्त हो जाता है | इससे मानवीय चिंता समाप्त होकर और बढ़ सकती है |
- अस्तित्वादी चिकित्सा क्लायंट के व्यक्तिगत अनुभूतियों पर निर्भर करता है | आलोचकों का मत है कि क्लायंट का व्यक्तिगत अनुभूति अनोखा (unique) है , चिकित्सक यह कैसे समझ जाते हैं कि वे रोगी के इस आतंरिक अनुभूति को ठीक ढंग से जान पाते हैं जैसा कि वह स्वयं जानता है ? इस प्रश्न का उत्तर अस्तित्वादी चिकित्सा में नहीं मिल पाता है |
- कुछ आलोचकों का मत है कि अस्तित्वादी चिकित्सा को एक चिकित्सा प्रविधि न कहकर चिकित्सक द्वारा अपनाया गया एक सामान्य मनोवृत्ति (attitude) कहना

अधिक उचित है | इस पर रोल्लो मे (Rollo May, 1961) ने बहुत ही सटीक टिप्पणी की हैजो इस प्रकार हैं , "अस्तित्वादी चिकित्सा चिकित्सक की एक पद्धति नहीं है बल्कि मनुष्यों की संरचना को तथा उनकी अनुभूतियों जो सभी प्रविधियों का आधार होती है , को समझने से संबंधित होता है|"

इन दोषों के बावजूद अस्तित्वादी चिकित्सा का मौलिक तथ्य कि व्यक्ति का अस्तित्व सतत रूप से परिमार्जित हो रहा है तथा अन्य दूसरे विचारधारा के चिकित्सक के लिए एक मुख्य आधार है |

6.4 अस्तित्ववादी चिकित्सा विधि : लोगो थेरेपी (Existentialist therapy:Logo- therapy)

लोगो चिकित्सा की प्रविधि विक्टर फ्रेंक्ल(Victor Frankl,1963,1965,1967) द्वारा विकसित की गयी है | चिकित्सा की यह अस्तित्वात्मक सिद्धांतों पर आधारित है| अत: कुछ लोगों ने इसे अस्तित्वात्मक चिकित्सा(existential therapy) का ही एक भाग माना है|

लोगो चिकित्सा(logotherapy) में 'लोगो'(logo) से तात्पर्य 'अर्थ' (meaning) से होता है| अत: इसे शब्दिक भाषा में अर्थ पर आधारित चिकित्सा(therapy of meaning) कहा गया है| इस तरह की चिकित्सा में व्यक्ति की जिन्दगी में अर्थहीनता के भाव से उत्पन्न होने वाली समस्याओं एवं चिन्ताओ को दूर करने की कोशिश की जाती है| दूसरे शब्दों में, इस तरह की चिकित्सा का संबंध व्यक्ति के अस्तित्ववादी समस्याओं(existential problems) को दूर करना होता है क्योकि ऐसी समस्याएं आध्यात्मिक(spiritual)एव मनोवैज्ञानिक तथ्य उत्पन्न करती है| इस तरह की चिकित्सा में रोगी के गत जिन्दगी की ऐतिहासिक पुनर्संरचना पर जोर न डालकर उसके समकालीन आध्यात्मिक समस्याओं और भविष्य या आगे के अर्थ (implication) को समझने पर बल डाला जाता हैं| फ्रेंक्(frankl) के अनुसार व्यक्ति का सबसे प्रमुख अभिप्रेरक 'अर्थ-की-इच्छा'(will-to-meaning) होता है|'अर्थ-की-इच्छा' से तात्पर्य अपनी जिन्दगी के आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक पहलुओं के अर्थ एवं संगतता(relevance)को वास्तिविक ढंग से समझकर उसके अनुरूप व्यवहार करने से होता है| फ्रेंक्ल का यह मानना है कि व्यक्ति में यह अभिप्रेरक आत्म-सिद्धि (self-actualisation) का अभिप्रेरक एवं तनाव कम करने की इच्छा से अधिक प्रबल होता है| जब व्यक्ति की इस आवश्यकता या अभिप्रेरक की संतुष्टि नहीं होती है तो इससे अस्तित्वात्मक कुंठा(existential frustration) उत्पन्न होती है और इससे व्यक्ति की जिन्दगी में अर्थहीनता(meaningless) के भाव की उत्पति हो जाती है जिसे फ्रेक्ल ने अस्तित्वात्मक रिक्तता(existential vaccum)कहा है | इस तरह के अस्तित्वात्मक रिक्तता का भाव आधुनिक जटिल जिन्दगी मे बढ़ गयी है और दिनोदिन बढती जा रही है| इस तरह का भाव मन:स्नायुविकृति (psychoneurosis) तथा मनोविकृति (psychosis) के सथाभी हो सकता है या दोनों की अनुपस्थिति में भी व्यक्ति में हो सकता है| शायद यही कारण है कि फ्रेक्ल ने यह स्पष्ट कर दिया है कि लोगोचिकित्सा मनश्चिकित्सा का एक प्रतिस्थापन या प्रतिस्थायी(substitute) न होकर एक संपूरक(complement) होता है|

फ्रेंक्ल के अनुसार जब व्यक्ति की अपनी जिन्दगी की आध्यात्मिक(spiritual) या दार्शनिक समस्याओं एवं स्नेह(love) तथा जीवन-मृत्यु आदि से संबंधित अर्थ (meaning) में दिशा-विहीनता उत्पन्न हो जाती है,तो इससे अस्तित्वात्मक कुंठा उत्पन्न हो जाता है जिसे व्यक्ति पहले अपने स्तर से दूर करने की कोशिश करता है| जब व्यक्ति में ऐसी कुंठा की मात्रा अत्यधिक हो जाती है तो उससे स्नायुविकृति लक्षणों(neurotic symptoms)की उत्पति होती हैं जिसे फ्रेक्लने न्युजेनिक स्नायुविकृति (neuogenic neurosis) कहा है| इस तरह की स्नायुविकृति में सचमुच में अंतर्नोद (drives) अभिप्रेरक या मूल प्रवृत्तियों (instincts) के बीच किसी तरह का संघर्ष(conflict) नहीं पाया जाता है बल्कि व्यक्ति के नैतिक सिद्धांतों का एक टकराव पाया जाता है| ऐसे टकराव से संघर्षों को दूर करना लोगोचिकित्सा का मुख्य उदेश्य है

6.5 मानवतावाद : संप्रत्यय (Humanism: Concept)

मानवतावाद मानव मूल्यों और चिंताओं पर ध्यान केंद्रित करने वाला अध्ययन, दर्शन या अभ्यास का एक दृष्टिकोण है। इस शब्द के कई मायने हो सकते हैं, उदाहरण के लिए:

1. एक ऐतिहासिक आंदोलन, विशेष रूप से इतालवी पुनर्जागरण के साथ जुड़ा हुआ।
2. शिक्षा के लिए एक ऐसा दृष्टिकोण जिसमें छात्रों को जानकारी देने के लिए साहित्यिक अर्थों का उपयोग होता है या मानविकी पर ध्यान केंद्रित किया जाता है।
3. दर्शन और सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में कई तरह के दृष्टिकोण जो 'मानव स्वभाव' के कुछ भावों की पुष्टि करता है .(विरोध के विपरीत-मानवतावाद)
4. एक धर्मनिरपेक्ष विचारधारा जो नैतिकता और निर्णय लेने की क्षमता के एक आधार के रूप में विशेष रूप से अलौकिक और धार्मिक हठधर्मिता को अस्वीकार करते हुए हित, नैतिकता और न्याय का पक्ष लेता है।

6.7 मानवतावादी चिकित्सा (Humanistic therapy)

मानवतावादी चिकित्सा एक सूझ)केन्द्रित-insight-focused) चिकित्सा है जो इस बात की पूर्वकल्पना करता है की किसी भी असामान्य का उपचार व्यक्ति कि आवश्यकता तथा प्रेरणा)moitivation) के स्तर मे वृद्धि करके की जा सकती हैं | इस चिकित्सा पद्धति में व्यक्ति को सर्जनात्मक तथा उत्तरोत्तर आगे बढने वाला प्राणी माना जाता है जो अन्य बातें समान रहने पर, अपने भीतर छिपे अन्तशक्ति का अनुभव करके अपने : व्यवहार का चेतन रूप से मार्गनिर्देशन भी करते रहता है जब उसके इस समझ में गडबडी उत्पन्न होती है या उसके अस्तित्व पर प्रतिबंध लगता है, तो व्यक्ति में असामान्य व्यवहार की उत्पति है |

- मानवतावादी चिकित्सा का प्रमुख सार(themes) एवं लक्ष्य को इस प्रकार उल्लिखित किया जा सकता है—इस चिकित्सा में क्लायंट को एक व्यक्ति के रूप में केंद्रित करने पर पर्याप्त बल डाला जाता है इसमें चिकित्सक क्लायंट या रोगी को अपने अनोखे अन्तःशक्ति(potential)को पहचानने एवं उस तक पहुँचने में उसे मदद करते हैं | यहाँ पूर्वकल्पना यह होती है कि जब

क्लायंट अपनी अन्त:शक्ति के करीब होगा, तो वह बिना किसी के मदद के ही जिंदगी की समस्याओ का समाधान कर सकने में सफल होगा

- इस चिकित्सा में क्लायंट तथा चिकित्सक के बीच के सबंध को एक प्रधान कारक माना जाता है जिसके सहारे वर्द्धन(growth) होती है| यह एक वास्तविक अन्तवैयक्तिक सबंध होता है जो क्लायंट में ऐसे मानवीय अनुभूतियों को उत्पन्न करता है जो अपने आप क्लायंट में वर्द्धन लाता है |
- इस तरह की चिकित्सा की सारभूत कल्पना यह होती है कि क्लायंट की बीती अनुभूतियों को परिवर्तित नहीं किया जा सकता है तथा वह क्लायंट के भविष्य के लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं होती है जितना कि वर्तमान होता है इसलिए इस तरह की चिकित्सा में चिकित्सीय संबंध के तत्कालीन अनुभूतियों को (immediate experience) की काफी महत्वपूर्ण माना जाता है |
- इस चिकित्सा में यह भी पूर्वकल्पना की जाती है कि अधिकतर क्लायंट सामान्य(normal) लोगो के ही समान होते हैं | क्लायंट वातावरण के प्रति अपने विशेष प्रत्यक्षण के अनुरूप ही व्यवहार करते हैं | अत: चिकित्सक वातावरण पर रोगी की नजरों से देखकर ही उनकी समस्याओं को समझने की कोशिश करते हैं |

6.8 मानवतावादी चिकित्सा : गेस्टाल्ट थेरेपी (Humanistic Therapy :Gestalt Therapy)

गेस्टाल्ट चिकित्सा के प्रतिपादक फ्रेडरिक एस) पर्ल्स (फिर्ज) .Frederich S. (Fritz) Perls, (1967,1970है | 'गेस्टाल्ट' (Gestalt) शब्द का अर्थ होता है) सम्पूर्ण -whole)| गेस्टाल्ट चिकित्सा मन तथा शरीर की एक)unity) पर बल डालता है जिसमें चिन्तन, भाव तथा कार्य के समन्वय)intergration) की आवश्यकता पर सर्वाधिक बल डाला जाता हैं|

रोजर्स)Rogers) के समान पर्ल्स का यह विश्वास था कि व्यक्ति में एक जन्मजात अच्छाई)innate goodness)होता है तथा उसके इस प्रकृति कों अभिव्यक्त करने का अवसर दिया जाना चाहिए| जब व्यक्ति किसी कारण से इस जन्मजात गुण की अभिव्यक्ति से वंचित होता है या यह गुण कुंठित हो जाता है, तों मनोवैज्ञानिक समस्याएं)psychological problems) की उत्पत्ति होने लगती है| गेस्टाल्ट चिकित्सक व्यक्ति के सर्जनात्मक)creative) तथा सार्थक पहलूओं पर न कि नकारात्मक एवं विकुत पहलुओं पर बल डालता है (जिसपर मनोविश्लेषकों द्वारा अधिक बल डाला जाता है)| गेस्टाल्ट चिकित्सक का मुख्य लक्ष्य रोगी को अपनी आवश्यकता, इच्छा एवं आशंकओं को समझने एवं स्वीकार करने में मदद करना होता है तथा साथ साथ उन्हें इस बात से भी अवगत-ही-कराना होता है कि अपने लक्ष्य तक पहुँचने में तथा उन आवश्यकताओं की तुष्टि करने में वे किस तरह असफल रहे|

गेस्टाल्ट चिकित्सा का मुख्य लक्ष्य रोगी के वर्द्धन की रुकी प्रक्रिया को फिर से चालू करना होता है| इस लक्ष्य की प्राप्ति निम्नांकित दो तरह से किया जाता है रोगी को उन भावों से अवगत करने जो उसके व्यक्तित्व का प्रमुख हिस्सा हैया ,परन्तु जिसे ठीक से नहीं समझने के कारण अलग रखा जाता था , |अलग रखने की कोशिश की है

रोगी को उन भावों एवं मूल्यों(values) से अवगत कराया जाता हैजिसे वे यह समझते हैं कि उसने , व्यक्तित्व क ा यथार्थ हिस्सा है जबकि सच्चाई यह है कि व्यक्ति उन्हें दूसरे लोगों से लिया हैं|

इस तरह से गेस्टाल्ट चिकित्सा में रोगी या क्लायंट कों आत्मन्)self(के उन यथार्थ पहलुओं कों पुनः बोध कराया जाता है यथा

- वर्तमान की अनुभूतियाँ(here and experiences)
- जानकारी(awarenss)
- उत्तरदायित्व(responsibility)

इन तीनों अवयवों का वर्णन निम्नां कित है-

- **वर्तमान की अनुभूतियाँ (Here and now experiences)-** गेस्टाल्ट चिकित्सा में वर्तमान (here and now) महत्वपूर्ण होता है और चिकित्सा का उद्देश्य इसी वर्तमान रोगियों के विश्वास को सुदृढ़ करना होता है। रोगी की समस्याओं का उत्तर भूत (past) में ढूँढ़ना अर्थहीन होगा। पल्स (Perls,1970) के ही शब्दों में वर्तमान के महत्व को इस प्रकार समझा जा सकता है, "मेरे लिए वर्तमान के सिवा किसी का भी अस्तित्व नहीं है। वर्तमान=अनुभव=चेतना=वास्तविकता। भूत बीत चुका होता है तथा भविष्य आने वाला होता है| सिर्फ वर्तमान ही सामने होता है|" गेस्टाल्ट चिकित्सक के अनुसार जब वर्तमान (now) तथा भूत या भविष्य के चिन्तनों(preoccupations) में अंतर होता हैतो रोगी में चिंता उत्पन्न होती है। इसलिए चिकित्सा के दौरान चिकित्सक भरपूर यह कोशिश करता है कि रोगी का ध्यान उसके वर्तमान भावों, चिन्तनों एवं अनुभूतियों पर रहे।
- **जानकारी (Awareness)-** जानकारी से तात्पर्य अनुभूतियों को स्वीकार करने की क्षमता से होती है।
- **उत्तरदायित्व (Responsibility)** - गेस्टाल्ट चिकित्सा का यह एक महत्वपूर्ण संप्रत्यय (concept) है जिसमें व्यक्ति अपनी क्रियाओं एवं भावों की जवाबदेही अपने कंधों पर लेता है।
- लेविटस्काई एवं पर्ल्स (Levitsky & Perls,1970) के अनुसार गेस्टाल्ट चिकित्सा में दो तरह की प्रविधियाँ(techniques) सम्मिलित होती हैं। एक को नियम(rules)तथा दूसरे को खेल या गेम (game) कहा जाता है। गेस्टाल्ट चिकित्सा के प्रमुख नियम(rules) इस प्रकार हैं -

- रोगी को वर्तमान काल में बातचीत करने के लिए कहा जाता है। बीते यादों एवं भविष्य की प्रत्याशाओं (anticipations)से रोगी को दूर रहने के लिए कहा जाता है।
- बातचीत किसी के बारे में नहीं बल्कि समानान्तर स्तर पर किया जाता है।
- रोगी में उत्तरदायित्व (responsibility) का भाव उत्पन्न करने के लिए उसे 'मैं' शब्द का प्रयोग अधिक-से-अधिक करने के लिए कहा जाता है।
- रोगी सतत् रूप से (continually) तात्कालिक अनुभूतियों (immediate experience) पर ध्यान केन्द्रित करता है।
- कोई गप-शप या इधर-उधर की बात नहीं की जाती है।
- यह कोशिश की जाती है कि रोगी कोई प्रश्न न करें क्योंकि प्रश्नों को अपने विचार व्यक्त करने का एक निष्क्रिय तरीका न कि सूचना प्राप्त करने का एक तरीका समझा जाता है।

गेस्टाल्ट चिकित्सा में कुछ तथाकथित गेस्टाल्ट गेम्स (Gestalt Games)भी किये जाते हैं। जैसे रोगी जब अपने -बारे में कुछ कहता है तो उसे कहा जाता है कि वह यह कहे, 'मैं बहुत खुश व्यक्ति नहीं हूँ।' उसी तरह से एक अन्य तथाकथित खेल रोगी को जोरसे बोलकर उस टिप्पणी या वाक्य को दोहराने के लिए कहा जाता है जिसे जोर-निर्वाह गेम-चिकित्सक महत्वपूर्ण समझता है। इसी तरह के अन्य गेम जैसे भूमिका(role-playing game) भी रोगी को करने के लिए कहा जाता हैं जिसमें रोगी को भिन्नभिन्न तरह की भूमिका-(role) करनी पड़ती है।

गेस्टाल्ट चिकित्सा(Gestalt) में निम्नलिखित संप्रत्ययों(concepts) को भी महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि इन सबसे रोगी की वर्तमान अवस्थाओं को समझने में मदद मिलती है -

- **टॉपडौग तथा अंडरडौग(Top dog-Underdog)** - गेस्टाल्ट चिकित्सा में टापडौग से तात्पर्य करीब-करीब वही है जो फ्रायड के सिद्धान्त में पराहं (super ego) का है तथा अंडरडौग से तात्पर्य वही है जो फ्रायड के सिद्धान्त में उपाहं (id) का है। जब व्यक्ति के इन दोनो पहलुओं में संघर्ष होता है तो रोगी को वार्तालाप के माध्यम से इन दोनों की भूमिका करनी पड़ती है ताकि आत्मन् (self) के इन दोनों संघर्षात्मक पहलुओं को आपस में समन्वित कर सके।
- **स्वप्न(Dreams)** -गेस्टाल्ट चिकित्सा द्वारा चिकित्सा में स्वप्न का भी उपयोग किया जाता है परन्तु मनोविश्लेषकों से भिन्न ढंग से। पर्ल्स का मानना है कि स्वप्न का प्रत्येक तत्व चाहे उसका स्वरूप मानव से संबंधित हो या किसी अन्य वस्तु से संबंधित हो, द्वारा रोगी के व्यक्तित्व के एक असंबद्ध (alienated) अंश का प्रतिनिधित्व होता है। चिकित्सा सत्र में रोगी को अपने स्वप्न के बारे में वर्तमान काल का उपयोग करते हुए बतलाना होता है और इस तरह से उसे स्वप्न के विषय के अनुरूप भूमिका करनी होती है। गेस्टाल्ट चिकित्सकों का मत है कि स्वप्न के विभिन्न वस्तुओं या व्यक्तियों की भूमिका का निर्वाह करने

में आत्मन्(self)के असंबद्ध अशों को रोगी समझता है तथा ऐसा समझ विकसित कर लेने पर उसे पुनः समन्वित करने में सफलता मिलती है।

- **रक्षाएँ (Defenses)-**गेस्टाल्ट चिकित्सा का उद्देश्य रोगी द्वारा खोले गए तथाकथिक गेम्स(games) के पीछे छिपी रक्षाएँ (defenses) का पता लगाना है। पल्स ;चमतसेद्ध का कहना है कि स्नायुविकृत व्यवहार (neurotic behaviour) में ऐसी रक्षाओं के कई तहें(layers) होती हैं। ऐसे व्यवहार के पहले तह में रोगी स्वयं अपने आप को सामना करने से कतराता है और वह तरह-तरह के चिन्ता, दुर्भीति (phobias) एवं आशंकाओं से अपने आप को घिरा पाता है। गेस्टाल्ट चिकित्सक का कार्य इस रक्षात्मक तह(defensive layer) को हटाकर रोगी को वास्तविकता से अवगत कराना होता है। इस तरह की वास्तविक जानकारी होने से रोगी में सम्पूर्णता एवं प्रफुल्लता (aliveness) आती है।
- **अशाब्दिक व्यवहार का उपयोग(Use of nonverbal)-** गेस्टाल्ट चिकित्सा से क्लायंट के अशाब्दिक व्यवहारों का भी उपयोग किया जाता है क्योंकि इससे कुछ महत्वपूर्ण सूचनाएँ मिलती हैं। चिकित्सक को चिकित्सा सत्र के दौरान क्लायंट क्या कहता है तथा वह क्या करता है, पर काफी ध्यान देना होता है। उनके इन अशाब्दिक व्यवहारों से कुछ ऐसे महत्वपूर्ण सूचनाएँ मिलती हैं जो क्लायंट द्वारा बोलकर दी गयी सूचनाओं के विपरीत होती है और वे चिकित्सा के लिए काफी महत्वपूर्ण माने जाते हैं क्योंकि इसके आधार पर क्लायंट द्वारा उपयोग किया पाया रक्षात्मक प्रतिक्रियाओं का वास्तविक अर्थ समझने में मदद मिलती है।
- **नैतिक प्रेक्ष्य (Moral percepts)** - नारैनजो (Naranjo,1970) ने गेस्टाल्ट चिकित्सा के कुछ प्रमुख बिन्दुओं को जिसे उन्होंने 'नैतिक प्रेक्ष्य' (moral percepts) कहा है, इस प्रकार संक्षिप्त रूप से व्याख्या किया है-
- **वर्तमान में रहना (live now)** - रोगी को हमेशा वर्तमान के बारे में न कि भविष्य या भूत के बारे में सोचना चाहिए।
- **उपस्थित वस्तुओं के बारे में सोचना (live here)** - रोगी याक्लायंट को सिर्फ सामने उपस्थित वस्तुओं के बारे मे सोचना चाहिए, अनुपस्थित वस्तुओं या व्यक्तियों के बारे मे नहीं।
- **कल्पना करना बंद करना (Stop imaging)** - रोगी को सिर्फ वास्तविक चीजों या घटनाओं के बारे में सोचना चाहिए।
- क्लायंट को अनावश्यक चिंतन को बंद करना चाहिए।
- रोगी को अपने विचारों की अभिव्यक्ति सीधे करनी चाहिए, उसकी व्याख्या या उसमें जोड़-तोड़ नहीं करना चाहिए।
- रोगी को दुखकर तथा सुखकर दोनों तरह की वस्तुओं से अवगत होना चाहिए।

- रोगी को वे सभी विचार एवं चिंतन जो उनके अपने नहीं हैं के बारे मे सोचनानहीं चाहिए।
- रोगी को वास्तविकता का आदर करना चाहिए और उससे अपने आप को पूर्णतः संबद्ध रखना चाहिए।

गेस्टाल्ट चिकित्सा के कुछ लाभ (advantages) तथा कुछ अलाभ (disadvantages) हैं। इसके प्रमुख लाभ निम्नांकित हैं -

- गेस्टाल्ट चिकित्सा में वर्तमान (here-and-now), उत्तरदायित्व (responsibility), अनुभव (experience) तथा जागरूकता (awareness) पर अधिक बल डालकर यह स्पष्टतः दिखला दिया गया है कि क्लायंट के व्यहार में परिवर्तन करने के लिए उसके गत अनुभूतियों (past experiences) का विश्लेषण आवश्यक नहीं है। इससे सूझ-उन्मुखी चिकित्सा मे एक तरह की क्रांति उत्पन्न हुई है।
- (ii) गेस्टाल्ट चिकित्सा की संचालन विधियाँ काफी सरल एवं सुगम है। इसका परिणाम यह होता है कि इस तरह की चिकित्सा बहुत उपयोगी सिद्ध होता है|फेयर्स (Phares,1984)के अनुसार गेस्टाल्ट चिकित्सा की अलोकप्रियता का एक कारण यह भी है कि इनके समर्थकों द्वारा इसपर शोध के विचार का हमेशा विरोध किया गया| अस्पष्ट कारणों से इनके समर्थकों द्वरा इससे संबंधितशोध को मानवता विरोधी बतलाया गया| इस पर कोरचिन (Korchin,1986) ने बिलकुल ही ठीक टिप्पणी किया है, "अबतक गेस्टाल्ट चिकित्सा का कोई क्रमबद्ध लेखा-जोखा नहीं तेयार किया गया है| इसकी प्रभावशीलता या इसके विशेष प्रविधि के मूल्य से संबंधित कोई गुणात्मक शोध सबूत नहीं हैं|"
- इन दोषों के बावजूद गेस्टाल्ट चिकित्सा उन नैदानिक मनोवैज्ञानिकों के लिए एक उतम चिकित्सा पद्धति रहा है जिन्हें मानवतावादी सिद्धान्तों में अधिक विश्वास है|

6.9 क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा (Client- Centered therapy)

इस चिकित्सा का प्रतिपादन कार्ल रोजर्स)Carl Rogers) द्वारा के दशक में किया गया 1940| इसे अन्य नामों जैसे व्यक्ति केन्द्रित चिकित्सा)Person-centered) या अनिदेशित चिकित्सा)non-directive therapy) भी कहा जाता हैA | रोजर्स ने अपनी चिकित्सा विधि में रोगी के लिए क्लायंट)client) तथा चिकित्सक)therapist)के लिए सलाहकार)counsellor) शब्द का प्रयोग किया हैं| रोजर्स फ्रायड के इन दोनों विचारों को असिकर्त कर दिये हैं) वृतिपहला अविवेकी मूलप्र -irrational instinct) से व्यक्ति का व्यवहार प्रभावित होता है तथा दूसरा चिकित्सीय प्रक्रिया में चिकित्सक को एक निर्देशक, व्याख्याता तथा जाँचकर्ता)prober) के रूप में कार्य करना होता हैं| रोजर्स का मत है कि चिकित्सा एक प्रक्रिया)process) होती है न कि विभिन्न प्रविधियों का एक सेट| इसका मत है चिकित्सक क्लायंट की समस्या का समाधान मात्र उन्हें कुछ कहाकर या कुछ पढाकर नहीं कर सकते हैं| रोजर्स के अनुसार वास्तविक प्रकिया "अगरतब....."(If.....then) प्रतिज्ञापति सेउत्पन्न की जाती हैं, तब क्लायंट में अपने आप परिवर्त्तन आयेगा और उसमें वर्द्धन होगा |

रोजर्स)Rogers, (1961ने मानव प्रकृति तथा उन तरीकों जिनके सहारे उसे समझा जा सकता है, के बारे में निम्नांकित पूर्वकल्पनाएँ की है-व्यक्ति को उनके अपने प्रत्यक्षण तथा भाव के आधार पर ही सही ढंग से जाना जा सकता हैं|

- स्वस्थ लोग अपने व्यवहार से पूर्णत: अवगत होते है|
- स्वस्थ लोग जन्मजात रूप से उत्तम एवं प्रभावी होते हैं|
- स्वस्थ लोग उद्देश्यपूर्ण (purposive) तथा लक्ष्य-निदेशित (goal-directive) होते हैं| वे पर्यावरण के उद्दीपकों के प्रभावों के प्रति निष्क्रिय रूप से अनुक्रिया नहीं करते हैं बल्कि वे लोग आत्म-निदेशित (self-directive) होते हैं|
- चिकित्सक को क्लायंट के लिए घटनाओं में जोड़-तोड़ करके उसे अनुरूप नहीं बनाना चाहिए बल्कि उसे वैसी अवस्था उत्पन्न करनी चाहिए कि क्लायंट स्वतंत्र होकर कोई निर्णय अपने ले सके|

उक्त पूर्णकल्पनाओं के आलोक में चिकित्सक चिकित्सीय प्रक्रिया को संचालित करता हैं|

क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा का उद्देश्य क्लायंट में ऐसी नयी अनुभूति पैदा करना होता हैं-जिससे वर्द्धन प्रकिया का पुर्नचलन) restart) हो सके-इसके लिए चिकित्सक को निम्न प्रकार का व्यवहार करना चाहिए |

- चिकित्सा प्रक्रिया में चिकित्सक क्लायंट कि व्यक्त इच्छाओं एवं भावनाओं के प्रति इस ढंग से अनुक्रिया करता है जो योग्य एवं उत्कर्ष (worth) अवस्थाओं की उत्पत्ति में बाधक नहीं होता है|
- चिकित्सा प्रक्रिया में चिकित्सक क्लायंट को यह मानकर कि वह वर्तमान में है, पूर्णत: स्वीकार करता है|
- चिकित्सा प्रक्रिया में चिकित्सक क्लायंट को एक व्यति के रूप में स्वीकार कर कार्य करता हैं|

उक्त तथ्यों के अनुरूप इस चिकित्सा में एक ऐसी अंतर्वैयक्तिक संबंध)interpersonal relationship) को उत्पन्न किया जाता है जिसका उपयोग व्यक्तिगत वर्द्धन)personal growth) के लिए क्लायंट आगे करता है | उत्पन्न करने वाला संबंधरोजर्स के अनुसार इस तरह का वर्द्धन (growth enhancing relationship) की उत्पति के लिए चिकित्सक में अन्य बातों के अलावा निम्नाकित तीन गुणों)qualities) का होना अनिवार्य हैं|

- धनात्मक सम्मान (Unconditional positive regard)
- तदनुभुति (Empathy)
- संगतता (Congruence)

इन तीनों की वृहद व्याख्या निम्न प्रकार हैं|

- चिकित्सक धनात्मक सम्मान(Unconditional positive regard)- रोजर्स की चिकित्सा पद्धति में चिकित्सक द्वारा शर्तरहित धनात्मक सम्मान दिखलाया जाना चिकित्सा की सफलता के लिए अतिआवश्यक माना जाता है| इस तरह की मनोवृत्ति से निम्नांकित तीन तरह के संकेत मिलते हैं -
- चिकित्सक क्लायंट पर एक व्यक्ति के रूप में विशेष ध्यान (care) देते हैं|
- चिकित्सक उन्हें स्वीकार(accept) करते हैं|
- चिकित्सक क्लायंट के परिवर्तन की क्षमता में विश्वास (trust) रखता है |

चिकित्सक क्लायंट पर एक व्यक्ति के रूप में विशेष ध्यान देते हैं)The therapist cares about the client as a person)---- चिकित्सक क्लायंट पर एक व्यक्ति के रूप में विशेष ध्यान देते है और इस कार्य को वे कई तरह से संपन्न करते हैं जिनमें सबसे उत्तम ढंग अस्वत्वात्मक रूप से ध्यान देना)nonpossessive caring) हैं| इसे कई तरीकों से किया जाता है परन्तु सबसे उत्तम तरीका वह है जिसमें चिकित्सक क्लायंट से सीधे यह कहता है कि वह उनकी बातों को ध्यान से सुन रहा हैं और उनकी तरीका काफी दिलचस्प लग रही हैं| इससे क्लायंट में आत्मअभिव्यक्ति कि तीव् प्रेरणा जगती हैं-|

चिकित्सक क्लायंट को स्वीकार करते हैं)The therapist accepts the client) - चिकित्सक के शर्तरहित धनात्मक सम्मान)unconditional positive regard) में शर्तरहित)unconditional) शब्द इस और इशारा करता है कि चिकित्सक क्लायंट को बिना किसी हिचक के उसे स्वीकार)accept) करता है| रोजर्स का विश्वास है कि एक मानव के रूप में चिकित्सक द्वरा स्वीकार किया जाना अपने आप ही क्लायंट में वर्द्धन-उत्पन्न करने वाली अनुभूति को जन्म देता है| इस तरह से क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा में चिकित्सक क्लायंट के भावों को न तो अनुमोदित करता है और ना ही उसे नामंजूर करता है बल्कि उसे मात्र स्वीकार करता है | ऐसा भी हो सकता है कि चिकित्सक क्लायंट के भाव तथा विचार से असहमत हो परन्तु फिर भी वह तटस्थ होकर बिना किसी तरह कि प्रतिक्रिया दिखलाये उसे स्वीकार करके क्लायंट में वर्द्धनउत्पन्न करने वाली अनुभूतियों - को बढ़ावा द ेता है|

चिकित्सक क्लायंट के परिवर्तन की क्षमता में विश्वास रखता हैं)Therapist trusts the clients ability to change) – शर्तहीन धनात्मक सम्मान का 'धनात्मक'(positive) शब्द इस और इशारा करता है कि चिकित्सक क्लायंट के समस्या समाधान एवं वर्द्धन की अन्त) शक्ति:potential) में विश्वास रखता है| रोजर्स का मत है कि यदि क्लायंट यह समझता है कि चिकित्सक को उसकी अन्त) शक्ति:potential) में विश्वास नहीं है,तो क्लायंट में आत्मनिर्भरता का विकास नहीं होने का खतरा उत्पन्न हो जाता है-| दूसरे तरफ यदि क्लायंट यह समझता है कि उसकी अन्तशक्ति में चिकित्सक को विश्वास है:,तो इससे उससे आत्मनिर्भर होने - का गुण विकसित होता हैं| इसके लिए कमत तीन चीजें नहीं करना चाहिएकम रोजर्स को निम्नाकि-से-| पहला,चिकित्सक को किसी प्रकार की राय क्लायंट को नहीं देनी चाहिए| दूसरा,चिकित्सक को क्लायंट के लिए किसी प्रकार की जवाबदेही नहीं लेनी चाहिए तथा तीसरा,चिकित्सक को क्लायंट के लिए किसी प्रकार निर्णय अपनी ओर से नहीं लेनी चाहिए|

तदनुभुति)Empathy) – रोजर्स के अनुसार परानुभुति से तात्पर्य इस बात से होता है कि चिकित्सकक्लायंट के भावों को ठीक से समझे और वह वर्तमान परिस्थिति को अपनी नजर से न देखकर क्लायंट की नजर से देखेसा कि वह करता है तो जब क्लायंट यह समझता है कि चिकित्सक ठीक वैसा ही प्रत्यक्षण कर रहा है जै | इसे रोजर्स ने परानुभुति |इससे चिकित्सीय संबंध मजबूत हो जाते हैंक समझ)empathic understanding) की संज्ञा दिया है|

क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा में चिकित्सक को सिर्फ परानुभूतिक मनोवृत्ति-(emphathic attitude) ही नहीं दिखाना चाहिए बल्कि उन्हें इस तरह की मनोवृत्ति को क्लायंट से संचारित)communicate) भी करना चाहिए | इसे चिकित्सक क्लायंट की बातों को सक्रिय होकर निभाता हैपरानुभुतिक मनोवृत्ति को संचारित करने में |) परावर्तनreflection) की भूमिका पर रोजर्स ने अधिक बल डाला हैंहराता नहीं है बल्कि परावर्तन को मात्र दो | स्पष्ट बना कर उन्हें,इसमे वह क्लायंट के भावों को और अधिक स्वच्छ स्वीकार करता हैंइस तरह से परावर्तन |) इसके माध्यम से चिकित्सक अपने भावों,पहला |द्वारा दो तरह के उद्देश्यों की पूर्ति होती हैfeelings) के प्रति ठीक ढंग से अवगत करा पातें हैं|

रोजर्स का मत है कि चिकित्सीय सत्र में परानुभुति की मनोवृत्ति बहुत धीरे धीरे न-कि एकदो सत्रों में ही उत्पन्न हो - धीरे यह समझ में आने लगता -चिकित्सक द्वारा उपयोग किये गये परावर्तन को देखकर क्लायंट को धीरे |जाता है हैं कि चिकित्सक उन्हें तथा उनकी भावों को स्वीकार कार रहा हैं|

संगतता)Congruence) - संगतता या जिसे यथार्थता)genuineness) भी कहा जाता हैसे तात्पर्य इस बात से , होता है कि चिकित्सक को क्लायंट के साथ एक यथार्थ एवं वास्तविक संबंधविकसित करना चाहिएइसके लिए |)यह आवश्यक है कि चिकित्सक के भावfeeling) तथा क्रियाएँ)actions) एकदूसरे के साथ -)संगतcongruent) होयद्यपि यह सही है कि किसी भ |ी चिकित्सक के लिए संगतता को प्राप्त करना एक कठिन कार्य हैफिर भी एक चिकित्सक को सफल होने के लिए अपने भावों एवं व्यवहारों में संगतता दिखाना अनिवार्य,) वह एक वास्तविक मानवीय संबंध होता है क्योंकि ऐसा होने सेreal human relationship) को कायम कर पाता है|

जैसे कि उपयुक्त सम्पूर्ण व्याख्या से यह स्पष्ट है कि क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा)''तब...अगर''"If...then") पूर्वकल्पना की ओर इशारा करता हैही एवं ठीक हालात या इसका मतलब यह हुआ कि अगर चिकित्सा द्वारा स |)तब क्लायंट में परिवर्तन,अवस्था उत्पन्न किया जाता हैchange)होगाअब प्रश्न उठता है कि रोजर्स के इस |)सी विमाएं-कौन-चिकित्सा पद्धति में वे कौनdimensions) हैं जिसमें क्लायंट में परिवर्तन चिकित्सा के दौरान होते है)रोजर्स |Rogers,1961) ने ऐसी छह विमाओं का वर्णन किया है जो इस प्रकार हैं -

क्लायंट के अभिज्ञा में वृद्धि)Increase in awareness of client)–इस तरह की चिकित्सा में क्लायंट अपनी उन भावों)feelings) के निकट सम्पर्क में आता है जिसे वह पहले अपनी अभिज्ञा (awareness) से दूर रखता था | इससे क् |रिक्त क्लायंट अपनी वर्तमान अनुभूतियों पर ध्यान अधिक केन्द्रित करता है इसके अतिलायंट के आत्म -)अभिज्ञाself awareness) में काफी वृद्धि होती है |

आत्म)स्वीकरण में वृद्धि-Increased self-acceptance)- रोजर्स द्वारा प्रतिपादित इस चिकित्सा के दौरान धीरे-)अलोचना-यंट आत्मधीरे क्लाself-criticism) करता पाया जाता है तथा वह आलोचना अपने आप के प्रति

अधिक स्वीकार करते हुए देखा जाता हैअब वह अपने भावों एवं व्यवहारों का उतरदायित्व अपने ऊपर लेना | |ता हैधीरे कम कर दे-अधिक शुरू कर देता है तथा अन्य लोगों तथा परिस्थिति पर दोष मढना धीरे

संज्ञानात्मक लोच में वृद्धि)Increased cognitive flexibility)-क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा रोगी के संज्ञानात्मक आबद्धता)cognitive fixedness) को दूर करके उसमें संज्ञानात्मक लोच लाता हैं |)केलीKelley,1955) ने यह स्पष्ट रूप से साबित किया जाता है जब व्यक्ति वातावरण को एक निश्चित एवं आबद्ध ढंग से प्रत्यक्षण करता हैतो इसस ,ी समस्या उत्पन्न होती हैऐसा सोचना ,सभी राजनीतिज्ञ भ्रष्ट होते हैं -जैसे | ताकि उसे ,केन्द्रित चिकित्सा यह प्रेरणा क्लायंट को देता है-क्लायंट |संज्ञानात्मक आबद्धता का एक उदाहरण है |तिका ठीक ढंग से ज्ञान हो सकेवस्तुस्थि

अन्तर्वैयक्तिक आराम में वृद्धि)Increased interpersonal comfort)-रोजर्सदवारा प्रतिपादित चिकित्सा में जैसेअधिक आराम -से-क्लायंट अपने विभिन्न तरह के संबंधो में अधिक,जैसे चिकित्सीय सत्र में वृद्धि होती है-) क्लायंट सुरक्षात्मक अन्तर्वैयक्तिक उपागमो |है चैन का अनुभव करता-या सुखdefensive interpersonal approaches) का त्याग कर देता है और उसे जैसा वह है|के बारे में अन्य लोगों को बताकर काफी खुशी होती है,

आत्म)आस्था में वृद्धि-increase in self-reliance)-जैसेक्लायंट दूसरों ,है जैसे चिकित्सा सत्र आगे बढता-पर कम निर्भर रहने लगता है तथा उसे अपनी क्षमताओ ं पर अधिकइसका |अधिक भरोसा हो जाता है-से-आदि की परिस्थिति में ,भाषण,पार्टी,शादी -परिणाम यह होता है कि क्लायंट विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों जैसे वह उतना ही महत्वपूर्ण है जितना ,कि जो वह सोचता है बिलकुल ही डरता नहीं है क्योंकि वह यही समझता है दूसरे लोग सोचते हैं |

क्लायंट के स्पष्ट व्यवहारों में परिवर्तन)Changes in overt behaviour of the client)-क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा में क्लायंट के स्पष्ट व्यवहारों)overt behaviour) में काफी परिवर्तन आ जाते हैउसका |)व्यवहार पहले से अधिक परिपक्व हो जाता है तथा आत्मन self) वस्तुनिष्ठ विचार एवं वास्तविकता पर आघात हो जाता है तथा उसके व्यवहार में मनोवैज्ञानिक तनाव की स्पष्ट कमी देखी जाती है|

क्लायंटमें उक्त तरह के परिवर्तन अचानक न होकर चिकित्सीय सत्र के दोरान धीरेइसके लिए |धीरे होता है- |चिकित्सक को पर्याप्त धैर्य रखना चाहिए

क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा का मूल्यांकन)Evaluation of client-centred Therapy)-इस तरह की चिकित्सा के कुछ लाभ)advantages) तथा हानि)disadvantages) हैइसके प्रमुख लाभ | -निम्नांकित हैं

- साधारण कुसमायोजित व्यवहार के लिए क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा (client-centred thearapy) एक सरल विधि है और क्लायंट के व्यक्तिगत पहल (personal intiative) से ही चिकित्सा का अधिकतर कार्य सम्पन्न हो जाता है|

- क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा मनोगतिकी(psychodynamics) के किसी विशिष्ट सिद्धांत के समर्थन पर निर्भर नहीं करता है| अत: नैदानिक मनोवैज्ञानिकों ने इसका प्रयोग अधिक किया है और इस कारण इसकी लोकप्रियता काफी बनी हुई है|
- रोजर्स तथा उसके सहयोगियों कों इस बात की दुहाई दी जाती है की इन लोगों ने चिकित्सा कि प्रक्रिया(process) तथा परिणाम(outcomes) को पहली बार वस्तुनिष्ठ बनाने पर इतना जोर दिया| सचमुच में इन्ही के प्रयासों के कारण चिकित्सा के विशेष कमरे कि अत्यधिक गुप्तता(excessive privacy) भंग हो पायी और इन्होंने ही प्रथम बार चिकित्सीय सत्र (therapy sessions) को टेप रेकार्डिंग(tape recording) करने पर बल डाला ताकि अन्य शोधकर्ताओं द्वारा भी उसका बाद में विश्लेषण कर प्रक्रिया एवं परिणाम की जाँच किया जा सके|

इन लाभों के बावजूद क्लायंट) केन्द्रित चिकित्सा की कुछ दोष-demerits) भी हैं जो इस प्रकार हैं -

- क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सागंभीर मानसिक रोगों के लिए उपयुक्त नहीं होता है | चूँकि ऐसे रोगी गंभीर रूप से विक्षिप्त होते हैं , अत: उसमें व्यक्तिगत पहल का अभाव होता है तथा आत्म – सिद्धि (self-actualization) के अभिप्रेरण की बहुत कमी पायी जाती है |
- कुछ नैदानिक मनोवैज्ञानिकों का मत है कि क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा क्लायंट की समस्याओं की गहराई (depth)में न पहुँचकर मात्र सतह पर ही रह जाता है| अत: इस चिकित्सा पद्धति से जो समस्या का समाधान तीव्र हो जाती है|
- रोजर्स ने यह पूर्वकल्पना किया है कि व्यक्ति का व्यवहार हमेशा एक विशेष अभिप्रेरण जिसे आत्म-सिद्धि(self- actualization) की आवश्यकता कहा जाता है, से निदेशित होता है| अब प्रश्न यह उठाता है कि जब व्यक्ति का व्यवहार हमेशा इसी आत्म-सिद्धि की अभिप्रेरण से निर्धारित होता है तो वह दोषपूर्ण विचार (faulty ideas) को किस तरह से सीख लेता हैं? इतना ही नहीं, ऐसे दोषपूर्ण विचार किन परिस्थितियों में सीखे जाते हैं तथा इस तरह के दोषपूर्ण सीखना से उसके किस तरह की आवश्यकता तथा अभिप्रेरण की तुष्टि होती है? इन प्रश्नों का उतर क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा में नहीं मिलता है|
- लैमबर्ट तथा उनके सहयोगियों(Lambert et al.,1986) ने अपने-अपने अध्ययनों के आधार यह बतलाया हैं कि रोजर्स कि यह पूर्वकल्पना सही नहीं हैं कि इस तरह कि चिकित्सा का धनात्मक परिणाम(positive outcome) चिकित्सक के तदनुभूति(empathy), यथार्थता (genuineness) तथा सौहाद्रता (warmth) से संबंधित होता है या उसपर आधारित होता है|

इसके बावजूद भी क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा का उपयोग आजकल नैदानिक मनोवैज्ञानिकों एवं मनोविश्लेषकों द्वारा काफी किया जाता है क्योंकि इसकी विधि सरल एवं सुगम है|

6.10 सारांश (Summary)

अस्तित्ववाद एवं मानवतावाद ऐसे दो आंदोलन हैं जिन्होंने वैश्विक समाज के लगभग प्रत्येक पहलू को , इन दोनों आन्दोलनों ने परामर्श एवं निर्देशन |मनोविज्ञान भी इन प्रभावों से अछूता नहीं रहा है |प्रभावित किया है जिसका परिणाम लोगो |के तरीके को भी प्रभावितथेरपी गेस्टाल्ट चिकित्सा एवं ,क्लायंट केंद्रित चिकित्सा पद्धति , | पद्धति के रूप में हमारे सामने है

6.11शब्दावली: (Glossary)

अस्तित्ववाद :अस्तित्ववाद पाश्चात्यदर्शन की एक आधुनिक शाखा है। इसमें प्रस्तुत और यथार्थ अस्तित्व का - ही सबसे अधिक महत्त्व माना जाता है और आस्तिकता, तर्क, परम्परा आदि को व्यर्थ समझकर मानवजीवन को - भी निरर्थक माना जाता है, और कहा जाता है कि मनुष्य को संसार में दर्शक के रूप में ही रहना चाहिए|

मानवतावाद : मानवतावाद मानव मूल्यों और चिंताओं पर ध्यान केंद्रित करने वाला अध्ययन, दर्शन या अभ्यास का एक दृष्टिकोण है|

6.12 अभ्यास प्रश्न

1. अस्तित्ववादी चिकित्सा पद्धति में कौन कौन से तरीकों का प्रयोग किया जाता है ? विस्तार सेबताएं ?
2. मानवतावाद से आप क्या समझते हैं?अपने शब्दों में स्पष्ट करते हुए मानवतावादी चिकित्सा पद्धति पर प्रकाश डाले |
3. लोगो थेरेपी से आपका क्या अभिप्राय है ? स्पष्ट करें |
4. क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सासे आप क्या समझते हैं ?
5. क्लायंट-केन्द्रित चिकित्साके प्रमुख लाभों को स्पष्ट करें |
6. क्लायंट-केन्द्रित चिकित्साके प्रमुख हानियों को स्पष्ट करें |

6.13 संदर्भ ग्रंथ सूची(Suggested Readings)

Rogers, C.R. (1942). Counselling and Psychotherapy, Boston, Houghton, Mittlin.

Ray. A. and Asthana, M. (2005). Guidance and Counselling, Concepts, Areas and Approaches, Patna, Motilal Banarsidas Co.Ltd.

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,शिक्षा मनोविज्ञानटर्सा।ब्यूपब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,भारती भवन ,पटना ,

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,संज्ञानात्मक मनोविज्ञानमोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स एड ,वाराणसी , टर्सा।ब्यूडिस्ट्री

सिंह (2001) ,अरूण कुमार ,उच्चतर मनोविज्ञानटर्सा।ब्यूपब्लिशर्स एड डिस्ट्री ,भारती भवन,पटना ,

Lewis, E.C. (1970). Psychology of Counselling, New York, Holt Rienehant and Winston.

इकाई - 7

परामर्श : एकीकृत उपागम एवं परामर्शी केन्द्रित परामर्श उपागम

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 परामर्श: उपागम

7.2.1 निदेशात्मक उपागम

7.2.2 एकीकृत या समन्वित उपागम

7.3 परामर्शी केन्द्रित परामर्श उपागम

7.3.1 प्रार्थी केन्द्रित परामर्श, विधि की परिकल्पनाएँ

7.3.2 अधिगम की स्थितियाँ

7.3.3 निदान

7.3.4. सूचनाएँ प्रदान करना

7.3.5 मूल्यों का विकास

7.3.6 सीमाएँ

7.3.7 लाभ

7.4 सारांश

7.5 शब्दावली

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप

- परामर्श में एकीकृत उपागमों के सम्बन्ध में विस्तृत ज्ञान प्राप्त करेंगे।

- परामर्शी केन्द्रित परामर्श उपागम के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- परामर्शी केन्द्रित परामर्श उपागम की सीमाओं एवं योगदान की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

परामर्श एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति की समायोजन संबंधी समस्याओं को समझने में तथा उनका समाधान करने में सहायता करती है। यह प्रक्रिया इतनी सरल नहीं है, अर्थात् समस्या ग्रस्त व्यक्तियों को परामर्श देकर उनकी समस्या का समाधान करने के लिए परामर्शदाता को कुछ तरीकों का प्रयोग करना होता है। सामान्यतः समस्या समाधान के तरीके ही परामर्श के उपागम कहलाते हैं।

इस इकाई के अन्तर्गत परामर्श के कुछ प्रमुख उपागमों को एकीकृत रूप में संक्षिप्त में वर्णन किया गया है। वर्तमान युग में परामर्श का आधार ये प्रमुख उपागम है। ये उपागम परामर्शदाता को किसी व्यक्ति को सहायता देने के लिए सप्रत्यात्मक यंत्र तथा सोचने का आधार प्रदान करते हैं।

परामर्श के "परामर्शी केन्द्रित परामर्श" उपागम को "सेवार्थी केन्द्रित उपागम" व "व्यक्ति केन्द्रित उपागम" से भी जाना जाता है।

7.2 परामर्श के उपागम

परामर्श के कार्य को समुचित रूप से करने के लिए परामर्शदाता द्वारा विभिन्न उपागमों का उपयोग किया जाता है जिनके माध्यम से समस्याग्रस्त व्यक्तियों की समस्याओं का निदान किया जा सकता है। सामान्यतः परामर्श के तीन उपागमों को सर्वाधिक उपयोग में लिया जाता है जो निम्नलिखित है-

1. निदेशात्मक उपागम(Directive approach)

2. एकीकृत या समन्वित उपागम (Edectic approach)

3. अनिर्देशात्मक उपागम (Non directive approach)

7.2.1 निदेशात्मक उपागम (Directive approach):-

निदेशात्मक उपागम को सूचनात्मक या परामर्शदाता केन्द्रित परामर्श उपागम भी कहते हैं। इस उपागम के प्रवर्तक ई.जी.विलियमसन है। इस उपागम का प्रयोग करने वाले परामर्शदाता प्रार्थी की समस्याओं को उनकी बौद्धिकता की चेतना के उपयोग द्वारा हल करने में सहायता करते हैं। उपागम में परामर्शदाता का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी के सांवेगिक तथा उत्तेजित व्यवहार को जानबूझकर तार्किक व्यवहार द्वारा प्रतिस्थापित करना होता है। इस उपागम में परामर्शदाता प्रार्थी की समस्याओं को तार्किक आधार पर समाधान करने में सहायता देने के लिए निरंकुश व निर्णायक अभिवृत्ति नहीं अपनाता है। साथ ही वह इस प्रकार की प्रत्यक्ष तकनीकों जैसे- स्पष्ट रोकनाए स्पष्ट सुझाव तथा नियमित सलाह को भी नहीं अपनाता है। परामर्शदाता अपने विशिष्ट ज्ञान का प्रयोग सेवार्थी को तार्किक निर्णय देकर सहायता करता है। सेवार्थी की समस्या का जल्दी निराकरण करने के लिए परामर्शदाता अपने

विभिन्न कौशलों का प्रयोग करता है। अतः यह परामर्श उन व्यक्तियों के लिए महत्त्वपूर्ण है जो योग्य है परन्तु अनुभवों की कमी के कारण अवास्तविक निर्णय ले लेते हैं।

निर्देशित परामर्श उपागम के लिए मनोविज्ञान की शिक्षा तथा मनोविज्ञान के अनुभव से प्राप्त कौशल का होना आवश्यक है। इस विधि की यह अवधारणा है कि परामर्शदाता के पास समस्या का वैज्ञानिक निदान करने, सेवार्थी को श्रेष्ठ मार्ग चयन करने के लिए आवश्यक विशिष्ट ज्ञान देने का कौशल है। इस उपागम में समस्या के सम्बन्ध से प्रार्थी नहीं बल्कि परामर्शदाता निर्णय लेते हैं तथा परामर्शदाता सेवार्थी को दिशा प्रदान करता है जैसे सेवार्थी को समस्या समाधान के लिए क्या करना चाहिए? समस्या को समझने में मदद करता है आदि।

निदेशीय परामर्श उपागम के चरणरू. विलियमसन ने निर्देशीय उपागम के निम्नलिखित 6 चरण बताये हैं-

1. विश्लेषण **(Analysis):-** इस चरण में सेवार्थी की समस्या को पर्याप्त एवं समुचित रूप से समझने के लिए विभिन्न स्त्रोतों से आंकड़े एकत्रित किये जाते हैं।

2. संश्लेषण **(Synthesis):-** इसके अन्तर्गत आँकड़ों को संश्लेषित तथा संगठित किया जाता है जिससे वे सेवार्थी के ऋणों, कमियों, समायोजनों तथा कुसमायोजनों को प्रदर्शित कर सके।

3. निदान **(Diagnosis):-** सेवार्थी की समस्याओं की प्रकृति तथा उसके कारणों का अध्ययन कर निर्णय तक पहुँचने की प्रक्रिया इस चरण के अन्तर्गत की जाती है।

4. पूर्वानुमान **(Proghosis):-**. इस चरण में सेवार्थी की समस्या के निदान के पश्चात् उस समस्या के विकास के सम्बन्ध में पूर्वानुमान लगाया जाता है।

5. परामर्श **(Counselling):-** परामर्श के इस चरण में परामर्शदाता सेवार्थी के साथ मिलकर उसके समायोजन तथा समस्या समाधान के लिए बात करते हैं तथा उचित पथ व हल निर्धारित करते हैं। परामर्श के चरण में निम्नलिखित प्रक्रियाओं का उपयोग किया जाता है।

   (क) सेवार्थी को स्वयं मूल्यांकन करने के लिए प्रेरित करना। अर्थात् सेवार्थी स्वयं अपनी रूचियाँ, प्रेरणा तथा योग्यताओं की पहचान करता है।

   (ख) सेवार्थी को उसकी समस्या के लिए उचित पथ की योजना बनाने सहायता की जाती है जहाँ पर वह अपनी रूचियों व क्षमताओं का विकास कर सके तथा उनका प्रयोग कर सके।

   (ग) प्रयासों एवं सफलताओं की अन्रक्रिया का उपयोग किया जाता है, जिससे ऐसे प्रयास आगे के लिए पुनः प्रेरणा उत्पन्न करे।

6. अनुवर्तन **(Followup):-** सेवार्थी की समस्या परामर्श के द्वारा ठीक हो जाने पर परामर्शदाता द्वारा पुनः अनुवर्तन करना तथा सेवार्थी की नयी अथवा पुरानी समस्या के पुनः होने पर सहायता प्रदान करनी चाहिए।

विलियमसन ने इस उपागम में परामर्श साक्षात्कार को मानवीय सम्बन्ध के लिए महत्त्वपूर्ण बताया है जो कि परामर्शदाता एवं सेवार्थी के लिए मैत्रीपूर्ण, सहानुभूतिपूर्ण होता है। इससे सेवार्थी को स्वयं की वास्तविकता का ज्ञान तथा अपनी गलतियों के साथ-साथ योग्यताओं एवं क्षमताओं को भी स्वीकार करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार यह उपागम सेवार्थी को स्वयं के बारे में समझ विस्तृत, अधिक शुद्ध व उपयोगी बनाने में उपयोगी होती है।

निर्देशात्मक उपागम का लाभः-

1. इस उपागम का उपयोग रोजमर्रा की समायोजन की शैक्षिक एवं व्यवसायिक समस्या के लिए इसका उपयोग किया जाता है।

2. यह उपागम मानसिक, शारीरिक एवं संवेगात्मक रूप से अयोग्य व्यक्तियों जिनमें स्वयं में परिवर्तन करने की सम्भावनाएँ कम है उनके लिए अधिक उपयोगी है।

3. इस उपागम में समयावधिक कम होती है।

4. जिन सेवार्थियों को जल्दी समस्याओं का हल चाहिए उनके लिए यह विधि उपयोगी है।

निर्देशात्मक उपागम की कमियाँः-

1. इस उपागम के माध्यम से सेवार्थी भविष्य में भी गलतियाँ कर सकता है।

2. कभी-कभी गलत सूचना होने से गलत परामर्श हो सकता है।

3. सेवार्थी के स्वयं के दृष्टिकोण विकसित न होने के कारण सामान्यतः त्रुटिपर्णू निर्णयों की संभावना रहती है।

4. सेवार्थी पुर्ण रूप से परामर्शदाता पर निर्भर रहता है।

7.2.2 एकीकृत या समन्वित उपागमः-

एकीकृत परामर्श उपागम में एकीकृत परामर्शदाता निर्दशीय अथवा अनिर्देशीय परामर्श की विचारधारा से सहमत नहीं है। वे साक्षात्कार की विधि को परामर्शदाता पर प्रभाव के पूर्वानुमान के आधार पर चयन करते हैं। उनके परामर्श के प्रत्यय किसी एक सिद्धांत से न होकर कई विचारधाराओं से मिले होते हैं।

अतः एकीकृत उपचार उपागम या एकीकृत परामर्श उपागम मनोचिकित्सा से जुड़ी हुई उपागम है, जो विशेष उपचारों के विभिन्न तत्वों के साथ-साथ उपयोग में आती है। एकीकृत उपचारक का मत है कि प्रत्येक परिस्थिति में व्यक्तित्व की समस्याओं का केवल एक उपागम से समाधान नहीं कर सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता एवं व्यक्तिगत समस्याओं में अन्तर होता है। इस कारण सभी के उपचार की तकनीक भी अलग-अलग होती है। एकीकृत परामर्श उपागम इस विचारधारा पर आधारित है कि मानव मनोविज्ञान की समस्या को समझने का कोई एक रास्ता नहीं है, बल्कि विभिन्न परामर्श के एकीकृत उपागमों द्वारा उनका समाधान सम्भव हो सकता है।

एकीकृत उपचार उपागम व्यक्ति के व्यक्तित्व तथा समेकित आवश्यकताओं जैसे व्यवहारवादी, बौद्धात्मक, मनोवैज्ञानिक चक्र आदि को प्रभावित करती है। इन एकीकृत उपागमों को परामर्श के विभिन्न उपागमों के साथ्ज्ञ उपयोग किया जाता है।

यह परामर्श उपागम निर्देशित तथा अनिर्देशित दोनों उपागमों का मिला-जुला रूप है। इस उपागम में प्रविधि का चयन पूर्ण रूप से अनुभव के आधार पर किया जाता है। परामर्शदाता भी उसी विधि का चयन करते हैं जो सेवार्थी की आवश्यकताओं और व्यक्तित्व के अनुरूप होती है।

एकीकृत परामर्श उपागम के प्रमुख प्रवर्तक एफ.सी.थार्ने (F.C.Tharne) है। टेलर महोदय ने भी इस परामर्श उपागम में बताया है कि परामर्शदाता सेवार्थी को समझे और उसे स्वीकार करे और परामर्शदाता को भी ऐसा संप्रेषण करना चाहिए कि सेवार्थी को भी लगे कि परामर्शदाता मेरी समस्या को समझ तथा स्वीकार कर रहा है।

टेलर ने इस उपागम में तकनीक से अधिक परामर्श संबंधों पर अधिक बल दिया है तथा इनके अनुसार परामर्श के लिए खुलेपन, आत्मीयता एवं विश्वास का वातावरण होना चाहिए।

परामर्शदाता इस परामर्श उपागम सेवार्थी को आवश्यकतानुसार सूचनाएँ भी प्रदान करते हैं तथा विलियमसन की तरह मैदानिक उपकरणों जैसे- परीक्षण, मापनियाँ, केसहिस्ट्री आदि का भी प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार यह उपागम एक मिश्रित परामर्श उपागम की तरह कार्य करता है जहाँ पर परामर्शदाता सुविधानुसार किसी भी विधि का प्रयोग कर सकता है तथा इस उपागम में परामर्शदाता एवं सेवार्थी दोनों ही अपनी सक्रिय भुमिका निभाते हैं।

थार्ने के अनुसार एकीकृत परामर्श उपागम के कार्य निम्नलिखित हैं-

(अ) समस्या के आंकड़ों को अच्छी तरह से समझने के लिए सभी परामर्श के सिद्धान्तों एवं उपागमों के वैध तत्वों की पहचान करना और उन्हें एकीकृत रूप में प्रस्तुत करना।

(ब) विभिन्न सिद्धान्तों, विधियाँ जो उपलब्ध है उनको आंकडो का मूल्यांकन करने के लिए देखना।

(स) प्रार्थी के लिए उपयोगी तत्वों को पहचानने के तथा उपयोग में लेने हेतु खुले विचारों का उपयोग करना।

(1) एकीकृत उपागम का लक्ष्यः-

1. इस उपागम का लक्ष्य व्यक्ति के प्रत्येक स्तर जिसमें मानसिक, शारीरिक व सांवेगिक सभी कार्य सम्मिलित है। इन सभी का अधिकतम एवं सम्पूर्ण विकास करना है।

2. सेवार्थी को आत्म प्रसारण करने हेतु तैयार करना।

3. सेवार्थी को यह बताना कि समस्या की उत्पत्ती के क्या कारण है।

4. सेवार्थी के मन से भय व चिंता को समाप्त करना तथा मनोवैज्ञानिक स्वतन्त्रता प्रदान करना।

5. सेवार्थी के दिमाग एवं शरीर के मध्य स्वस्थ्य सहबंध बनाना।

6. सेवार्थी की व्यक्तिगत सीमाओं एवं बाह्य तीव्र दबाव को कम करना।

(2) **प्रविधियों का चयन:-** सेवार्थी की आवश्यकता अथवा समस्या का अध्ययन करने के पश्चात् इस चरण में सेवार्थी की समस्या के समाधान के लिए उपयुक्त तकनीक या प्रविधि का चयन किया जाता है। ये तकनीक एक या अधिक अथवा मिश्रित भी हो सकती है।

(3) **प्रविधियों का प्रयोग:-** समस्या समाधान के लिए उपयुक्त प्रविधि के चयन के पश्चात् उन प्रविधियों का प्रयोग इस चरण में किया जाता है तथा यहीं से समस्या समाधान की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है।

(4) **प्रभावशीलता का मूल्यांकन:-** इस चरण में समस्या की प्रभावशीलता को देखा जाता है अर्थात् समस्या कितनी सक्रीय या प्रभावी है इसका मूल्ूांकन किया जाता है।

(5) **परामर्श की तैयारी:-** परामर्श का चरण अब प्रारम्भ होता है जिसमें सर्वप्रथम परामर्श के लिए किन-किन विषय-वस्तुओं की आवश्यकता है इनका पुर्वानुमान लगाक र परामर्श की तैयारी की जाती है।

(6) **प्रार्थी एवं अन्य व्यक्तियों की राय प्राप्त करना:-** परामर्श की तैयारी हो जाने पर सेवार्थी को परामर्शदाता परामर्श देता है तथा समस्या समाधान का प्रयास करता है साथ ही परामर्श में परामर्शदाता प्रार्थी तथा अन्य व्यक्तियों की भी राय प्राप्त करता हैं

(7) परामर्श की समाप्ति:- प्रार्थी की राय जानने के पश्चात् परामर्श की समाप्ति कर दी जाती है तथा सेवार्थी भी स्वीकृति देता है कि उसे अब परामर्श की आवश्यकता नहीं है।

एकीकृत परामर्श उपागम के लाभ:-

1. सेवार्थी को अधिकतम लाभ देने हेतु एकीकृत उपागम के द्वारा सभी सिद्धान्तों की तकनीकों को एकत्रित किया जाना संभव हुआ है।

2. यह उपागम सेवार्थी के आंतरिक एवं बाह्य दोनों वातावरणों का अध्ययन करता है।

3. एकीकृत उपागम के माध्यम से सभी व्यक्तियों की समस्या का समाधान संभव है।

4. इस उपागम का व्यवहारिक मूल्य अत्यधिक है।

एकीकृत परामर्श उपागम की कमियाँ:-

1. एक सफल एकीकृत उपागम में सभी सिद्धान्तों का ज्ञान व कौशल होना चाहिए लेकिन यह संभव नहीं है।

2. इस उपागम के अन्य उपागमों के समान कोई निश्चित नियम एवं सिद्धान्त नहीं ह जिनके द्वारा परामर्श दिया जा सके।

3. इस उपागम में कई बार यह निश्चित करना कठिन हो जाता है कि कौनसी तकनीक उपयोग करें या आगे क्या चरण उपयोग में लें।

4. समस्याओं में परिवर्तन से प्रतिदिन परामर्श की तकनीकियों में भी परिवर्तन हो रहे हैं। ऐसे में परामर्शदाता द्वारा सभी तकनीकियों में विशिष्टता प्राप्त करना कठिन है।

5. इस उपागम में समस्या के अनुसार प्रविधियाँ प्रयोग की जाती है तथा कई बार सही प्रविधि काउपायेग नहीं करने से सेवार्थी में असंतोष की भावना आ जाती है।

7.3 परामर्शी केन्द्रित परामर्श उपागम

परामर्श की इस विधि को अनिर्देशित परामर्श भी कहा जाता है। वारेन के अनुसार "इस परामर्श विधि को जीवन का तरीका भी कहा जाता है क्योंकि इस उपचार पद्धति में प्रार्थी स्वयं अपनी समस्या को परामर्शदाता के समक्ष प्रस्तुत करता है व परामर्शदाता उस प्रार्थी को समस्या का स्पष्टीकरण देने हुए उसकी उसकी अन्त्रदृष्टि को उस समस्या के संबंध में विकसित करने का प्रयास करता है।" अतः प्रार्थी को उसकी क्षमताओं की पहचान में सहायता के लिए परामर्शदाता को भी मनोवैज्ञानिक रूप से विकसित होना चाहिए। उसे स्वयं को जो वह वास्तव में है स्वीकार करना चाहिए और स्वयं को तथा अन्य को आदर की भावना के साथ स्वीकार कर क्षमताओं की वृद्धि के लिये निरन्तर प्रयास करते रहना चाहिए।

परामर्शदाता इस विधि में ऐसा वातावरण सेवार्थी को प्रदान करता है जहाँ पर प्रार्थी बिना भय के अपने विचारों एवं भावनाओं को अभिव्यक्त कर सके। ऐसे वातावरण में प्रार्थी की आलोचना दिये जाने का भय नहीं होना चाहिए। परामर्शदाता प्रार्थी के संदर्भ में जानने का प्रयास करता है जिससे वह सभी समस्याओं का प्रत्यक्षीकरण उसी तरह से कर सके जिस तरह प्रार्थी करता है इस विधि में सूचना स्वयं प्रार्थी बताता है। इस विधि का मुख्य उद्देश्य परिवर्तन होता है। परिवर्तन की जिम्मेदारी प्रार्थी की होती है। परामर्शदाता की नहीं क्योंकि प्रार्थी के भीतर होना चाहिए। इसके अनुसार प्रार्थी में विकास की क्षमता होती है। अतः विकास का गुण प्रार्थी में होता है। प्रार्थी ही परिवर्तन की प्रकृति तथा गति को निर्धारित करता है। परामर्शदाता मात्र एक उत्प्रेरक होता है जो प्रार्थी को उसके द्वन्दों को समाप्त करने एवं वृद्धि व विकास के स्त्रोतों को उपयोग करते हुए कठिनाईयों को दूर करने का प्रयास करता है।

इस विधि में भी अन्य विधियों की तरह ही परामर्शदाता कुशल होना चाहिए क्योंकि पर्याप्त ज्ञान व शिक्षा की कमी परामर्शदाता को भ्रमित कर सकती है। इस विधि में उसे निष्क्रिय भूमिका निभानी होती है। अतः वह कभी निष्क्रिय हो जाता है, प्रार्थी जो भी बोलता है उससे स्वयं को अलग कर लेता है। और कभी सक्रिय हो जाता है तो वह प्रार्थी से ध्यान हटा कर परामर्श प्रक्रिया को निर्देशित करने लगता है।

प्रार्थी केन्द्रित परामर्श की विशेषताएँ निम्न है-

1. यह प्रार्थी केन्द्रिय परामर्श उपागम है।

2. यह इस सिद्धान्त पर आधारित है कि व्यक्ति में इतनी क्षमता और शक्ति होती है जिससे कि उसकी वृद्धि और विकास हो सके ताकि वह व्यक्ति वास्तविक रूप में परिस्थितियों का सामना कर सके।

3. इस विचारधारा में परामर्शदाता बहुत अधिक निष्क्रिय होता हैं

4. इस विचारधारा में व्यक्ति को अपनी भावना को अभिव्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है।

5. यह मनोवैज्ञानिक समायोजन में सुधार करती है।

6. प्रार्थी का व्यवहार संवेगात्मक रूप में अधिक परिपक्व माना जाता है।

7. इस परामर्श में परामर्शदाता का लक्ष्य सामान्य होता है। प्रार्थी के स्वयं के संगठन और कार्यशीलता में परिवर्तन लाया जाता है।

8. यह परामर्श निर्देशीय परामर्श के बिल्कुल विपरीत है।

9. इस परामर्श में सम्पूर्ण उत्तरदायित्व प्रार्थी पर ही रहता है।

10. इस प्रकार के परामर्श से सुरक्षात्मकता में कमी आती है।

11. इस परामर्श के उपयोग द्वारा मनोवैज्ञानिक तनाव कम होता है।

परामर्शी केन्द्रित परामर्श विधि मनोविश्लेषण से काफी मिलती-जुलती है। दोनों में ही चेतन-अवचेतन-स्तर पर प्रस्तुत भावना इच्छाओं की अभिव्यक्ति के लिए पूरी आजादी रहती है। अंतर केवल यह है कि अनिर्देशात्मक उपचार में रोगी को वर्तमान की समस्याओं से परिचित रखा जाता है, जबकि मनोविश्लेषण में उसे अतीत की स्मृतियों व अनुभूतियों की ओर ले जाया जाता है। मानसिक उपचार की यह विधि सफल रही है क्योंकि जैसे ही रोगी में एक विशिष्ट सूझ पैदा होती है, वह स्वस्थ हो जाता है।

उपचारार्थी केन्द्रित परामर्श एक मनोवैज्ञानिक विधि है जो कार्ल रोजर्स द्वारा प्रतिपादित की गई है। रोजर्स का स्व-वाद प्रसिद्ध है, जो अधिकांशतः उपचार प्रक्रिया या परिस्थितियों से उद्धत प्रदत्तों पर अवलंबित है। रोजर्स की मूल कल्पनाएँ स्वविकसित, स्वज्ञान, स्वसंचालन, बाह्य तथा आंतरिक अनुभूतियों के साथ परिचय, सूझ का विकास करना, भावों की वास्तविक रूप में स्वीकृति इत्यादि से संबंधी है। वस्तुतः व्यक्ति में वृद्धि विकास, अभियोजन एवं स्वास्थ्यलाभ तथा स्वस्फुटन की स्वाभाविक वृत्ति होती है। मानसिक संघर्ष तथा संवेगात्मक क्षोभ इस प्रकार की अनुभूति में बाधक होते हैं। इन अवरोधों का निवारण भावों के प्रकाशन और उनको अंगीकार करने से सूझ के उदय होने से हो जाता है।

इस विधि में ऐसा वातावरण उपस्थित किया जाता है कि रोगी अधिक से अधिक सक्रिय रहे। वह स्वतंत्र होकर उपचारक के सम्मुख अपने भावों, इच्छाओं तथा तनाव संबंधी अनुभूतियों का अभिव्यक्तीकरण करें, उद्देश्य, प्रयोजन को समझे औी संरक्षण के लिए दूसरे पर आश्रित न रह जाए। इसमें स्वसंरक्षण अथवा अपनी स्वयं की देख-रेख आवश्यक होती है। उपचारक परोक्ष रूप से, बिना हस्तक्षेप के रोगी को

वस्तुस्थिति की चेतना में केवल सहायता देता है, जिससे उसके भावात्मक, ज्ञानात्मक क्षेत्र में प्रौढ़ता आए। वह निर्देश नहीं देता, न ही स्थिति की व्याख्या करता है।

7.3.1 प्रार्थी केन्द्रित परामर्श विधि की परिकल्पनाएँ

रोजर्स ने अपने लेखों में निम्न परिकल्पनाएँ प्रस्तुत की है जो इस प्रकार है-

1. व्यक्ति के अन्दर अपनी समस्या को समझने की क्षमता होती है जो उसके लिए असंतुष्टि, चिंता व दर्द का कारण बनते हैं।
2. व्यक्ति में स्वयं के अधिक आंतरिक आराम के लिए पुर्नसंगठित करने एवं जीवन में स्वयं की वृद्धि की दिशा में कार्य करने की क्षमता होती है।
3. जब परामर्शदाता मनोवैज्ञानिक वातावरण का निर्माण कर देता है तो व्यक्ति की क्षमता स्वतंत्र हो जाती है और उसकी वृद्धि सुविधाजनक हो जाती है।
4. स्वीकृति, समझ एवं बिना भय वाले वातावरण में प्रार्थी स्वयं को चेतना तथा व्यक्तित्व के और अधिक गहरे स्तर पर इस तरह पुर्नसंगठित करने का प्रयास करता है ताकि जीवन के साथ उसका समायोजन अधिक बौद्धिक, संतोषजनक एवं धनात्मक रूप से हो सके।

रोजर्स ने अपने शोध-पत्रों में निम्नलिखित अधिगम परिवर्तन जो कि व्यक्ति में प्रार्थी केन्द्रित परामर्श के दौरान होते हैं उनके सम्बन्ध में स्पष्ट किया है-

- व्यक्ति स्वयं को अलग तरीके से देखने लगता है।
- वह अपने को तथा अपनी भावनाओं को स्वीकार करने लगता है।
- वह अधिक आत्मविश्वासी बनता है।
- वह अधिक वयस्क तरीके से काम करता है।
- वह उसके कुसमायोजित व्यवहार में परिवर्तन् लाता है।
- वह दूसरों के लिए अधिक स्वीकृति रखता है।
- वह तथ्यों के लिए खुलापन रखता है।
- वह अपने मूलभूत व्यक्तित्व विशेषताओं में धनात्मक रूप में सृजनात्मक परिवर्तन लाता है।

7.3.2 अधिगम की स्थितियाँ (Condition of Learning)

रोजर्स ने प्रार्थी केन्द्रित परामर्श उपागम में अधिगम को सुविधाजनक होने के लिए निम्न परिस्थितियाँ आवश्यक बतायी हैं-

1. परामर्शदाता को अपनी सेवाएँ¬ किसी पर थोपनी नहीं चाहिए बल्कि परामर्शदाता के लिए यह सही होगा कि वह अपनी भावनाओं को स्पष्ट रूप में कह दे।

2. परामर्श संबंधों में परामर्शदाता एकीकृत व्यक्ति के रूप में होना चाहिए। उसे वही होना चाहिए जो वह महसूस करता है। परामर्श की प्रक्रिया तब और शीघ्र बढ़ती है जब परामर्शदाता प्रार्थी को मन से स्वीकार करता है और समझता है।

3. परामर्शदाता परानुभूतिपूर्वक व्यवहार प्रदर्शित करता है। परानुभूति से आशय प्रार्थी के स्थान पर स्वयं को रखकर देखना। परानुभूति की प्रक्रिया परामर्शदाता, प्रार्थी की जगह अपने आपको रखकर देखता है लेकिन स्वयं की पहचान कभी नहीं खोता है।

4. प्रार्थी परामर्शदाता की स्वीकृति और परानुभूति को प्रत्यक्षीकृत करता है। परामर्शदाता के लिए परानुभूति प्राप्त करना ही आवश्यक नहीं है बल्कि उसे इसे संप्रेषित भी करना चाहिए।

निदान ;क्पंहदवेपेद्धरू. रोजर्स के अनुसार निदान करना प्रार्थी की ही जिम्मेदारी है न कि परामर्शदाता की। यदि परामर्शदाता जानता भी है कि प्रार्थी में कुसमायोजन क्यों है फिर भी वह प्रार्थी की समस्या समाधान के लिए अपने ज्ञान का उपयोग नहीं करता है।

प्रार्थी केन्द्रित परामर्श उपागम के अनुसार परामर्शदाता द्वारा मूल्यांकन के रूप में निदान न केवल अनावश्यक है बल्कि किन्हीं तरीकों में नुकसानदायक तथा मूर्खतापूर्ण भी है, क्योंकि इससे प्रार्थी की निर्भरता में वृद्धि होती है। रोजर्स ने इस परामर्श के लिए परीक्षणों आदि के उपयोग को पूर्णतया अस्वीकार करता है।

6.3.4 सूचनाएँ प्रदान करना (Information Giving):-

रोजर्स ने निम्न उद्देश्यों के लिए सूचना देना परामर्श में उपयोगी माना है-

1. किसी विकल्प को स्पष्ट करने में सूचनाओं द्वारा सहायता करना।

2. किसी भी प्रकार के निर्णय को लागू करने के लिए सूचनाएँ देना।

3. प्रार्थी की वास्तविक समस्या को खोजने के लिए सूचना द्वारा सहायता करना।

परामर्शदाता को प्रार्थी की समस्या को हल करने हेतु सूचना एँ देनी चाहिए लेकिन इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि व्यक्ति परामर्श संबंधों में वास्तव में सूचनाओं से अधिक और कुछ नहीं चाहता है।

7.3.5 मूल्यों का विकास(Development of Values):-

रोजर्स ने कहा है कि परामर्शदाता द्वारा किसी विशिष्ट मूल्य या दर्शन को प्रार्थी पर नहीं थोपना चाहिए।

परामर्श की प्रक्रिया प्रार्थी के मूल्यों में बदलाव लाती है। प्रार्थी केन्द्रित परामर्श में प्रार्थी को महसूस करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाती है। प्रार्थी के मूल्य स्थिर नहीं होते हैं। अनुभव एवं परिस्थितियों के साथ मूल्यों में परिवर्तन आता है। समान व्यवहार के लिए उसकी प्रतिक्रियाएँ भिन्न होती है क्योंकि उनमें वह उनकी परिस्थितियों, अभिप्रेरणाओं में अन्तर प्रत्यक्षीकृत करता है। तत्पश्चात् वह स्वयं पर विश्वास करने लगता है। वह खुलेपन, स्वयं की व दुसरों की प्रतिक्रियाओं के लिए व संसार की वास्तविकता को मूल्य देने लगता है। वह दुसरों को स्विकार करने लगता है और उनसे निकट एवं पूर्ण संप्रेषित संबंध बनाता है।

प्रार्थी केन्द्रित उपागम के निम्न चरण (Step) प्रकार है-

1. **समस्यात्मक परिस्थितियों को परिभाषित करना:-** इस चरण में प्रार्थी अपनी समस्या को परामर्शदाता के समक्ष व्यक्त करता है तथा समस्या के कारणों एवं उसे प्रभावित करने वाले कारकों को भी स्पष्ट करता है।

2. **भावनाओं की स्वतंत्र अभिव्यक्ति:-** प्रथम चरण के पश्चात् परामर्शदाता प्रार्थी को ऐसा वातावरण प्रदान करता है कि अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति स्वतं. व खुले रूप से कर सके।

3. **सकारात्मक और नकारात्मक भावनाओं का वर्गीकरण:-** प्रार्थी की भावनाओं को अभिव्यक्त करने के बाद परामर्शदाता प्रार्थी के सकारात्मक एवं नकारात्मक भावनाओं को पहचान करके उन्हें वर्गीकृत करता है।

4. **अंतर्दृष्टि का विकास:-** इस चरण में प्रार्थी की समस्या के प्रति सूझ तथा अंतदृष्टि का निर्माण होता है तथा अंतदृष्टि के विकास के साथ परामर्शदाता प्रार्थी की नई भावनाओं के बारे में भी चिन्तन जारी रखता है और उन नई भावनाओं का भी वर्गीकरण करता रहता है।

5. **परामर्श स्थिति समाप्त करना:-** प्रार्थी की समस्या के समाधान के पश्चात् परामर्शदाता उस स्थिति की तलाश में रहता है जहाँ पर परामर्श को समाप्त किया जा सके। लेकिन परामर्श की स्थिति को समाप्त करने का निर्णय स्वयं प्रार्थी ही करता है।

7.3.6 परामर्श केन्द्रित परामर्श की सीमाएँ:-

1. यह परामर्श मनोविश्लेषण की तरह गहरा नहीं होता है।

2. इस विधि में समय अधिक लगता है एवं कुछ व्यक्तियों एवं लोगों पर इस विधि का प्रभाव नहीं होता है।

3. इसमें केवल वर्तमान के बारे में ही वार्तालाप होता है, भुतकाल के बारे में कोई खोज नहीं की जाती है।

4. परामर्शदाता को लचीलेपन की आज्ञा का अभाव भी इस परामर्श की एक कमी है।

5. कई बार परामर्शदाता की निष्क्रियता से प्रार्थी भावनाओं की अभिव्यक्ति में कइिनाई महसूस करता है।

6. प्रार्थी केद्रित परामर्श सिद्धान्त के अन्तर्गत बहुत सी परामर्श परिस्थितियाँ सफलतापूर्वक नहीं आती।

7. सभी परिस्थितियों में प्रार्थी के साधनों, निर्णयों एवं बुद्धिमत्ता पर निर्भर नहीं रहा जा सकता।

8. सभी समस्याएँ केवल बोलकर हल नहीं हो सकती है।

9. इसमें वातावरण किस प्रकार से व्यक्ति को प्रभावित कर रहा है इस पर भी ध्यान नहीं दिया जाता।

10. कई बार परामर्शदाता की निष्क्रियता कुछ प्रार्थियों के लिए उलझन उत्पन्न करती है।

11. उच्च बौद्धिक स्तर वालों पर ही यह विधि सफल होती है।

7.3.7 परामर्श केन्द्रित उपागम का योगदान या लाभः-

1. इसका उपयोग विभिन्न समस्याओं के निराकरण में जैसे व्यक्तिगत, सामूहिक, पारिवारिक तथ्ज्ञा व्यवसाय आदि में किया जाता है।

2. इस विचारधारा से प्रार्थी में समस्या समाधान की योग्यता उत्पन्न होना निश्चित है चाहे यह प्रक्रिया बहुत धीमी हो।

3. इसमें परामर्शदाता प्रार्थी के सम्बन्ध में निर्णय नहीं लेना है बल्कि प्रार्थी स्वयं निर्णय लेता है, जिससे आत्म विश्वास में वृद्धि होती है।

4. यहाँ प्रार्थी केद्रित विचारधारा होने के कारण अन्य आवश्यक गतिविधियों और परीक्षणों से बचाव हो सकता है।

6. यह उपागम प्रार्थी में समस्या समाधान की योग्यता उत्पन्न करती है और लम्बे समय तक प्रभाव छोड़ती है।

7. यह बहुत ही सरल उपागम है।

7.4 सारांश

परामर्श दो व्यक्तियों के मध्य की प्रक्रिया है जिसमें समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता परामर्श द्वारा की जाती है लेकिन परामर्श देने के भी भिन्न-भिन्न उपागम होते हैं। इसमें इस इकाई में सेवार्थी की समस्या समाधान के लिए एकीकृत उपागम को परामर्श की विभिन्न उपागमों से जोड़ते हुए सेवार्थी की समस्या समाधान कैसे-कैसे की जा सकती है इस सम्बन्ध में वर्णन किया है। साथ ही परामर्शी केन्द्रित परामर्श जिसे अनिर्देशात्मक परामर्श भी कहा जाता है जिसमें बिना सेवार्थी को निर्देश दिए स्वयं सेवार्थी ही अपनी समस्या का समाधान करता है। ऐसी उपागम के सम्बन्ध में विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

7.5 शब्दावली

एकीकृत उपागम परामर्शः- एकीकृत उपागम परामर्श के विभिन्न उपागमों से सम्बन्धित है जिसमें सवार्थी की सहायता परामर्श के विभिन्न उपागमों के सहयोग द्वारा की जाती है।

उपनिर्दशात्मक चिकित्सा परामर्शः' परामर्शी केन्द्रित परामर्श उपागम को उपचारार्थी केन्द्रित मनश्चिकित्सा या व्यक्ति केन्द्रित चिकित्सा या अनिर्देशात्मक चिकित्सा से भी जाना जाता है।

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. एकीकृत उपागम से आप क्या समझते हैं, व्याख्या कीजिए।
2. परामर्श में विभिन्न एकीकृत उपागमों का उपयोग कैसे किया जाता है समझाइये।
3. परामर्शी केन्द्रित उपागम के चरणों या पदों को विस्तृत में लिखिये।
4. परामर्शी केन्द्रित उपागम की विशेषताएँ लिखिये।
5. परामर्शी केन्द्रित उपागम की सीमाओं एवं लाभों की विस्तृत में व्याख्या कीजिए।

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. चैहान, विजय लक्ष्मी (2004), निर्देशन एवं परामर्श: अंकुर प्रकाशन, उदयपुर
2. राम (2000) 'परिवार परामर्श', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर
3. ए.सी. आबेराय कैरियर निर्देशन एवं कैरियर सूचना , हिमांशु पब्लिकेशन
4. स्टाॅनले लिपकीन (1940) 'द क्लाइट इवेल्युएट्स नाॅन डयरेक्त साइकोथेरेपी, जर्नल आॅफ कन्सल्टिंग साइक्लोजी
5. शंकर राबर्ट एच. (1957) गाइडेन्स एण्ड काउन्सलिंग, सोशल वर्क इयर बुक।

6. स्टामले, लिप्किन (1948) द क्लाईंट इवेल्यूएट्स नोन डायरेक्टिव साइकोथेरेपी, जर्नल आॅफ कन्सल्टिंग साइकोलोजी

इकाई - 8

परामर्श एवं मनोचिकित्सा

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 परामर्श एवं मनोचिकित्सा

8.2.1 परामर्श: अवधारणा एवं उपयोग

8.2.2 परामर्श: विशेषताएँ

8.2.3 मनोचिकित्सा: परिभाषा एवं उद्देश्य

8.2.4 मनोचिकित्सा: चरण एवं पद्धतियाँ

8.3 परामर्श एवं मनोचिकित्सा में समानताएँ

8.4 परामर्श एवं मनोचिकित्सा में असमानताएँ

8.5 सारांश

8.6 शब्दावली

8.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:-

- परामर्श की अवधारणा के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- मनोचिकित्सा की अवधारणा एवं चरण तथा पद्धतियों के बारे में जान सकेंगे।
- परामर्श एवं मनोचिकित्सा में समानताओं एवं असमानताओं को समझ सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

वर्तमान युग भौतिकवाद की ओर उन्मुख हो रहा है। पर्यावरण में परिवर्तन के फलस्वरूप समाज में नई समस्याएँ प्रारम्भ हो रही है। बदलते पर्यावरण में स्वस्थ समायोजन की दृष्टि से स्वस्थ शारीरिक और मानसिक विकास आवश्यक है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए आवश्यक है कि शरीर केवल शारीरिक रोगों से ही दूर तथा मुक्त न हो बल्कि मानसिक रोगों से भी मुक्त हो।

मानसिक रोगों के समाधान के लिए मनोचिकित्सा का प्रयोग किया जाता है, जो व्यकित के मन से विकारों को नष्ट करती है एवं उसमें आत्मविश्वास का निर्माण करती है। उसी तरह परामर्श भी मनोचिकित्सा का ही एक भाग है परन्तु परामर्श का क्षेत्र विस्तृत है।

इस अध्याय में परामर्श एवं मनोचिकित्सा के मध्य अंतर को स्पष्ट किया गया है ताकि इन दोनों को एक समान मानने का भ्रम न हो।

8.2 परामर्श एवं मनोचिकित्सा

परामर्श एवं मनोचिकित्सा दोनों ही व्यक्तियों के समायोजन में सहायता करते हैं। परामर्श किसी विशिष्ट समस्या के सम्बन्ध में दिया जाता है, उसी प्रकार मनोचिकित्सा को मानसिक रोगों को दूर करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। परामर्शदाता के लिए सामान्य समस्याओं के ज्ञान के साथ-साथ मनोविकासात्मक ज्ञान भी आवश्यक है।

8.2.1 परामर्श: अवधारणा एवं उपयोग

परामर्श एक प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा किसी व्यक्ति को बातचीत के माध्यम से दी जाने वाली व्यक्तिगत सहायता है जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं को तथा अपने वातावरण जिससे वह प्रशासित है को समझ सके एवं अपनी समस्या का समाधान खोज सके और अपने वातावरण के साथ सही रूप से समायोजित हो सके। मुख्य रूप से परामर्श दो या दो से अधिक व्यक्तियों के समूह के मध्य समझ एवं तारतम्यता स्थापित करने की संबंधात्मक प्रक्रिया है जो निश्चित उद्देश्य व लक्ष्य को लेकर प्रारम्भ होती है और इनकी पुर्ति पर उन व्यक्तियों को पुर्नस्थापित एवं पुर्नवासित करती है।

परामर्श में सेवार्थी को कोई ठोस सेवा नहीं प्रदान की जाती है। लेकिन सेवार्थी तथा परामर्शदाता मिलकर समस्या से संबंधित बातचीत करते हैं। वार्तालाप तथा तर्कवितर्क इस तरह करते हैं, कि सेवार्थी के व्यक्तित्व का कुछ अंश प्रकट होता है। तत्पश्चात् परामर्शदाता समस्या के रूप का स्पष्टीकरण करता है जिससे सेवार्थी का अहं और सुदृढ़ हो सके। भविष्य में पुनः ऐसी समस्या उत्पन्न होने पर सेवार्थी अपनी सूझ विकसित होने से उसकी मनोवृत्ति, विश्वास एवं मूल्यों में धनात्मक परिवर्तन लाता है, और समस्या का निदान सरलता से कर लेता है।

परामर्श के अन्तर्गत सूचना का प्रदान किया जाना, परिस्थिति का स्पष्ट किया जाना व इससे संबंधित मुद्दों का विश्लेषण किया जाना तथा क्रिया से संबंधित विभिन्न चरणों का विवेचन किया जाना सम्मिलित है। इसका प्रयोग परिस्थिति की वास्तविकताओं से संबंधित विषयों पर विचार-विमर्श करने तथा यह

निर्धारित करने के लिए कि इसका कितना अंश इच्छा या कल्पना से संबंधित है। यदि सामाजिक समस्या से कोई अन्य व्यक्ति संबंधित होता है तो परामर्श मनोचिकित्सा का स्वरूप ग्रहण करने लगती है और अधिक सरल रूप में परामर्श का उद्देश्य बौद्धिक ज्ञान प्राप्त करना होता है।

परामर्श की प्रमुख विधि स्पष्टीकरण है। स्पष्टीकरण का आशय रोगी को निश्चित मनोवृत्तियों, भावनाओं के प्रति जाग्रत करना होता है जिससे वह स्वयं तथा पर्यावरण को अधिक वस्तुगत देखता है और इससे नियंत्रण की मात्रा में वृद्धि होती है।

परामर्श के अन्तर्गत सूचना देना, व्यवस्था करना तथा इसके विषयों की व्याख्या करना सम्मिलित होता है। परामर्श द्वारा रोगी की समस्या को स्पष्ट करके उसके अहं को सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न किया जाता है।

वास्तव में परामर्श एक मनोवैज्ञानिक पहलू है। परामर्श के अन्तर्गत रोगी को कोई विशेष ठोस सेवा नहीं प्रदान की जाती है केवल मार्गदर्शन करने का प्रयत्न किया जाता है। लेकिन मनोचिकित्सा में रोगी को बिना ठोस सेवा दिये उपचार नहीं किया जाता है।

अतः परामर्श किसी विशेष समस्या के हल करने के लिए दिया जाता है जैसे वैवाहिक समस्या, परिवार तथा विद्यालय की समस्या आदि। परामर्शदाता का ज्ञान, योजना व अनुभव उस रोगी को विशिष्ट सहायता प्रदान करने में ही उपयोग लिया जाता है। वह उसी समस्या का समाधान करता है जिसमें वह दक्ष हैं इस प्रकार परामर्शदाता का केन्द्र बिन्दु विशिष्ट प्रकार की समस्या होती है। परन्तु यदि सामाजिक समस्या में दुसरा व्यक्ति जैसे माता-पिता, बालक, पति, पत्नी या अन्य घनिष्ठ सम्बन्धी भी निहित होते हैं तो परामर्श मनोचिकित्सा की दिशा में मुड़ जाती है।

परामर्श दो व्यक्तियों के बीच के संबंध की प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति समस्याग्रस्त होता है। जिसे वह अकेला हल नहीं कर पाता है और दूसरा प्रोफेशनल कार्यकर्ता होता है जो प्रशिक्षित व अनुभवी होता है जिसमें वह विभिन्न प्रकार की व्यक्तिगत कठिनाईयों के लिए समाधान तक पहुँचने के लिए दूसरे व्यक्ति (परामर्शदाता) से सहायता चाहता है। लेकिन इनके मध्य सम्बन्ध व्यवसायिक होते हैं जिसमें परामर्शदाता मानव व्यक्तित्व के सुव्यवस्थित ज्ञान पर आधारित मनोवैज्ञानिक विधियों का प्रयोग व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर करने के लिए करता है।

8.2.2 परामर्श: विशेषताएँ

1. परामर्श विशिष्ट होता है। किसी विशेष समस्या के सन्दर्भ में ही दिया जाता है।

2. परामर्श दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच की प्रक्रिया है।

3. परामर्श में परामर्शदाता के पास मनोविज्ञान का ज्ञान तथा मनोवैज्ञानिक कौशल व अनुभव तथा योग्यता होती है और दूसरा व्यक्ति (सेवार्थी) सहायता चाहता हैं

4. परामर्श का विशेषीकरण होने पर भी इन विभिन्न शाखाओं को पूर्ण रूप से एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है।

5. सेवार्थी की समस्या का केन्द्र बिन्दु एक ही होता है तथा एक क्षेत्र में ली गयी सहायता का महत्त्व दूसरे से भिन्न होता है।

6. परामर्श की प्रक्रिया में साक्षात्कार के माध्यम से समस्या को स्पष्ट किया जाता है।

7. परामर्शदाता परामर्श की प्रक्रिया में व्यक्ति से तथ्य उगलवाता है और वह स्वयं भी सबंधित व्यक्तियों को तथ्यों से सूचित करता है।

8. परामर्श में अन्तक्रिया होती है जिसमें परामर्शदाता दूसरे व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में सकारात्मक योगदान करने का उत्तरदायित्व देता है।

9. परामर्श व्यक्तियों के समायोजन के मार्ग में आने वाली समस्याओं को समाप्त करने में सहायता करता है।

10. परामर्श, परामर्शदाता की भविष्यवाणी की उपयुक्तता पर आधारित है।

11. परामर्श का केन्द्र चाहे परिवार या वैवाहिक कुछ भी हो यदि वह इस दिशा में प्रयास करना चाहता है तो उसके स्वयं के विषय में समझ प्राप्त करनी चाहिएं यह प्रयास सेवार्थी को मनोचिकित्सा की ओर अग्रसर करती है। प्रायः जब एक व्यक्ति जो पहले मंत्रणा के आधार पर सहायता प्राप्त करता है बाद में मनोचिकित्सा के द्वारा चिकित्सा प्राप्त करने का निर्णय करता है।

12. परामर्शदाता सेवार्थी को स्वयं अपनी समस्या को समझने एवं स्पष्ट करने का मौका देता है। वह सेवार्थी को स्वयं यह निर्धारित करने देता है कि उसे किस प्रकार की परामर्श की आवश्यकता है क्योंकि ऐसे निर्णय कभी-कभी चिकित्सा पद्धति के आरम्भिक बिन्दु होते हैं।

13. परामर्श प्रविधि की उत्पत्ति चिकित्सा से ही हुई है। यह सहायता का एक ऐसा रूप है जिसको न तो नैदानिक ओर न ही कार्यात्मक सम्प्रदाय पूर्ण रूप से अपना कहते हैं। दोनों ही सम्प्रदाय परामर्श के लिए मनोचिकित्सा के प्रति आभार प्रकट करते हैं।

8.2.3 मनोचिकित्सा: परिभाषा एवं उद्देश्य

मनोवैज्ञानिक विधियों द्वारा मन के विकारों की चिकित्सा करना ही सामान्य अर्थ में मनोचिकित्सा है। मनोचिकित्सा का मुख्य उद्देश्य रोगी एवं उसके पर्यावरण के मध्य समायोजन स्थापित करना है। मनोचिकित्सा में सेवार्थी को सामान्य व्यक्ति बनाने, उसकी समस्याओं का निराकरण करने एवं विकारों को दूर कर, उसे समायोजन योग्य बनाने का प्रयास किया जाता है। सेवार्थी में कुछ दामित इच्छाएँ होती है जिनको वह समझने में असमर्थ होता है। मनोचिकित्सा में उस व्यक्ति के मानसिक संघर्षों के कारणों का निराकरण कर उसे आत्म का ज्ञान कराया जाता है जिससे उस सेवार्थी की समस्या तथा व्यवहार के सम्बन्ध को समझने में अन्रतदृष्टि का विकास होता है।

मनोचिकित्सा की परिभाषाएँ:-

पेज के अनुसार, "मनोचिकित्सा का अर्थ मनोवैज्ञानिक प्रविधियों के द्वारा, मानसिक विकारों का तथा विशेष रूप से विभिन्न मनस्तापों का उपचार करना है।

लैण्डिस और वाल्स (1950) के अनुसार- "मनोचिकित्सा का अर्थ मानव मन के ऊपर मानव मानसिक साधनों के द्वारा प्रभाव डालने की क्रिया है, जिसका अभिप्राय रोग का निराकरण करना है।

वोल्वर्ग के अनुसार- "मनोचिकित्सा सांवेगिक प्रकृति की समस्याओं के उपचार का एक तरीका है जिसमें प्रशिक्षित व्यक्ति व्यवधानात्मक व्यावहारिक तरीकों को सुधारने, परिवर्तित करने, लक्षणों को दूर करने तथा सकारात्मक व्यक्ति विकास एवं वृद्धि करेन के लिए रोगी से जानबूझकर व्यावसायिक संबंध स्थापित करता है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि मनोचिकित्सा का सम्बन्ध केवल मानसिक रोगों के उपचार से ही संबंधित है। ऐसे मानसिक विकार से पीडित व्यक्तियों की बीमारियों का बड़े स्तर पर राहत मनोचिकित्सा द्वारा दिया जाता है। अतः मनोचिकित्सा का क्षेत्र अति व्यापक है।

मनोचिकित्सा का उद्देश्यः-

1. रोगी के आत्म विश्वास में वृद्धि करना।
2. रोगी का आत्मसम्मान एवं सुरक्षा को बनाये रखना।
3. रोगी की कार्यक्षमता को सामान्य रखना।
4. मनोचिकित्सा द्वारा रोगी में साहस व उत्साह की वृद्धि करना।
5. रोगी की अन्तर्दृष्टि में वृद्धि करना।
6. रोगी की समस्या का निराकरण करके उसे विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन करने में सहायता देना।
7. रोगी की कमजोरियों को दूर करना। रोगी की कमजोरियों के अन्तर्निहित कारकों को समझना।
8. रोगी में सांवेगिक तनाव एवं प्रतिबल को कम करना।
9. रोगी के पारिवारिक एवं सामूहिक संबंधों को अर्थपूर्ण एवं संतोषप्रद बनाना।
10. रोगी के आत्म का समुचित विकास करना।

मनोचिकित्सा का मुख्य लक्ष्य रोगी के जीवन को सुखमय तथा शांतिदायक बनाना है। विभिन्न मानसिक विकारों से पीडित व्यक्ति कुसमयोजित ही नहीं होते हैं बल्कि उनके जीवन में प्रसन्नता का भी ह्रास हो जाता है। इसलिए मनोचिकित्सा रोगी में प्रसन्नता लाती है एवं आत्मविश्वास में वृद्धि उत्पन्न करती है। कोलमेन (1976) में मनोचिकित्सा के निम्न लक्ष्य बताये हैं-

1. कुसमायोजित व्यवहार प्रतिमानों को परिवर्तित करना।

2. कुसमायोजित परिस्थितियों को रोगी के जीवन में कम करना।

3. अन्रतवैयक्तिक क्षमताओं में वृद्धि करना।

4. नकारात्मक अन्तर्द्वन्दों को कम करना।

5. रोगी की स्वयं के प्रति गलत सोच को परिवर्तित कर सकारात्मक विचार उत्पन्न करना।

6. अर्थपूर्ण तथा रचनात्मक जीवन की प्राप्ति हेतु जीवन मार्ग का निर्माण करना।

8.2.4 मनोचिकित्सा: चरण एवं पद्धतियाँ

मनोचिकित्सा के निम्न मुख्य चरण इस प्रकार हैं-

1. सर्वप्रथम रोगी के लिए उपचारात्मक वातावरण तथा सम्बन्धों का सृजन करने के लिए रोगी के साथ अकेले में विचार-विमर्श और साक्षात्कार करना।

2. द्वितीय स्तर पर जब रोगी का कार्यकर्ता तथा मनोचिकित्सक से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तो रोगी अपने सांवेगिक तनावों तथा अन्रतद्वन्द्वों को चिकित्सा के समक्ष प्रस्तुत करता है जिससे रोगी को शांति का अनुभव होता है व उसके मन से दबाव चिंता कम होने से स्वयं को हल्का महसुस करता है।

3. तृतीय स्तर में रोगी के संवेगात्मक तनाव जैसे-जैसे बाहर निकलते हैं, रोगी को अपनी प्रेरणा एवं व्यवहार तथा समस्या के प्रति ज्ञान में वृद्धि होती है। यह आत्मबोध तथा अन्रतदृष्टि मनोचिकित्सा में बहुत ही महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।

4. चतुर्थ स्तर पर जब रोगी की अपने समस्याओं के प्रति अन्रतदृष्टि बढ़ने से उसे यह ज्ञात हो जाता है कि विगतकाल में उसके समस्या समाधान के तरीके दोषपूर्ण थे जिसके कारण आज वह इस स्थिति में है इसी ज्ञान के साथ वह अपने व्यवहार में परिवर्तन करता है। ये परिवर्तन छोटे व बड़े दोनों ही हो सकते हैं। मनोचिकित्सक रोगी को विभिन्न परिवर्तित परिस्थितियों व व्यवहारों से समायोजन में सहायता करता है। बड़े परिवर्तनों में रोगी अपनी आदतों और सामाजिक भूमिकाओं तथा धारणाओं में परिवर्तन करता है। इन परिवर्तनों के साथ-साथ रोगी का आत्मविश्वास बढ़ता है।

5. पंचम स्तर पर रोगी जैसे-जैसे परिवर्तनों द्वारा अपनी समस्या समाधान की ओर अग्रसर होता है, उसके आत्मविश्वास में वृद्धि होती है। जब रोगी प्रभावपूर्ण समायोजन करने में सफल हो जाता है, तब चिकित्सा पूर्ण हो जाती है।

मनोचिकित्सा की पद्धतियाँ:-

1. **मनोविश्लेषणात्मक उपचार पद्धति (Psychoanalytical Therapy):-** यह एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति है। इसके प्रतिपादक फ्रायड हैं। यह उपचार पद्धति दीर्घकालीन है। कई वर्षों तक चल सकती है। फ्रायड के अनुसार अचेतन मस्तिष्क में मन का अधिकांश भाग रहता है, जिसकी कार्यविधियाँ चेतन मस्तिष्क की अनेक क्रियाओं को संचालित करती है। इसलिए फ्रायड ने अचेतन मन को ढूंढने के लिए इस प्रविधि का विकास किया।

मनोविश्लेषण पद्धति के द्वारा मनोचिकित्सा के लिए तीन विधियों का उपयोग किया जाता है-

(1) स्वप्न विश्लेषण **(Dream Analysis):-** फ्रायड ने अचेतन मन के अध्ययन के लिए स्वप्न को मुख्य मार्ग बताया तथा उन्होंने यह भी कहा कि स्वप्न निरर्थक और अनुपयोगी नहीं होते बल्कि सार्थक व उपयोगी होते हैं। व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में अनेक इच्छाओं को जिन्हें पुरा नहीं कर सकता है उन्हें अपने अन्रतमन में दबा लेता है। ऐसी दमित इच्छाएँ स्वतः ही मन से समाप्त नहीं होती है बल्कि ये मन के अचेतन स्तर पर आ जाती है और निद्राअवस्था में जब व्यक्ति की चेतना शिथिल हो जाती है तब अचेतन मन की दमित इच्छाओं को स्वप्नों में प्रकट होने का अवसर मिल जाता है।

(2) मुक्त साहचर्य **(Free Association):-** इस विधि में रोगी को शांत वातावरण में कुर्सी पर लिटाया जाता है तत्पश्चात् मनोविश्लेषक द्वारा रोगी से सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करता है और आपस में विचार विनिमय/बातचीत व तर्क-वितर्क के उपरान्त चिकित्सक रोगी की समस्या को जानता है। मनोचिकित्सक रोगी से बोलने को कहता है ताकि रोगी के अचेतन मन की दमित इच्छाओं का मनोचिकित्सक को ज्ञान हो सके। इससे रोगी पर दबाव कम होता है व रोगी को सांवेगिक तनाव से मुक्ति मिलती है।

(3) स्थानान्तरण **(Transference):-** इस प्रक्रिया में जब रोगी अपनी समस्याओं के बारे में खुलकर बातचीत करने लगता है व कभी-कभी रोगी अपनी संवेगों को चिकित्सक पर स्थानान्तरण भी करता है यह स्थानान्तरण धनात्मक व ऋणात्मक हो सकता है । इस विधि में स्थानान्तरण धनात्मक हो या ऋणात्मक मनोविश्लेषण को संवेगात्मक नहीं होना चाहिए।

2. **निदेशात्मक उपचार पद्धति (Directive Therapy):-** एफ.सी. थ्रोन ने इस उपचार पद्धति का विकास किया है। इस पद्धति का लक्ष्य पुनर्शिक्षा तथा प्रत्यक्ष सुझावों के द्वारा रोगी के लक्षणों को दूर या कम किया जाता है। इस प्रक्रिया में मनोचिकित्सक रोगी को समय-समय पर समस्या समाधान के लिए सुझाव देता है साथ ही सम्मोहन चिकित्सा का भी प्रयोग करता है। इस उपचार पद्धति में रोगी को यह आश्वासन दिया जाता है कि रोग 95 प्रतिशत तो ठीक हो गया है मात्र 5 प्रतिशत शेष रहा है। इस उपचार पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह है कि इस पद्धति द्वारा सभी प्रकार के रोगों का इलाज सम्भव नहीं है और इसका प्रभाव भी स्थाई नहीं होता है। यह रोगी को मात्र कुछ समय के लिए राहत प्रदान करती है।

3. **व्यवहारपरक उपचार पद्धति (Behaviour Therapy):-** इस पद्धति को प्रारम्भ करने वाले वाटसन है। इस पद्धति का उद्देश्य कुसमायोजित व्यवहार को ठीक करने के लिए उस रोगी के व्यवहार को परिवर्तित किया जाता है। इसमें सबसे पहले रोगी को शांत एवं शिथिल रहने का प्रशिक्षण दिया जाता है और जब रोगी शांत एवं शिथिल रहना सीख जाता है तब वास्तविक सुग्राहीकरण (De sensitization) प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। इसके लिए रोगी को एक आरामकुर्सी पर बैठा दिया जाता है व आंख बन्द करके शांत रहने को कहा जाता है। फिर चिकित्सक कुछ चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों को रोगी के सम्मुख बार-बार कहने लगता है व रोगी को परिस्थिति का अनुभव करने को कहता है। यदि एक परिस्थिति का अनुभव करने पर रोगी शांत रहता है तो फिर पुनः दुसरी परिस्थिति उत्पन्न करता है। ऐसे सुग्राहीकरण का एक सत्र 15-30 मिनट तक का होता है और सप्ताह में दो या तीन सत्र होते हैं। यह उपचार प्रक्रिया कई माह तक चलती रहती है।

4. **अस्तित्वपरक मनो उपचार पद्धति (Existential Psychotherapy):-** प्रत्येक व्यक्ति अपनी संस्कृति और समूह का मुख्य अंग है। व्यक्ति के आन्तरिक आत्म एवं बाह्य आत्म के मध्य दरार का कारण जीवन की द्वन्द्वात्मक परिस्थितियाँ और सामाजिक माँगे हैं और मानसिक विकार का कारण भी आन्तरिक और बाह्य आत्म के मध्य दरारों में वृद्धि ही है। इस उपचार पद्धति का यह दृष्टिकोण अस्तित्व के महत्त्व को पुष्ट करता है। यह पद्धति व्यक्ति के जीवन मूल्यों पर अधिक बल देती है। इस पद्धति में चिकित्सक यह मानकर चलता है कि व्यकित की कुछ विशेषताएँ होती है जैसे- जागरूकता, मानसिक शक्ति इत्यादि। चिकित्सक इस पर बल देता है कि रोगी अपने अस्तित्व का अर्थ ढूंढ निकालने योग्य हो जाए तथा उन मूल्यों का निर्माण करे जिनसे उसके मन के संघर्ष का निवारण हो सके।

5. सामूहिक उपचार पद्धति **(Group Therapy):-** इस चिकित्सा पद्धति द्वारा एक साथ कई रोगियों की चिकित्सा संभव हो सकती है।

इस चिकित्सा पद्धति के मुख्य चरण निम्न है-

(1) रोगियों में आपसी सम्बन्ध स्थापित करनारू. इस चिकित्सा में सर्वप्रथम रोगियों को समूह में एक दुसरे से मिलने व बातचीत करने तथा समझने एवं सम्बन्ध स्थापित करने का अवसर दिया जाता है जिससे रोगी की एकाकीपन की भावना समाप्त हो जाती है और उसे अपने अन्रतवैयक्तिक सम्बन्धों को सुधारने का अवसर दिया जाता है।

(2) समूह कार्यक्रमरू. जब समुह में रोगी आपस में एक-दुसरे को समझ लेते हैं तत्पश्चात् उनके लिए समूह में अनेक कार्यक्रम जैसे नृत्य, संगीत, कहानी, ड्रामा, नाटक, खेलकुद कला, मनोशारीरिक विकास आदि से सम्बन्धित क्रियाओं का आयोजन किया जाता है। इन सभी क्रियाओं से रोगियों में रचनात्मक अनुभव एवं ज्ञान का विकास होता है। इस प्रकार से सामुहिक क्रियाओं में रोगियों के भाग लेने से कई लाभ होते हैं। रोगी के अपने मन का बोझ हल्का करने का अवसर

मिलता है। सामाजिक सम्बन्धों के द्वारा जीवन यापन करना सीखता है और इससे उनकी समायोजन की शक्ति में भी वृद्धि होती है। सामुहिक चिकित्सा दो प्रकार की होती है-

1) क्रियात्मक सामूहिक चिकित्सा:-. इस चिकित्सा पद्धति में चिकित्सा कार्यक्रमों के द्वारा रोगी को समायोजित किया जाता है।

2) सामाजिक साहचर्य:- इस चिकित्सा में रोगी को एक साथ उठने-बैठने, भोजन करने तथा आमोद-प्रमोद के अवसर देकर उसका विकास किया जाता है। साथ ही पारिवारिक वातावरण का भी विकास किया जाता है।

6. अन्रतवैयक्तिक उपचार पद्धतिर:-. यह पद्धति अन्तः वैयक्तिक दृष्टिकोण पर आधारित है। इस दृष्टिकोण से सम्बन्धित दो चिकित्सा पद्धतियाँ है:-

(1) वैवाहिक उपचार पद्धति:- इस पद्धति में दोनों वैवाहिक साथी मनोचिकित्सक पास जाते हैं और मनोचिकित्सक दोनों के सम्बन्धों और अन्तःकिक्रयाओं को परामर्श द्वारा अधिक सुदृढ़ बनाने का प्रयास करता है।

(2) परिवार उपचार पद्धति:-. सामान्यतः यह देखा जाता है कि अस्पताल से ठीक होकर परिवार में आने पर रोगी पुनः रोगग्रस्त हो जाता है। तत्पश्चात् यह सोचा गया कि उपचार पद्धति में यदि केवल रोगी पर ही ध्यान दिया जायेगा और उसके परिवार पर ध्यान नहीं दिया जायेगा तो उपचार उचित प्रकार से एवं स्थायी रूप से नहीं हो पाएगा। अतः इस पद्धति में मुख्यतः परिवार के सदस्यों के मध्य दोषपूर्ण सम्प्रेषण, दोषपूर्ण अन्तःक्रियाएँ व दोषपूर्ण पारस्परिक सम्बन्धों पर अधिक बल दिया जाता है।

7. सम्मोहक उपचार पद्धतिरू. इस विधि में शांत वातावरण में रोगी को आरामकुर्सी पर बैठाया जाता है। जब रोगी मानसिक रूप से एकाग्रचित हो जाता है तो चिकित्सक किसी वस्तु पर ध्यान केन्द्रित करवाता है और नींद की स्थिति उत्पन्न करता है परन्तु रोगी को नींद तो नहीं आती है वह चिकित्सक के निर्देशों का पालन वह चेतन रूप से करता है। सम्मोहन में किए गये व्यवहार के प्रति रोगी को कोई ज्ञान नहीं होता और जागने पर पुनः उसे पुर्व में घटित बातों का ज्ञान भी नहीं रहता ।

सम्मोहन विधि का प्रयोग हिस्टीरिया के रोगियों के लिए उपयोगी है। इस विधि के द्वारा सिगरेट पीना तथा मद्यपान जैसी बुरी आदतों को छुड़ाया जा सकता है परन्तु सभी प्रकार के रोगियों में यह पद्धति नहीं अपनायी जा सकती। इसके द्वारा आन्तरिक संघर्ष को दूर नहीं किया जा सकता। इस पद्धति का प्रभाव अस्थायी है तथा कुछ वैज्ञानिकों का यह मानना है कि बार-बार सम्मोहन करने से व्यक्ति अपना स्वाभिमान खोने लगता है इससे मानसिक दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

8. क्रीडा उपचार पद्धति:- खेल चिकित्सा का महत्त्व मानसिक रोगों के उपचार में बहुत उपयोगी है। सामान्यतः खेल के द्वारा रोगी की आन्तरिक इच्छाओं की अभिव्यक्ति होती है और भूमिका के प्रदर्शन से व्यक्तित्व का विकास होता है। यह पद्धति प्रायः बालाकें के उपचार में उपयोग में लाई

जाती है। खेल में बच्चों को खिलौने और सुविधाएँ उपलब्ध करायी जाती हैं इस विधि का उपयोग इसलिए किया गया क्योंकि खेल मानसिक तनाव को कम करता है और अन्तदृष्टि का विकास भी करते हैं। इस विधि में खेल के दौरान बालकों को दर्शक की भूमिका दी जाती है या उसे खेल का पात्र बना दिया जाता है। इस तरह के खेलों का उद्देश्य यह होता है कि बालक की दमित इच्छाओं का प्रकाशन हो और खेलों के द्वारा उनकी अन्तदृष्टि का विकास हो। छोटे बच्चों के साथ यह समस्या होती है कि वे अपनी समस्या को पूर्ण रूप से अभिव्यक्त नहीं कर सकते हैं ऐसी स्थिति में उन्हें विभिन्न प्रकार के खेल खिलाये जाते हैं और चुपचाप यह देखा जाता है कि बालकों के अन्तनिहित द्वन्दों, विचारों तथा भाव आदि कैसे हैं। खेलों के माध्यम से ही बच्चों के भय, अभिवृत्तियों, चिन्ताओं तथा संघर्षों का पता लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक छोटी लड़की गुडिया की गोद में लेकन दुलारती है, उसे गाना सुनाती है, इस खेल के पिछे जो भावना छिपी है वह स्नेह है जिसकी वह आकांक्षी है। इस चिकित्सा विधि का प्रयोग व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों रूपों में किया जाता है। मनोचिकित्सक इस पद्धति में गुप्त रूप से दो विधियों में अवलोकन कर उनके संवेगों का अर्थ समझता है।

9. मनो अभिनय चिकित्सा:- इस पद्धति में रोगी का नाटक के माध्यम से उपचार किया जाता है। नाटक में रोगी को ऐसी भुमिका दी जाती है कि वह अपनी आन्तरिक मानसिक स्थिति को उचित रूप से अभिव्यक्त कर सके। इस पद्धति का मुख्य उद्देश्य रोगी की भावनाओं एवं समस्याओं का नाट्क के माध्यम से पता लगाना है। साइकोड्रामा की प्रक्रिया में रोगी अपने व्यक्तित्व संगठन से संबंधित अनेक समस्याओं, प्रेरणाओं तथा विशिष्ट मनोरचनाओं की अभियक्ति करता है। इसके द्वारा अभिव्यक्त सामग्री का उपयोग अन्य उपचार पद्धतियों में भी हो सकता है।

8.3 परामर्श एवं मनोचिकित्सा में समानताएँ

परामर्श में सेवार्थी की समस्या का समाधान मनोचिकित्सा के विभिन्न तरीकों के द्वारा किया जाता है। परामर्शदाता का एक कार्य मनोचिकित्सा का होता है जिसमें विशेष योग्यता, दक्षता, विभेदात्मक, उद्देश्य तथा विशेष कार्य पद्धति होती है। वास्तव में परामर्श के कार्य में मनोचिकित्सीय सिद्धान्तों को एक विशिष्ट प्रकार से उपयोग में लाया जाता हैं इन दोनों में काफी समानताएँ हैं-

1. परामर्श एवं मनोचिकित्सा दोनों ही व्यक्ति की सहायता सांवेगिक तनाव तथा कष्ट की स्थिति या समस्या में की जाती है।

2. साक्षात्कार तथा संचार में निपुणताएँ दोनों के लिए आवश्यक है।

3. परामर्श एवं मनोचिकित्सा दोनों में ही सेवार्थी से अच्छे सम्बन्ध बनाये जाते हैं।

4. दोनों प्रकार के कार्यकर्ताओं में रोगी को आराम पहुँचाने तथा रोगी को समस्या स्पष्ट करने की निपुणता होती है।

5. दोनों कार्यकर्ता में रोगी में विश्वास उत्पन्न करने की योग्यता एवं क्षमता होती है।

6. दोनों ही व्यक्ति की व्यैक्तिकता तथा स्थिति का सम्मान करते हैं।

7. दोनों में ही रोगी को आत्मनिश्चिय करने का अवसर प्रदान करते हैं।

8. दोनों द्वारा रोगी के आत्मविश्वास में वृद्धि तथा अहं को सुदृढ़ करने का प्रयास किया जाता है।

9. दोनों ही क्षेत्रों में समस्या का चुनाव, विषय वस्तु का अवलोकन, अन्त्रमनो-वैज्ञानिक अवरोधों की शक्ति, सीमाओं का ध्यान रखा जाता है।

10. दोनों कार्यकर्ता तथा चिकित्सक तत्कालीन तीव्र चिन्ता को समाधान करने के लिए सांवेगिक सहायता पहुँचाते हैं। दोनों ही सेवार्थी के प्रति सहिष्णुता प्रदर्शित करते हैं।

11. दोनों ही सांवेगिक तथा अचेतन प्रक्रियाओं की मनोवृत्तियों तथा व्यवहार को महत्त्वपूर्ण समझते हैं।

12. दोनों ही अपने-अपने व्यवसाय से सहायता प्रक्रिया से संबंधित अधिकार प्राप्त करते हैं।

13. परामर्श में सामान्यतः किसी समस्या के लिए कम समयावधि उपचार का उपयोग किया जाता है जैसे वैवाहिक समस्या। लेकिन मनोचिकित्सा में सामान्यतः जटिल समस्याओं के लिए लम्बे उपचार का प्रयोग किया जाता है।

14. प्रोफेशनल परामर्शदाता एक मनोचिकित्सक के समान नहीं होता है और मनोचिकित्सक एक मेडिकल डाॅक्टर होता है जो कि मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में विशेष्ज्ञतः प्रशिक्षित होता है। मनोचिकित्सक द्वारा बातचीत के आधार पर उपचार तथा मानसिक बिमारी के लक्षण जैसे गम्भीर डिप्रेशन एवं चिंता की स्थिति में डववक बदलने की रोग चिकित्सा औषधि का प्रयोग किया जाता है।

15. परामर्शदाता कोई मेडिकल डाक्टर नहीं होता है तथा किसी भी प्रकार की रोग चिकित्सा औषधि भी नहीं देता है। प्रशिक्षित परामर्शदाता बातचीत आधारित उपचार को ही प्रयोग में लेते हैं। कभी-कभी परामर्शदाता भी सेवार्थी को गम्भीर एवं एकीकृत केयर देने के लिए मेडिकल डाक्टर के साथ सहभागिता द्वारा सहायता करता है।

8.4 परामर्श एवं मनोचिकित्सा में असमानताएँ

1. मनोचिकित्सा साधारणतया स्नायाविक (Neurotic) व्यक्तियों से संबंधित होता है। ये व्यक्ति प्रायः दबी हुई भावनाओं वाले (repressed individuals) होते हैं। दूसरी ओर परामर्श सामान्य व्यक्तियों से संबंधित होता है। जिनका चिंता स्तर सामान्य या उससे कुछ अधिक होता है।

2. मनोचिकित्सा तथा परामर्श में सम्बन्ध का महत्त्व भिन्न-भिन्न होता है। मनोचिकित्सा की सेवा ग्रहण करने में सेवार्थी स्वयं घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है या वह मनोचिकित्सक को

जादूगर, सर्वशक्तिमान, पितृत्व आकृति समझता है। परामर्श में यह स्थिति नहीं होती है। इसमें परामर्शदाता को सुदृढ़ सम्बन्धों के लिए स्वयं प्रयास करने पड़ते हैं।

3. परामर्श में समस्या को अंतर्मानोसंघर्ष के रूप में न समझकर सेवार्थी की कष्टकारी स्थिति के रूप में समझता है अर्थात् सेवार्थी की आर्थिक समस्या, स्वास्थ्य सम्बन्धी तथा अंतर्व्यक्तित्व प्रवृत्ति की होती है लेकिन मनोचिकित्सा में आन्तरिक संघर्ष को समस्या समझकर उपचार कार्य किया जाता है।

4. एक मनोचिकित्सक अच्छा परामर्शदाता हो सकता है लेकिन एक अच्छा परामर्शदाता अच्छा मनोचिकित्सिक नहीं हो सकता है। मनोचिकित्सक परामर्शदाता से अधिक व विशिष्ट योग्यता वाला होता है।

5. व्यवस्था. (Setting):- मनोचिकित्सा ढाँचे में कार्य करता है और परामर्शदाता शैक्षणिक वातावरण में कार्य करता है।

6. मनोचिकित्सा की विधियाँ निम्न है- खेल चिकित्सा (Play therapy), मनोनाटक(Psychodrama), सामाजिक नाटक (Sociodrama) इत्यादि है। इन प्रविधियों के उपयोग द्वारा मनोचिकित्सक व्यक्ति को समायोजन में सहायता करता है। परामर्श में ऐसी प्रविधियों का प्रयोग स्कूलों में किया जा सकता है। परामर्श में, साधारणतया व्यक्ति समस्याओं को परिभाषित करने में, उसके बारे में सोच-विचार तथा कुछ आदतों और दृष्टिकोणों को विवेकपूर्ण निर्णय लेने के लिए विकसित करने में सहायता करना सम्मिलित है।

7. परामर्श दो व्यक्तियों के बीच सम्बन्ध है जिसमें अपरिपक्व व्यक्ति की, उसकी समस्याओं को परिभाषित करने में, उसके बारे में सोचविचार करने में तथा कुछ आदतों और दृष्टिकोणों को विवेकपूर्ण निर्णय लेने के लिए विकसित करने में, सहायता करना शामिल है। मनोचिकित्सा मनोवैज्ञानिक विधियों के प्रयोग द्वारा समायोजन करने की प्रक्रिया है।

8. परामर्श में केवल मनोविज्ञान ही व्यक्ति के अध्ययन का आधार नहीं होता है। जबकि मनोचिकित्सा में व्यक्ति के अध्ययन का आधार केवल मनोविज्ञान ही होता है।

9. परामर्श में व्यक्ति के सामाजिक-आर्थिक स्तर को व्यक्ति की समस्या उत्पन्न करने वाले कारकों में से आवश्यक कारक के रूप में जाना जाता है। लेकिन मनोचिकित्सा में व्यक्ति की समस्या के समाधान में सामाजिक-आर्थिक स्तर को कोई विशेष महत्त्व नहीं दिया जाता है।

10. परामर्श व्यक्ति को पहचान की अधिक स्पष्ट समझ देने में सहायता करने की प्रक्रिया है परन्तु मनोचिकित्सा मूल विकासात्मक संरचना को बदलने का प्रयास है।

11. मनोचिकित्सा का कार्यक्षेत्र सीमित समस्याओं को निपटाना तथा उनकी गहराई तक पहुँचना है, जबकि परामर्श का कार्य क्षेत्र विस्तृत होता है।

12. मनोचिकित्सा व्यक्तित्व परिवर्तन से संबंधित है जबकि परामर्श साधनों के उपयोग से संबंधित हैं

13. मनोचिकित्सा अन्तः व्यक्ति द्वंद्वों (Inrapersonal Conflicts) से तथा परामर्श भूमिका द्वंदों (Role Conflicts) से संबंधित है।

14. मनोचिकित्सा का संबंध पुनः रचित लक्ष्यों से है तथा परामर्शदाता का पुनः शिक्षण और सहायक लक्ष्यों से है।

15. परामर्श तात्कालिक स्थिति से संबंधित है और मनोचिकित्सा मूल चरित्र स्वरूप के संपूर्ण परिवर्तन से संबंधित है।

16. मनोचिकित्सा में समय व सत्रों की संख्या अधिक होती है परंतु परामर्श में सत्रों की संख्या कम होती है।

17. मनोचिकितसा में सेवार्थी के आन्तरिक व्यक्तित्व का अध्ययन कर चिकित्सा प्रदान की जाती है तथा सेवार्थी को चिकित्सा प्रक्रिया के चुनाव में बहुत कम स्वतन्त्रता दी जाती है परन्तु परामर्श में सेवार्थी के आन्तरिक एवं बाह्य दोनों तत्वों पर समान अध्ययन किया जाता है एवं सेवार्थी को परामर्श की प्रक्रिया के चुनाव में स्वतन्त्रता दी जाती है।

सारांश स्वरूप मनोचिकित्सा रोगी व्यक्ति के रोग को किसी भी तरह से दूर करने का प्रयास करती है जिसमें मनोचिकित्सा एवं रसायन, दवा चिकित्सकीय पद्धतियों का उपयोग किया जाता है जबकि परामर्शक बिना किसी दवा रसायन आदि के वांचिक सलाह द्वारा रोगी के ज्ञानात्मक, भावनात्मक और क्रियात्मक पहलुओं को सकारात्मक सोच में बदलने काप्रयास कर आत्मबोध विकसित करता है।

8.5 सारांश

परामर्श एवं मनोचिकित्सा दोनों के ही माध्यम से सेवार्थी की समस्या का समाधान किया जाता है किन्तु परामर्श का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है इसमें व्यक्ति की प्रत्येक प्रकार की समस्याएँ जिसमें व्यक्तिगत, सामाजिक, पारिवारिक, शैक्षिक, व्यवसायिक तथा सांवेगिक आदि सम्मिलित है लेकिन मनोचिकित्सा व्यक्ति के मन के विकारों के समाधान में ही उपयोगी ली जाती है इसका उद्देश्य परिपक्वता दक्षता तथा आत्म कार्यान्वयन की दिशा में व्यक्तित्व का विकास करना है

इसी तरह परामर्श का लक्ष्य व्यक्ति को विकासात्मक कार्यों से निपटने में सहायता करना है जो कि उसकी आयु-वर्ग के अनुकूल हो। परन्तु मनोचिकित्सा में व्यक्ति की सहायता इस तरह से की जाती है कि वह भविष्य की समस्याओं का समाधान या मुकाबला अच्छी तरह कर सके। अतः परामर्श एवं मनोचिकित्सा को सामान्य व्यक्ति एक समान समझने की गलती करते हैं।

8.6 शब्दावली

ठोस: मजबुत

विकार: समस्या, रोग

सांवेगिक: संवेदनाओं से सम्बन्धित, अन्तर्मन से सम्बन्धित

8.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. परामर्श को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं को लिखिए।
2. मनोचिकित्सा क्या है इसके उद्देश्यों को परिभाषित कीजिए।
3. परामर्श एवं मनोचिकित्सा में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
4. मनोचिकित्सा की विधियों व स्तरों का वर्णन कीजिए।
5. परामर्श किस तरह से मनोचिकित्सा के समान है, व्याख्या कीजिए।

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. चैहान, विजय लक्ष्मी (2004), निर्देशन एवं परामर्श: अंकुर प्रकाशन, उदयपुर
2. मिश्र, पी.डी. (2006), सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ
3. तिवारी, रमेशचन्द्र (2010), मनोचिकित्सकीय समाज कार्य: न्यू रोयल बुक कम्पनी, लखनऊ
4. हैमिल्टन, गार्डन (1951), थियरी एण्ड प्रेक्टिस आॅफ सोशल केसवर्क, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी, कोलम्बिया
5. शेफर, रावर्ट एच. (1957), गाइडेन्स एण्ड काउन्सलिंग, सोशल वर्क इयर बुक

इकाई - 9

परामर्शदाता की आवश्यकताएँ एवं समस्याएँ

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 परामर्शदाता की आवश्यकताएँ एवं समस्याएँ

9.2.1 परामर्श के क्षेत्र

9.2.2 परामर्शदाता की विशेषताएँ

9.2.3 परामर्शदाता की आवश्यकता

9.2.4 परामर्शदाता की समस्याएँ

9.3 सारांश

9.4 शब्दावली

9.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:-

- परामर्शदाता की आवश्यकताओं के क्षेत्र के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- परामर्शदाता की समस्याओं के सम्बन्ध में जान सकेंगे।
- परामर्शदाता की विशेषताओं की भी जानकारी प्राप्त करेंगे।

9.1 प्रस्तावना

परामर्श की आवश्यकता प्रारंभ से ही मानव को बदलते हुए समय एवं परिस्थितियों के साथ-साथ समायोजन के लिए होती रही है। परामर्श को सामान्यतः समाज में सलाह के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसे मित्रों, रिश्तेदारों व धार्मिक गुरूओं, परिवार के बुजुर्गों द्वारा दिया जाता है। किन्तु वर्तमान में समय एवं बदलती परिस्थितियों के सामाजिक समस्याओं में भी वृद्धि होने के कारण समाज में इन समस्याओं के हल करने के लिए प्रशिक्षित परामर्शदाताओं की आवश्यकता महसूस होने लगी है। वर्तमान में परामर्शदाता की आवश्यकता व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होने लगी है क्योंकि समाज में होने वाले इन परिवर्तनों ने समाज का विकास तो किया है पर एक ओर समाज में विभिन्न विघटन भी पैदा कर दिये हैं जैसे व्यक्ति विघटन, पारिवारिक विघटन, सामाजिक विघटन आदि इन सभी के कारण समाज में समस्याओं में वृद्धि हुई है और परामर्श ही एक ऐसा साधन है जो इस विघटन को कम करके समाज या परिवार या व्यक्ति की सभी समस्याओं को हल करता है व शांति का वातावरण बना सकता है तथा अच्छे सम्बन्धों का निर्माण कर सकता है।

परामर्श में व्यक्ति की समायोजन समस्याओं का समाधान और उन्हें समझने में सहायता की जाती है। लेकिन इस प्रक्रिया में प्रशिक्ष्ज्ञित परामर्शदाता की आवश्यकता होती है जो उस व्यक्ति की समस्या को समझ सके व उसका निराकरण कर सके। तभी वह सफल परामर्शदाता बन सकता है।

वर्तमान में परामर्श के क्षेत्र में प्रार्थियों की संख्या में वृद्धि व समस्याओं की प्रकृति में अंतर व वृद्धि प्रार्थी से सम्बन्ध बनाने में कमी आदि ऐसी समस्याएँ हैं जिनके कारण परामर्शदाता परामर्श के क्षेत्र में समस्या अनुभव कर रहा है।

9.2 परामर्शदाता की आवश्यकता एवं समस्याएँ

परामर्श मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उपयोगी है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में किसी न किसी समस्या का अनुभव करता है और वह इन समस्याओं का निदान भी चाहता है तथा परामर्श ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा मानव जीवन की सभी समस्याओं जैसे शारीरिक, आर्थिक, मनावैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक इत्यादि को हल किया जा सकता है।

9.2.1 परामर्श के क्षेत्रः-

1. शैक्षिक क्षेत्रः- शिक्षा सम्बन्धी क्षेत्र जैसे- विद्यार्थियों को उनकी क्षमताएँ, योग्यताएँ, रूचियाँ व अभिरूचियाँ इत्यादि का ज्ञान करवाने तथा उन्हें सही विषयों में चुनाव करने में सहायता देने, अध्ययन की सही आदतों के विकास के लिए, पढ़ाई के प्रति सही दृष्टिकोण विकसित करने आदि के परामर्श के लिए इस क्षेत्र में भी अनुभवी व बुद्धिमान परामर्शदाता की आवश्यकता होती है जो कि शैक्षिक समस्याग्रस्त विद्यार्थियों को वृत्ति नियोजन हेतु मार्गदर्शित कर सकें।

2. व्यक्तिगत समस्या:- व्यक्तिगत आवश्यकता के क्षेत्र के अन्तर्गत व्यक्ति के आत्म विश्वास में कमी, अकेलापन, मित्रों का अभाव, एकाग्रचितता की कमी, उत्साह की कमी, भय व चिंता, अलगाव आदि कुसमायोजनों के कारण होती है। अर्थात् जो व्यक्ति अपने जीवन की समस्याओं का समाधान करने में असफल रहता है उनमें इस प्रकार की कुसमायोजन समस्याएँ हो जाती है

ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति को सहयोग, सलाह व सहानुभूति की आवश्यकता होती है जो एक प्रशिक्षित परामर्शदाता द्वारा ही पुरी की जा सकती है।

3. व्यवसायिक आवश्यकताएं :- लोगों की व्यावसायिक आवश्यकताओं की संख्या में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है इस प्रकार की समस्याओं में लोगों को व्यवसाय चयन करने में, योग्यता व कौशल विकास में तथा रूचियों के अनुसार व्यवसाय प्राप्त करने में आदि में परामर्शदाता की आवश्यकता होती है और इन आवश्यकताओं की पुर्ति हेतु भी विशेषतः व्यवसायिक परामर्श में प्रशिक्षित परामर्शदाता की आवश्यकता होती है जो समय-समय पर इन समस्याओं से ग्रसित व्यक्तियों को अपनी सलाह व सुझाव देने का प्रयास करते हैं।

4. मनोचिकित्सकीय आवश्यकताएं :- परामर्शदाता की आवश्यकता मनोचिकित्सकीय समस्याओं के निदान में भी होने लगी है क्योंकि व्यक्तियों के वैयक्तिक एवं अन्रतवैयक्तिक समायोजन में जब गड़बड़ी उत्पन्न हो जाती है तो मानसिक एवं सांवेगिक असंतुलन उत्पन्न हो जाता है तब औषधियों के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक परामर्श, सांवेगिक सहयोग, अन्तर्दृष्टि, व्याख्या तथा अहं सम्बन्धी सहायता परामर्शदाता से ही प्राप्त होती है। और वे परामर्शदाता ही इन मनोचिकित्सकीय समस्याओं का समाधान करते हैं।

5. चिकित्सकीय समस्याएँः- चिकित्सकीय समस्याओं के अन्तर्गत अनेक शारीरिक रोग जिनके उत्पन्न होने का कारण मनोवैज्ञानिक एवं असमायोजन की समस्या होती है। इसके विपरीत शारीरिक रोग के परिणामस्वरूप भी अनेक समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है। इन सभी समस्याओं का निदान भी परामर्शदाताओं द्वारा किया जाता है।

6. वैवाहिक आवश्यकताः- इसके अन्तर्गत भी वैवाहिक जीवन की समस्याएँ, सही जीवन साथी के चयन तथा पति व पत्नी में कुसमायोजन की समस्याओं, तलाक की घटनाओं में कमी करने, सुखी वैवाहिक जीवन यापन करने आदि के सम्बन्ध में लोगों को अच्छे व प्रशिक्षित तथा अनुभवी परामर्शदाता की आवश्यकता होती है जो उनकी वैवाहिक समस्याओं को हल करने में सलाह व सहायता प्रदान करने का प्रयास करें।

7. पारिवारिक समस्याएँः- पारिवारिक समस्यओं में परिवार के विघटन, पति-पत्नी के रिश्ते में कड़वाहट, माता-पिता के सम्बन्धों में विध्न तथ्ज्ञा परिवार की सम्पूर्ण श्रृंखला के टूटने तथा पति-पत्नी व उनके बच्चों के मध्य के सम्बन्धों के टुटने आदि के कारण पारिवारिक समस्याओं में वृद्धि हुई है व परिवार के सभी अन्रतसंबंधों को व्यापक एंव प्रगाढ़ बनाने के लिए तथा प्रत्येक रिश्ते की उपयोगिता एवं प्रासंगिता को सही रूप से प्रार्थी के समक्ष प्रस्तुत करने में परामर्शदाता की आवश्यकता बहुत उपयोगी है।

8. अपराध व बाल अपराध का क्षेत्रः- जन्म से कोई बालक या व्यक्ति अपराधी नहीं होता है। सामाजिक वातावरण के साथ में समायोजन नहीं होने के कारण व्यक्ति के व्यवार में परिवर्तन हो जाता है और उसकी प्रवृत्ति अपराधी हो जाती है। परामर्शदाता की आवश्यकता इस क्षेत्र में भी बड़ी है क्योंकि छोटे-छोटे बच्चे सही व गलत की समझ नहीं होने के कारण बड़े से बड़े कुकृत्य

कर अपराधी बन जाते हैं ऐसे में परामर्शदाता इन अपराधियों एवं बाल अपराधियों से अपराध के कारणों को जानते हैं तत्पश्चात् उन्हें परामर्श देकर उनको भी इन समस्या से मुक्ति दिलाते हैं। अतः परामर्शदाता की आवश्यकता बाल अपराध व अपराध के क्षेत्र में भी बढ़ रही है।

9. श्रम कल्याण का क्षेत्रः- औद्योगिक क्षेत्र में प्रतिदिन श्रमिकों एवं नियोक्ता के मध्य विवाद होते रहते हैं इनका कारण श्रमिकों की कार्य सम्बन्धी समस्याएँ या कल्याण समस्याएँ या वेतन तथा मजदुरी से असन्तुष्टि या कार्य व पर्यवेक्षक से असन्तुष्टि इत्यादि हो सकती है लेकिन वर्तमान में इन श्रमिकों की विभिन्न समस्याओं के निदान के लिए औद्योगिक परामर्श की आवश्यकता हो रही है व उद्योगों में कर्मचारियों को मानसिक व बौद्धिक शांति व संतुष्टि प्रदान करने के लिए उद्योगों में भी कुशल परामर्शदाताओं की आवश्यकता में वृद्धि हुई है।

9.2.2 परामर्शदाता की विशेषताएँः-

परामर्शदाता परामर्श का कार्य करने वला व्यक्ति होता है तथा परामर्शदाता का सफल परामर्श के लिए पर्याप्त योग्य तथा प्रशिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है।

एक अच्छे परामर्शदाता में निम्न विशेषताएँ होनी चाहिए जो इस प्रकार हैः-

1. व्यक्तित्व की विशेषताएँरू. परामर्शदाता का कार्य समस्याग्रस्त व्यक्तियों की समस्या को हल कर उसका व्यक्तित्व विकास करना होता है अतः इस हेतु परार्शदाता की स्वयं के व्यक्तित्व की भी निम्न विशेषताएँ होनी चाहिए-

(1) रूचियों की व्यापकताः- परामर्शदाता का कार्य क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है अतः उसके अनुसार परामर्शदाता की रूचियाँ भी व्यापक होनी चाहिए।

(2) सहयोग की भावनाः- परामर्शदाता में सहयोग की भावना का निर्माण होना चाहिए तभी वह समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता करेगा।

(3) विनम्रः- विनम्रता प्रत्येक समस्या का हल है अतः परामर्शदाता को प्रत्येक परिस्थिति में विनम्र व दयालु होना चाहिए।

(4) भावनात्मक स्थिरताः- परामर्शदाता कभी-कभी समस्याग्रस्त व्यक्तियों की समस्या सुनकर कभी अत्यधिक भावुक या कभी बहुत कम भावुक हो जाता है। अतः भावनात्मक स्थितर होना आवश्यक है।

(5) हास्य विनोदीः- प्रत्येक व्यक्ति जो स्वयं हसमुख होता है वह दुसरों को भी खुश रखता है। अतः परामर्शदाता भी हास्य विनोदी हो ताकि वह समस्याग्रस्त व्यक्तियों के तनाव को कम कर सके।

(6) आत्म सम्मान व आत्म विश्वासः- सामान्यतः जो व्यक्ति स्वयं का सम्मान करता है वह दुसरों का भी सम्मान करना जानता है। अतः परामर्शदाता भी आत्म सम्मानी व आत्म विश्वासी हो ताकि वह समस्याग्रस्त व्यक्तियों को भी सम्मान व आत्मविश्वास की भावना जाग्रत कर सकेगा।

(7) बातों को स्पष्ट करने की योग्यताः- परामर्शदाता द्वारा समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्या कोसुनन के पश्चात् उस समस्या के कारणों को स्पष्ट रूप से उस समस्याग्रस्त व्यक्ति को यह बताना होता है कि वह क्यों चिंतित है। अतः परामर्शदाता में यह योग्यता होनी चाहिए कि वह समस्या को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित कर सकें।

(8) अच्छे निर्णय लेने की क्षमताः- परामर्शदाता में अच्छे निर्णय लेने की क्षमता होनी चाहिए। अतः वह समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्या को सुनने व गहन चिंतन करने के पश्चात् उस समस्या के सम्बन्ध में सही तथा उत्कृष्ट निर्णय करने वाला भी होना चाहिए।

(9) व्यवसाय के प्रति निष्ठा व उत्साहः- परामर्शदाता अगर अपने व्यवसाय तथा कार्य के प्रति लगन व निष्ठा रखता है और परामर्श के दौरान उत्कृष्ट सेवा देने का कार्य करता है तो ऐसी परामर्श का परिणाम हमेशा उत्कृष्ट व उपयोगी होता है।

(10) पक्षपातरहित होः- परामर्शदाता को परामर्श के दौरान अपने प्रार्थियों के साथ पक्षपात नहीं करना चाहिए क्योंकि पक्षपातपुर्ण परामर्श कभी सफल नहीं हो सकता है।

(11) अच्छी सम्प्रेषण योग्यताः- परामर्श में सम्प्रेषण बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि परामर्श में परामर्शदाता प्रार्थी से समस्या पुछता है व उस समस्या पर विचार कर उसे उचित सलाह भी देता है। इसलिए परामर्शदाता में सम्प्रेषण की योग्यता अनिवार्यतः होनी ही चाहिए।

(12) खुले विचारों वाला होः- परामर्शदाता के विचार खुले होने चाहिए तथा विचारों का स्तर उत्कृष्ट व बोधगम्य होना चाहिए क्योंकि समस्याग्रस्त व्यक्ति परामर्शदाता से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा होता है व उसी की सलाह को अपनाता है। अतः यह गुण भी परामर्शदाता के लिए उपयोगी है।

2. तैयारी व प्रशिक्षण (Preparation & Training):-

कुशल परामर्शदाता को निम्नलिखित विषयों का ज्ञान होना आवश्यक है जो इस प्रकार है-

1. समाजशास्त्र, मनोवैज्ञानिक व समाज कार्य आदि विषयों का ज्ञान हो।
2. विभिन्न मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं व उनके प्रशासन व परिणामों की व्याख्या का ज्ञान।
3. परामर्श देने की तकनीकियों का ज्ञान।
4. विभिन्न शैक्षिक एवं व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का ज्ञान।
5. ज्ञान प्राप्त करने के स्त्रोतों की जानकारी।
6. निर्देशन सेवाओं के संगठन का ज्ञान।

7. निर्देशन सिद्धान्तों का ज्ञान।

8. संस्कृति का ज्ञान।

इन विभिन्न विषयों के ज्ञान के साथ ही परामर्शदाता को किसी विशेषज्ञ के द्वारा प्रशिक्षिण को लेना उनकी सफलता के लिए आवश्यक है। प्रशिक्षण प्रार्थी की आकांक्षाओं, परामर्श के वातावरण एवं समस्याओं के लिए सूझ विकसित होने में सहायक होता है।

3. अनुभवः- अनुभव के द्वारा परामर्श के कार्य में सुधार आता है। अच्छे व बुरे दोनों प्रकार के अनुभव परामर्शदाता को समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्या को हल करने में सहायता करते हैं। ये अनुभव परामर्शदाता को, कार्यशालाएँ, सेमीनार, शोध पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों इत्यादि को पढ़कर भी प्राप्त होते हैं।

ई.सी.रोयलर ने परामर्शदाता के कुछ नैतिक सिद्धान्तों के बारे में वर्णन किया है जो निम्नलिखित है-

1. परामर्शदाता को अपने कार्य के प्रति निष्ठा रखनी चाहिए। वह अपने प्रार्थी, संस्था तथा समाज के प्रति उत्तरदायी होता है।

2. परामर्शदाता का यह दायित्व होगा कि प्रार्थी से प्राप्त सूचना को गुप्त रखे। प्रार्थी से प्राप्त जानकारी को किसी अन्य व्यक्ति जैसे- माता-पिता, परिवार, रोजगारदाता आदि के सम्मुख प्रकट नहीं करे तथा किसी भी जानकारी को देने से पूर्व वह प्रार्थी की अनुमति लेकर तत्पश्चात् सूचना प्रदान करे।

3. जब परामर्श में ऐसी स्थिति हो कि किसी अन्य व्यक्ति को उसकी जिम्मेदारी संभालना आवश्यक हो या कोई खतरे की सम्भावना हो तो परामर्शदाता को उचित जिम्मेदार व्यक्ति को इसकी सूचना देनी चाहिए।

4. परामर्शदाता प्रार्थी के संबंध मेंसक्षम प्रोफेशनल व्यक्ति से प्रार्थी की समस्या के समाधान हेतु बातचीत कर सकता है।

5. परामर्शदाता मनोवैज्ञानिक सूचनाओं जैसे परिक्षण, परिणाम, अभिलेखों इत्यादि की व्याख्या इस रूप में करता है कि यह प्रार्थी व उसके परिवार दोनों के लिए रचनात्मक हो।

6. परामर्श साक्षात्कारों से संबंधित अभिलेख एवं नोट्स परामर्शदाता के व्यक्तिगत उपयोग के लिए हैं, वह विद्यार्थियों के अभिलेखों का अंग नहीं हो सकता।

7. प्रार्थी की समस्या का निदान स्वयं परामर्शदाता द्वारा न कर पाने पर आवश्यकता होने पर अन्य योग्य व्यक्ति को संदर्भित कर सकते हैं परन्तु ऐसा करने के लिए उस प्रार्थी या उसके परिवार के सदस्यों की स्विकृति आवश्यक है।

8. यदि परामर्शदाता अपनी अपेक्षित योग्यता के अभाव अथवा व्यक्तिगत कमजोरियों के कारण प्रार्थी की प्रोफेशनल सहायता प्रदान नहीं कर सकता है तो वह उसके लिए प्रार्थी को मना भी कर सकता है।

9. परामर्श में परामर्शदाता व्यवस्थित संगठनों तथा संस्थाओं या प्रोफेशनल व्यक्तियों की आलोचना नहीं करता है।

10. दूसरे परामर्शदाता का कार्य करने पर किसी भी परामर्शदाता की दूसरे की आलोचना नहीं करनी चाहिए और न ही उनके कार्य में हस्तक्षेप करना चाहिए।

9.2.3 परामर्शदाता की आवश्यकता:-

व्यक्ति जन्म से ही निर्बल प्राणी है उसमें आशा एवं विश्वास का संचार परामर्शदाता द्वारा ही किया जा सकता है और वह तभी अपनी छिपी हुई क्षमताओं एवं शक्तियों को रचनात्मक कार्य में लगा सकता है जब उनका सामान्य रूप से विकास सम्भव हो और यह तभी सम्भव हो सकता है जब व्यक्ति को आवश्यकतानुसार सहायता मिलती रहे। इस प्रकार व्यक्ति को जन्म से लेकर प्रौढ़ावस्था तक परामर्शदाता की आवश्यकता होती रहती है क्योंकि व्यक्ति को अपने जीवन के प्रत्येक स्तर में समायोजन की आवश्यकता होती है।

मनोवैज्ञानिक रूप से भी जब हम परामर्शदाता की आवश्यकता की ओर दृष्टिपात करते हैं तो यह स्पष्ट होता है कि इदं, अहं एवं पराहं में संतुलन बनाये रखने के लिए कभी-कभी मनोवैज्ञानिक आलम्बन की भी आवश्यकता होती है जब इन शक्तियों में सामंजस्य नहीं रहता है और अहं कमजोर हो जाता है तो ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति सामान्य कार्य नहीं कर पाता है। उसे मनोवैज्ञानिक सहायता देनी आवश्यक हो जाती है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में औद्योगीकरण व वैश्वीकरण के कारण लोगों की आवश्यकताओं एवं समस्यओं में भी वृद्धि होने लगी है और प्रत्येक व्यक्ति जो समस्याग्रस्त है वह शांति तथा सुख का वातावरण चाहता है और ऐसी परिस्थिति में उनकी समस्याओं का निदान परामर्श से ही संभव हो सकता है।

मानव समाज की ऐसी कोई समस्या नहीं है जिसमें परामर्श की आवश्यकता नहीं होती है। परामर्श की आवश्यकता भूख मिटाने तथा भूख लगने की समस्या, प्रेम करने तथा प्रेम न करने की समस्या, साथ रहने अथवा दूर जाने की समस्या, विवाह करने तथा विवाह न होने की समस्या, बच्चे न होने या बच्चे अधिक होने की समस्या, धन अर्जित करने की समस्या, खर्च करने की समस्या, तिरस्कार करने तथा तिरस्कृत किये जाने की समस्या, नौकरी न मिलने तथा कार्य करने की दशाओं की खराबी की समस्या, शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक आदि समस्याओं में होती है। अतः इन विभिन्न समस्याओं से ग्रसित व्यक्ति को परामर्श की आवश्यकता होती है। इनकी समस्याओं को समझना तथा उनका समाधान करने का कार्य परामर्शदाता द्वारा किया जाता है। परामर्श व्यक्तियों को अपनी भावनाओं, कठिनाइयों एवं समस्याओं को अभिव्यक्त करने का अवसर देता है। परामर्श लोगों को सुरक्षित एवं सहयोगात्मक वातावरण प्रदान करता है।

व्यक्ति अपने जीवन के कठिन समय में अपनी विशेष समस्या के लिए परामर्शदाता से सहायता की मांग करता है। परामर्श के द्वारा व्यक्ति को पुराने दर्द से छुटकारा, सकारात्मक सीख, स्वास्थ्य क्षमताएँ तथा आत्मविश्वास में वृद्धि तथा आत्म सम्मान में वृद्धि, व्यक्तिगत जागरूकता तथा उनकी भावनाओं को समझने जीवन में संघर्ष को खत्म करने में उपयोगी है।

कभी-कभी व्यक्ति अपने जीवन की समस्या को अपने परिवार तथा मित्रों को भी बताने में भय महसूस करता है क्योंकि वह अपने नजदीक के लोगों को दुःखी व परेशान नहीं करना चाहता है तथा कभी-कभी उनके पास उस समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्या को सुनने एवं समझने का समय भी नहीं होता है तब ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति ऐसे व्यक्ति को खोजता है जो उसकी समस्या को सुने, समझे तथा निदान करे। तब वह व्यक्ति परामर्शदाता को अपनी समस्या के निदान के लिए चुनता है परामर्श में परामर्शदाता समस्या को सुनकर, स्पष्ट करता है एवं सलाह देता है।

अगर सेवार्थी परामर्शदाता पर विश्वास नहीं करता या उसके साथ काग्र नहीं करना चाहता है तो अच्छा यही होगा कि वह परामर्शदाता को बदलते बदल ले जिस पर वह विश्वास तथा कार्य कर सकता है। परामर्श के प्रथम कालांश में परामर्शदाता 50 मिनट की लम्बी अवधि का समय लेता है। ऐसा सप्ताह में एक बार कालांश होता है। परामर्शदाता सेवार्थी को परामर्श के अधिकतम कालांश की विस्तृत मतें जानकारी देता है। कुछ परामर्शदाता कम समयावधि का परामर्श तथा कुछ लम्बी समयावधि के कालांश लेते हैं। परामर्शदाता निरन्तर परामर्श की अवधि में प्रगति की समीक्षा करता रहता है। सेवार्थी परामर्श की प्रक्रिया के दौरान जो कुछ भी समस्या के सम्बन्ध में कहता है वह परामर्शदाता गोपनीय है तथा कुछ आशाओं को भी जो समस्या के सम्बन्ध में है विस्तृत रूप में स्पष्ट करता है।

परामर्शदाता सेवार्थी के आराम के लिए सब प्रकार के प्रयास करता है तथा वह सेवार्थी से यह भी कहता है कि यह समस्या केवल तुम्हारी ही नहीं है तुम्हारे कोई भी सहयोगी चाहिए तो बेझिझक कह देना।

अच्छे परामर्शदाता सेवार्थी में आत्मविश्वास तथा निरन्तर सहायता देने का वादा करते हैं। कुछ लोग अपनी समस्या को परामर्शदाता से टेलीफोन व इंटरनेट के द्वारा भी चर्चा करते हैं ताकि वे तनाव व चिंता से मुक्त हो सकें।

कुछ समस्याएँ भी ऐसे परामर्शदाताओं को उपलब्ध कराती है। रजिस्टर्ड संस्थाओं में कार्यरत परामर्शदाता अपनी संख्या की आदर्श संहिता का पालन करते हैं उनके पास मान्यता प्राप्त शिकायत प्रक्रिया भी होती है। ऐसे परामर्शदाता बहुत ही योग्य तथा व्यवसाय के प्रति कर्तव्यनिष्ठ होते हैं।

परामर्श में व्यक्तियों की व्यक्तिगत समस्याओं को प्रशिक्षित प्रोफेशनल परामर्शदाता द्वारा हल की किया जाता है। परामर्शदाता सेवार्थी की समस्या को सकारात्मक रूप में विभिन्न परिस्थितियों को स्पष्ट करता है तथा समस्या के समाधान हेतु विभिन्न विकल्पोकं, रणनीतियों को विकसित किया जाता है और सेवार्थी में आत्म जागरूकता परामर्शदाता द्वारा लोने का प्रयोस किया जाता है।

सेवार्थी परामर्शदाता को अपनी जो कुछ भी समस्या बताता है उन्हें गोपनीय रखने का विश्वास परामर्शदाता दिलाता है। कुछ विशेष मामले जहाँ पर कानून को अपराध की रिपोर्ट की आवश्यकता होती है वहाँ पर कुछ मामले बता दिया जाता है।

किसी व्यक्ति को परामर्श की आवश्यकता निम्न से लेनी चाहिए-

1. डा ॅक्टर द्वारा कहने पर

2. स्थानीय सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द पर सम्पर्क करे

3. मनोचिकित्सक के राष्ट्रीय पंजीकृत होने पर तथा मनोचिकित्सा द्वारा परामर्शदाता उपलब्ध कराने पर

अतः परामर्शदाता की आवश्यकता व्यकितयों की सभी आवश्यकता एवं समस्याओं से सम्बंधित होती है।

9.2.4 परामर्शदाता की समस्याएँ

परामर्शदाता का मुख्य उद्देश्य समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता करना होता है जिससे वह आन्तरिक तथा बाह्य समायोजन स्थापित कर सके। परामर्श की प्रक्रिया में समसग्रस्त व्यक्ति अपनी सामाजिक तथा सांवेगिक सहायता के लिए संस्था में आता है तथा संस्था में परामर्शदाता उस समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता करता है एवं उसकी समस्या को जानने के पश्चात् उसका निदान परामर्शदाता अपने उपगमों के द्वारा करता है लेकिन इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में परामर्शदाता को भी विभिन्न समस्याओं का सामना करना होता है जो इस प्रकार है-

1. **सम्बन्ध स्थापित करना**:- परामर्शदाता का कर्तव्य होता है कि वह सर्वप्रथम समस्याग्रस्त व्यक्ति से अच्छे सम्बन्धों का निर्माण करे क्योंकि मधुर सम्बन्धों का परामर्श की प्रक्रिया में बहुत योगदान होता है। परामर्श की प्रक्रिया पुर्ण रूप से सेवार्थी तथा परामर्शदाता के मध्य के सम्बन्धों पर निर्भर करती है क्योंकि अगर सेवार्थी तथा परामर्शदाता के मध्य सम्बन्ध अच्छे होंगे तो सेवार्थी यानि समस्याग्रस्त व्यक्ति अपनी समस्या को खुलकर तथा वास्तविक कारणों को परामर्शदाता के समक्ष प्रस्तुत करेगा। अतः परामर्श की प्रक्रिया में परामर्शदाता की ही पुर्ण जिम्मेदारी होती है कि वह सेवार्थी से सम्पबन्ध बनाकर उससे उसकी समस्या को जानने का प्रयास करे। परन्तु परामर्शदाता की भी यह गम्भीर समस्या होती है कि वह सेवार्थी से मधुर सम्बन्ध नहीं बना पाता है। कई बार परामर्शदाता सम्बन्धों को बनाने का प्रयास करता है परन्तु लम्बे समय तक सम्बन्ध बना कर रखना बड़ा कठिन कार्य होता है और जब परामर्शदाता तथा सेवार्थी के मध्य अच्छे सम्बन्ध परामर्श की प्रक्रिया के प्रारम्भ से लेकर अंत तक नहीं होते हैं तो ऐसा परामर्श सफल रूप न हीं ले सकता है। अर्थात् परामर्श में मधुर सम्बन्धों का होना अत्यन्त अमहत्त्वपूर्ण है।

2. **प्रत्येक व्यक्ति की समस्याओं में अंतर को समझना**:- परामर्शदाता के पास विभिन्न समस्याओं से ग्रसित व्यक्ति आते हें उनकी समस्या के कारणों में भी अंतर होता है लेकिन कई बार परामर्शदाता समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्याओं को दुसरे व्यक्तियों की समस्याओं के

कारणों के समान ही समझ लेता है जो कि बिल्कुल ही गलत है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व का विकास अपनी रूचि के अनुसार करने का अधिकार है और इस बात का भी अधिकार है कि उनके व्यक्तित्व के विशेष अन्तरों और विशेषताओं को महत्त्व दिया जाना चाहिए। परन्तु परामर्शदाता की यह भी बड़ी समस्या है क्योंकि उसके पास विभिन्न संख्या में लोग अपनी समस्या लेकर आते हैं तथा सभी का उपचार भी अलग होता है ऐसे में वह अधिकतम लोगों की समसओं को एक जैसा मान लेता है परन्तु इससे उन समस्याग्रस्त लोगों की गरिमा को नुकसान पहुँचता है।

3. **समस्याग्रस्त व्यक्तियों की भावना को नहीं समझ पाना:-** परामर्शदाता समस्याग्रस्त व्यक्ति (सेवार्थी) की भावनाओं को जानने का प्रयास करता है क्योंकि समस्या समाधान के लिए सेवार्थी की भावना का ज्ञान होना जरूरी है व परामर्शदाता सेववार्थी को अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने की पूर्ण छूट देता है लेकिन कई बार सेवार्थी अपनी समस्या के नकारात्मक भाग को प्रस्तुत हनीं करता है जिसके कारण समस्या को समझना और कठिन हो जाता है। परामर्शदाता का यह दायित्व होता है कि वह सेवार्थी से अच्छे सम्बन्ध बनाकर समस्या के मूल कारणों को जाने या उनकी भावना का उद्देश्यपूर्ण रूप से प्रकटन करवाये जिससे समस्या के मूल कारणों का पता लग सके। इसके दो लाभ होंगे पहला तो सवार्थी जब अपनी समस्या के वास्तविक पहलु को प्रस्तुत करेगा तो उसका मानसिक बोझ कम हो जाएगा तथा आराम अनुभव करेगा। साथ ही सेवार्थी के आत्म विश्वास में भी वृद्धि होगी। दुसरा लाभ य ह होगा कि समस्या के मूल कारण का ज्ञान हो जाने से परामर्शदाता द्वारा सेवार्थी की समस्या का जल्दी निराकरण हो जाएगा।

4. **सेवार्थी को स्वीकृति नहीं देना:-** परामर्शदाता का यह उद्देश्य होना चाहिए कि जो भी समस्याग्रस्त व्यक्ति उसके पास अपनी समस्या लेकन आये उसके नकारात्मक व्यवहार तथा मनोवृत्ति को भी स्विकार करे। जिससे उस व्यक्ति को यह अनुभव होगा कि परामर्शदाता उसके व्यवहार का न तो तिरस्कार कर रहा है और न ही स्वीकार कर रहा है। परामर्शदाता उसे एक व्यक्ति के रूप में स्वीकार कर रहा है न कि उसके व्यवहार को स्वीकार करना उसका उद्देश्य है परन्तु व्यवहार में यह पाया जाता है कि परामर्शदाता उस समस्याग्रस्त व्यक्ति की नकारात्मक मनोवृत्ति को देखकर उसे स्विकृति नहीं देता है तथा परामर्शदाता स्वयं भी अपना व्यवहार उस व्यक्ति से सही न हीं रखता है जिससे उस समस्याग्रस्त व्यक्ति को यह महसुस होता है कि परामर्शदाता उसकी समस्या का निदान नहीं करेगा तथा कभी-कभी वह समस्याग्रस्त व्यक्ति परामर्शदाता से समस्या के मूल कारणों को छुपाता भी है। ऐसी समस्या परामर्शदाता परामश्र के समय समस्याग्रस्त व्यक्ति के साथ महसुस करता है।

5. **सेवार्थी की सूचना को गोपनीय नहीं रखना:-** गोपनीयता का आशय परामर्श की प्रक्रिया के दौरान समस्याग्रस्त व्यक्ति परामर्शदाता को अपनी समस्या को बताता है तथा वह चाहता है कि उसके द्वारा बतायी गयी सूचना को परामर्शदाता गोपनीय रखे अर्थात् किसी ओर से न कहे। इसके लिए परामर्शदाता उस समस्याग्रस्त व्यक्ति को विश्वास दिलाता है कि वह अपनी समस्या

को बेझिझक परामर्शदाता को बताए क्योंकि समस्या के मूल कारणों के ज्ञान के बिना समस्या समाधान असम्भव है परन्तु परामर्शदाता भी कई बार उस समस्याग्रस्त व्यक्ति को विश्वास में नहीं ले पाता है तो कभी-कभी परामर्शदाता भी उस समस्याग्रस्त व्यक्ति की गोपनीय सूचना अन्य लोगों को दे देता है जिससे परामर्शदाता व उस समस्याग्रस्त व्यक्ति के मध्य विश्वास व मधुर सम्बन्ध नहीं रहते हैं और इनके अभाव में परामर्श का कार्य अधुरा रहता है।

6. **परामर्श में निरन्तर सम्पर्क बनाये नहीं रखना:-** परामर्श की प्रक्रिया में प्रशिक्षित परामर्शदाता से समस्याग्रस्त व्यक्ति मिलता है, बातचीत कर अपनी समस्या प्रस्तुत करता है व परामर्शदाता पुर्ण रूप से उस सेवार्थी की समस्या को हल करने का आश्वासन देता है। परामर्शदाता को उस समसरूा के समाधान में कभी-कभी अधिक समय भी लगता है इसलिए वह सेवार्थी को निरन्तर सम्पर्क में रहने को कहता है लेकिन सेवार्थी द्वारा लापरवाही या परामर्ध के निदान की प्रक्रिया पर ध्यान नहीं देने या परामर्शदाता के व्यवहार से असंतुष्ट होने आदि कारणों से सेवार्थी परामर्शदाता से लम्बे समय तक सम्पर्क नहीं बना पाता है ऐसे में परामर्शदाता उस सेवार्थी की समस्या का पुर्ण रूप से समाधान नहीं कर पाता है।

7. **सेवार्थी की समस्या का प्रतिस्थानान्तरण करना:-** परामर्शदाता के पास विभिन्न प्रकार के व्यक्ति अपनी अलग-अलग समस्या लेकर आते हैं। कभी-कभी परामर्शदाता स्वयं भी इन समस्याग्रस्त व्यक्तियों से बहुत अधिक या भावनात्मक रूप से जुड़ जाता है और उन समस्याग्रस्त व्यक्तियों की समस्या को सुनने के पश्चात् अपने विगत जीवन के पुराने व कटु अनुभवों को उस समस्याग्रस्त व्यक्ति पर प्रतिस्थानान्तरण कर देता है जिसके कारण परामर्शदाता व समस्याग्रस्त व्यक्ति के मध्य व्यवसायिक सम्बन्ध नहीं बन पाते हैं। अतः यह समस्या परामर्शदाता के सम्मुख आती रहती है जो कि परामर्श में सबसे बड़ी बाधा है।

8. **सेवार्थी को सुरक्षित वातावरण नहीं दे पाना:-** परामर्शदाता का कार्य समस्याग्रस्त व्यक्ति को सुरक्षित वातावरण प्रदान करना होता है कयेंकि समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्या का कारण उसका परिवार, दोस्त या कार्य समुह कोई भी हो सकता है ऐसे में कभी-कभी परामर्शदाता समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्या का पुण रूप से निदान कर देता है परन्तु वह व्यक्ति पुनः समस्या से ग्रस्त हो जाता है। ऐसे में परामर्शदाता को समस्याग्रस्त व्यक्ति के पर्यावरण का अध्ययन करना चाहिए तथा यह देखना चाहिए कि वह व्यक्ति किन-किन लोगों व समुह से संबंधित है। तत्पश्चात् परामर्शदाता उन लोगों से सम्पर्क कर उन्हें समस्याग्रस्त व्यक्ति से अच्छा व्यवहार करने को प्रोत्साहित करे। सेवार्थी को सुरक्षित वातावरण प्रदान करने का कार्य परामर्शदाता के लिए अत्यन्त कठिन है व इस कारण परामर्श का कार्य अधुरा रह जाता है।

9. **समस्या समाधान के साधन उपलब्ध न होना:-** परामर्शदाता के लिए यह आवश्यक है कि व जिस व्यक्ति की समस्या का समाधान कर रहा है उस समस्या के समाधान के साधन व स्त्रोत उसके पास उपलब्ध हों। लेकिन परामर्शदाता के पास उपयुक्त समस्या समाधान के साधन नहीं होने के कारण वह उस व्यक्ति की समस्या का समाधान नहीं कर पाता है।

10. **समस्या के प्रति अज्ञानता व अपूर्ण प्रत्यक्षीकरण:-** परामर्शदाता कभी-कभी अज्ञानता एवं समस्या के प्रति अपूर्ण प्रत्यक्षीकरण के कारण समस्या का सही निरूपण नहीं कर पाता है तथा कभी-कभी वह समस्या समाधान के तथ्यों की खोज में भी असमर्थ होता है। अतः ज्ञान तथा तथ्यों की कमी परामर्शदाता की समस्या समाधान को असम्भव बना देती है।

11. **सेवार्थी की अधिक जटिल समस्याएँ:-** समस्याग्रस्त व्यक्ति की कुछ जटिल समस्याएँ उसे उग्र बना देती है जिसके परिणामतस्वरूप उसका आत्मनियन्त्रण कमजोर हो जाता है तथा सोचने-समझने की शक्ति शिथिल हो जाती है। इस प्रकार की भावनाएँ प्रायः अधिक बीमारी या बहुत बड़ी हानि होने पर प्रकट होती है। समस्याग्रस्त व्यक्ति की इस प्रकार की समस्याओं के समाधान में परामर्शदाता को सबसे पहले उस व्यक्ति के दबाव को कम करने का प्रयत्न करना चाहिए तत्पश्चात् कोई नया कदम उठाना चाहिए। परन्तु अधिकतर परिस्थिति में परामर्शदाता समस्याग्रस्त व्यक्ति की समस्याओं का समाधान बिना दबाव कम किये ही करने का प्रयास करता है जिसके कारण वह परामर्श असफल रहता है।

9.3 सारांश

वर्तमान में प्रत्येक व्यक्ति दिन-प्रतिदिन विभिन्न प्रकार की समस्याओं से झुझ रहा है और इन समस्याओं का समाधान स्वयं समस्याग्रस्त व्यक्ति नहीं कर सकता है। ऐसी परिस्थिति में उसे परामर्श की आवश्यकता होती है कि कोई न कोई परामर्शदाता उसकी समस्या के सम्बन्ध में परामर्श करके समस्या को स्पष्ट करे व समाधान के तरीके बताएँ ताकि वह उन्हें अपने जीवन में अपना कर समस्या से मुक्ति प्राप्त कर सके।

देश में एक तरफ तो तीव्र गति से सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन हो रहा है पर दुसरी ओर तेज गति से सामाजिक समस्याओं में भी वृद्धि होती जा रही है। अर्थात् व्यक्तियों की समस्या के समाधान में परामर्श तथा परामर्शदाताओं की आवश्यकता और भी अधिक महसुस होती जा रही है। पुराने समय में बड़ी से बड़ी समस्याओं का निदान भी लोग घर में या बुजुर्गों या मित्र समुह की राय या सलाह से हल कर लिया करते थे पर अब वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इन सामाजिक समुहों द्वारा भी सहयोग न हीं किया जा रहा है क्योंकि अब इन सामाजिक समुहों में भी विघटन उत्पन्न होने के कारण ये समुह टुट चुके हैं जिसके कारण लोगों की समस्याओं में अत्यधिक वृद्धि होती जा रही है। अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समस्या को अनुभव कर रहा है और अच्छे अनुभवी परामर्शदाता का सहयोग व आवश्यकता महसुस करने लगा है।

9.4 शब्दावली

प्रार्थी: सेवार्थी, निवेदित, समस्याग्रस्त

उत्कृष्ट: सबसे सही, बढिया

प्रगाढ़: गहन, नजदीकी, मधुर

पर्यावरण: आस-पास का वातावरण

9.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. एक अच्छे परामर्शदाता की विशेषताओं एवं गुणों की व्याख्या कीजिए।
2. परामर्श के दौरान परामर्शदाता को किन नैतिक सिद्धान्तों का उपयोग करना चाहिए। वर्णन कीजिए।
3. परामर्शदाता की आवश्यकता किन-किन क्षेत्रों में होती है। विस्तृत वर्णन करें।
4. परामर्शदाता को परामर्श के दौरान होने वाली समस्याओं को विस्तारपूर्वक लिखिए।
5. परामर्शदाता की समस्याओं एवं आवश्यकताओं पर एक लेख लिखिए।

9.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. चैहान, विजय लक्ष्मी (2004), निर्देशन एवं परामर्श: अंकुर प्रकाशन, उदयपुर
2. एप्टेकर, हरवर्ट एच. (1955), दि डायनामिक्स आॅफ कैसवर्क एण्ड काउन्सलिंग, हघटन मिफालित कं. न्यूयार्क
3. नायक ए.क. (2002), गाइडेन्स एण्ड कैरियर काउन्सलिंग: ए.पी.एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, नई दिल्ली
4. एस.सी. ओबेराय (2007), कैरियर निर्देशन एवं कैरियर सूचना: सिंग हाउस इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
5. मिश्र, पी.डी. (2006), सामाजिक व्यैक्तिक सेवा कार्य उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

इकाई - 10

सम्प्रेषण: अवधारणा, अर्थ एवं सिद्धांत

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 सम्प्रेषण: अवधारणा

10.2.1 सम्प्रेषण की सफलता के लिए आवश्यक तत्व

10.2.2 सम्प्रेषण के कार्य

10.2.3 सम्प्रेषण की विशेषताएँ

10.3 सम्प्रेषण के उद्देश्य

10.4 सम्प्रेषण के सिद्धान्त

10.5 सारांश

10.6 शब्दावली

10.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप

- सम्प्रेषण के अर्थ तथा अवधारणा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- सम्प्रेषण के उद्देश्य तथा सिद्धान्तों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- सम्प्रेषण के तत्व, कार्य तथा विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

वैश्विकरण के इस वर्तमान युग में सम्प्रेषण का महत्त्व दिन ब दिन बढ़ता जा रहा हैं चाहे परिवार जैसी छोटी संस्था हो, व्यापारिक संगठन हो या देश की सरकार हो सम्प्रेषण अपनी महत्ती भूमिका निभाता है। सम्प्रेषण प्रत्येक संगठन, संस्था के अस्तित्व का आधार है।

मानव शरीर में जो स्थान स्नायु तंत्र का है वही स्थान किसी संगठन में संप्रेषण प्रणाली का है। सम्प्रेषण प्रत्येक सामाजिक प्रणाली एवं सगठन का सार तत्व है। आज के युग में प्रबंधकीय कार्यों की श्रृंखला में संप्रेषण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रणाली है। वही संप्रेषण सफल एवं परिपूर्ण होता है जिसमें लक्ष्यपूर्ति के उद्देश्य से सम्प्रेषक द्वारा कही गई बात सम्प्रेषिती को उन्हीं अर्थों में समझे तथा आवश्यक कार्यवाही करे।

परिवार के सदस्य हो या संगठन के कर्मचारी सभी को घटनाओं, गतिविधियों, सूचना ओं, विचारों, आदेश-निर्देश, भावनाओं, कल्पनाओं, अनुमानों, सारांशों का विनिमय करना ही होता है और इसके लिए सम्प्रेषण एक अनिवार्य स्त्रोत है।

10.2 सम्प्रेषण: अवधारणा

सम्प्रेषण को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने अनुसार प्रयोग किया है, जहाँ कुछ विद्वान सम्प्रेषण का अभिप्राय सूचनायें प्रदान करने से लगाते हैं वहीं अन्य विद्वानों द्वारा समझ पैदा करने के उद्देश्य से विचारों, भावनाओं तथा तथ्यों के आदान-प्रदान करने के सम्प्रेषण का नाम दिया जाता है। यह वह तरीका है जिससे एक व्यक्ति अपने विचारों, भावनाओं, नैतिक मूल्यों एवं तथ्यों को दूसरो से परिचित कराना है एवं व्यक्तियों द्वारा लगाये अर्थों के मध्य की खाई को पाटता है। इसमें संदेशों के प्रवाह, सम्प्रेषण तकनीक, संगठन संरचना एवं अन्तर वैयक्तिक सम्प्रेषण को सम्मिलित किया जाता है।

सम्प्रेषण का अर्थ एवं परिभाषा:

सम्प्रेषण से तात्पर्य दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य तथ्यों, विचारों, अनुमानों, भावनाओं व संवेगों (Emotions) के पारम्परिक आदान-प्रदान से है। सम्प्रेषण किन्हीं साधनों-शब्दों, संकेतों, वाणी, व्यवहार आदि माध्यम से संदेशों का समागम तथा विचारों व सम्पत्तियों का विनिमय है। चाल्स ई. रेडफील्ड के अनुसार सम्प्रेषण से आशसय मानवीय तथ्यों एवं विचारों के पारम्परिक विनिमय से है, न कि टेलीफोन, तार, रेडियो आदि तकनीकी साधनों से।

अंग्रेजी का 'Communication' शब्द लेटिन के शब्द 'Communis' से बना है जिसका अर्थ होता है 'समरूप' (Common) सम्प्रेषण में प्रेषक संदेश प्राप्तकर्ता के साथ समरूपता (Commonness) अर्थात् एक-सा अर्थ बोध स्थापित करने का प्रयास करता हैं इस प्रकार सम्प्रेषण दो पक्षों के मध्य किसी विषय के सम्बन्ध में एक-सी समझ उत्पन्न करने की प्रक्रिया है।

परिभाषाएँ- सम्प्रेषण की कुछ परिभाषाएँ निम्न प्रकार हैं-

ब्राउन के अनुसार "सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विचार एवं भावनाएँ एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को अभिव्यक्त की जा सकती है - इसका उद्देश्य संप्रेषिती में समझ जागृत करना है।"

अमेरिकन सोसायटी आॅफ ट्रेनिंग डायरेक्टर्स के अनुसार "सम्प्रेषण विचारों एवं सूचनाओं का आदान-प्रदान है जिसके द्वारा अच्छे सम्बन्धों की समझ विकसित की जाती है।"

थियोडोर हर्बर्ट के अनुसार, "सम्प्रेषण एक गतिशील प्रक्रिया है, जिसमें एक व्यक्ति वस्तुओं अथवा एजेन्सियों का प्रतीकात्मक रूप से प्रयोग करते हुए इसके द्वारा दूसरे व्यक्ति के संज्ञान ;ब्वहदपजपवदद्ध को सचेत या अचेतन रूप से प्रभावित करता है।"

मैक्फारलैंड के शब्दों में, "सम्प्रेषण व्यक्तियों के मध्य अर्थपूर्ण अन्तव्र्यवहार की प्रक्रिया है।

कीथ डेविस के अनुसार, "सम्प्रेषण प्रक्रिया है जिसमें सन्देश और समझ को एक से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाया जाता है।"

लुईस ए. ऐलन के अनुसार, "सम्प्रेषण में वे सभी चीजें शामिल हैं जिनके माध्यम से एक व्यक्ति अपनी बात दूसरे व्यक्ति के मस्तिष्क में डालता है। यह अर्थ का पुल है। इसके अन्तर्गत कहने, सुनने और समझने की व्यवस्थित तथा निरन्तर प्रक्रिया सम्मिलित होती है। "

न्यूमेन तथा समर के अनुसार, "सम्प्रेषण दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य तथ्यों, विचारों, सम्मतियों अथवा भावनाओं का विनिमय है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन से स्पष्ट है कि सम्प्रेक्षण एक सतत् एवं गतिशील प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत दो या अधिक व्यक्ति अपने विचारों, भावनाओं, सूचनाओं व तथ्यों के साथ-साथ समान अर्थ व समझ का विनिमय करते हैं।

परामर्श की प्रक्रिया भी पूर्णतः परामर्शदाता तथा परामर्शी दोनों के बीच होने वाले संप्रेषण पर ही निर्भर रहती है।

परामर्शदाता तथा परामर्शी में अच्छे सम्बन्ध स्थापित होने पर ही परामर्श की प्रक्रिया प्रारम्भ हो सकती है जो कि सम्प्रेषण के अभाव में संभव नहीं है। सम्प्रेषण के माध्यम से ही परामर्शी अपनी भावनाओं, संवेदनाओं, दुःख, भय, घटनाओं, विचारों को परामर्शदाता के सामने खुलकर रख पाता है। परामर्शदाता भी किसी भी निर्णय पर पहुँचने से पूर्व या परामर्श की कार्ययोजना से पूर्व परामर्शी सम्प्रेषण के माध्यम से ही न सिर्फ उचित सम्बन्ध स्थापित करता है वह उसका पूर्व इतिहास, व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जानकारी, घटित घटनाओं के बारे में भी जानकारी प्राप्त करता है।

मनोचिकित्सा या परामर्श की प्रक्रिया में सम्प्रेषण अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परामर्शाी द्वारा परामर्शदाता को स्वीकार करना आपसी संबंधों का निर्माण, सूचनाओं का आदान-प्रदान, सूचनाओं की रिकार्डिंग एवं विश्लेषण, निदान के उपाय व कार्य योजना बनाना सभी कुछ परामर्शदाता व परामर्शी के बीच होने वाले सम्प्रेषण पर ही निर्भर करता है।

सम्प्रेषण की प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक कि आपसी अवरोधों, अर्थ-भेद संदेहों व आपत्तियों को दूर करके आपसी समझ व सम्पत्ति उत्पन्न नहीं कर ली जाती है।

10.2.1 सम्प्रेषण की सफलता के लिए आवश्यक तत्त्व

सम्प्रेषण को एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया गया है। यह प्रक्रिया अनेक तत्वों से मिलकर बनती है। डेविड के. बर्लो के अनुसार सम्प्रेषण के प्रमुख तत्त्व हैं-

1. **स्रोत:-** सम्प्रेषण के लिए किसी स्रोत का होना आवश्यक होता है। जहाँ से विचार, आवश्यकता, चिन्तन, धारणा, अनुभव, सूचना या अन्य कोई संदेश प्रवाहित होता है। प्रत्येक सम्प्रेषण का प्रायः एक मानव स्रोत होता है। इसे संदेश प्रेषक भी कहते हैं।

2. **लिपिबद्धकरण:-** संदेश या सूचना, अदृश्य एवं अमूर्त होती है। अतः उसे स्वरूप प्रदान करने के लिए लिपिबद्ध क्रिया आवश्यक है। प्रायः मानव स्रोत अपने मानसिक अवबोध एवं संज्ञान को किसी संकेत-पद्धति में अनूदित करता हैं यह वह 'अर्थ' होता है जिसका वह संचरण करना चाहता है। मानसिक अवधारणाओं को अभिव्यक्त करने के लिए भाषा एक महत्त्वपूर्ण संकेतक है। किसी भी संदेश को लिपिबद्ध करने में शरीर की भाषा प्रयुक्त की जाती है। वाणी, हाव-भाव, मुख-मुद्रा, हाथ आदि के माध्यम से संदेश को कूटबद्ध किया जाता है। व्यवसाय में आजकल कई संदेशों को कम्प्यूटर भाषा के द्वारा लिपिबद्ध किया जाता है। स्रोत एवं लिपिबद्धकर्ता को कई घटक प्रभावित करते हैं, जैसे सम्प्रेषण कौशल, अभिवृत्तियाँ, अनुभव व ज्ञान, वातावरणीय एवं सामाजिक-सांस्कृतिक तत्त्व आदि।

3. **सन्देश:-** स्रोत (व्यक्ति) के द्वारा 'अर्थ' को संदेश के रूप में लिपिबद्ध किया जाता है। संदेश सम्प्रेषण की विषय-वस्तु है। यह किसी विचार, सूचना या संवाद के रूप में होता है जो संदेश प्राप्तकर्ता को भेजा जाता है। संदेश या संवाद से वही अर्थ स्पष्ट होना चाहिए जो प्रेषक के मस्तिष्क में है। संदेश उस 'अर्थ' को दर्शाता है जो प्रेषक भेजना चाहता है।

4. **माध्यम :-** माध्यम वह कड़ी, मार्ग या धारा है जो स्रोत तथा संदेश प्राप्तकर्ता को जोड़ती है। मुनष्य की पाँच बोध इन्द्रियाँ उसके सम्प्रेषण माध्यम हैं- दृश्य, वाणी, गंध, स्वाद, स्पर्श आदि संदेश के माध्यम हैं।

5. **साधन :-** सम्प्रेषण में कई लिखित एवं मौखिक साधनों, जैसे पत्र, टेलीफोन, टेलीविजन, रेडियो, स्वर, संवाद, शारीरिक मुद्राएँ, चित्र, फिल्म, टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग किया जाता है।

6. **संदेश प्राप्तकर्ता :-** यह संदेश ग्रहण करता है। कुछ संदेशों को प्राप्त करने वाले निश्चित एवं विशिष्ट व्यक्ति होते हैं जैसे कर्मचारी, व्यापारी, ग्राहक, उपभोक्ता आदि। संदेश प्राप्तकर्ता एक समूह भी हो सकता है।

7. **व्याख्या करना अथवा कूट खोलना :-** संदेश प्राप्तकर्ता संदेश प्राप्त होने के पश्चात् उसकी व्याख्या करता है। वह शब्दों, संकेतों, चित्रों आदि के द्वारा उसका अर्थ स्पष्ट करता है। कई बार भाषा या अन्य गुप्त संकेतों का अनुवाद करने वाले व्यक्ति दूसरा होता है। किन्तु फिर भी संदेश का "विशिष्ट या वैयक्तिक अर्थ" तो प्राप्तकर्ता ही लगाता है अर्थात् वह संदेश का पुनः अनुवाद करता है।

8. **अर्थ व आशय** :- सम्प्रेषण का आशय संदेश को उसी अर्थ में समझने से है जो संदेश देने वाले का होता है। संदेश प्रेषक व प्राप्तकर्ता के मस्तिष्क में एक-सा अर्थ होने के लिए यह आवश्यक है कि दोनों वह भाषा व प्रतीक समझते हों तथा उनका एक-सा अर्थ गढ़ते हों। अर्थ की एकरूपता सम्प्रेषण का सारतत्त्व है।

9. **प्रतिक्रिया** :- वास्तव में, सम्प्रेषण का उद्देश्य केवल सूचना देना ही नहीं होता है, अपितु व्यवसाय में इसके अनुसार कार्यवाही करने के लिए प्रेरित करना होता है। संदेश प्राप्तकर्ता द्वारा कोई कार्यवाही करना, संदेश के प्रति उसकी प्रतिक्रिया पर निर्भर करता है। संदेश प्राप्तेकर्ता की प्रतिक्रिया संदेश की भाषा, उसे दिये जाने वाले समय, संदेश देते समय प्रेषक का आचरण एवं व्यवहार, संदेश का उद्देश्य आदि बातों पर निर्भर करती है। सम्प्रेषण को प्रभावी बनाने के लिए प्रतिक्रिया का अनुमान करना आवश्यक होता है।

10. **प्रतिपुष्टि** :- प्रतिपुष्टि संदेश प्राप्तकर्ता की प्रतिक्रिया को वापस संदेश प्रेषक के पास पहुँचाने की क्रिया है। संदेश प्राप्त करने तथा उसकी व्याख्या करने के पश्चात् व्यक्ति स्वयं स्रोत बन जाता है क्योंकि वह मूल स्रोत के पास अपनी प्रतिक्रिया भिजवाता है। प्रतिपुष्टि के द्वारा ही संदेश प्रेषक को अपने संदेश की प्रगति, कार्यवाही अथवा उसके विरूद्ध आपत्तियों का ज्ञान होता है। इससे वह अपने भावी संदेशों में सुधार कर सकता है।

11. **विकृति या कोलाहल** :- विकृति एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जो संदेश की शुद्धता एवं विश्वसनीयता को कम कर देता है। विकृति उत्पन्न हो जाने की संभावना प्रत्येक स्तर पर होती है। प्रेषक द्वारा संदेश का उचित निर्माण न करने अर्थात् संदेश को समझने व वर्णन करने में भूल करने, सम्प्रेषण प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न होने, संदेश की गलत व्याख्या या विवेचन किये जाने के कारण विकृति उतपन्न हो जाती है। प्रयुक्त माध्यम व साधनों की तकनीकी खराबी भी सम्प्रेषण को विकृत बना देती है।

स्पष्ट है कि परामर्श दाता परामर्श प्रक्रिया आरम्भ करने से पूर्व परामर्शी से सम्प्रेषण करता है तो उसे इन तत्वों को पूर्ण नियोजित रूप से आत्मसात कर लेना चाहिए। क्योंकि यदि सम्प्रेषण में किसी भी रूप से संवेदों या भावनाओं या विचारों का आदान-प्रदान सही रूप से नहीं हो पाता है तो न तो परामर्शदाता व परामर्शी में अच्छे सम्बन्ध बनेंगे और न ही परामर्श प्रक्रिया सफल हो पायेगी।

10.2.2 सम्प्रेषण के कार्य

1. सूचना प्रेषित करना एवं प्राप्त करना
2. मानवीय व्यवहार में परिवर्तन लाना
3. व्यक्तियेां को निर्देशित करना
4. सहकारी प्रवृत्ति का विकास

5. सामाजिक संबंध बनाये रखना

6. विचार विमर्श द्वारा ठोस योजनाएँ बनाना तथा क्रियान्वित करना।

7. भूलसुधार करना अथवा

8. मनोभाव प्रकट करना

10.2.3 सम्प्रेषण की विशेषताएँ

सम्प्रेषण की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. द्वि मार्गी प्रवाह(Two-way flow)

2. प्रेषण एवं प्राप्ति(Sending and reseiving)

3. सामान्य स्वीकृति की भाषा(Common code of understanding)

4. शब्दों के अनुकूल कार्य Act according to words)

5. निरन्तर प्रक्रिया (A continuous process)

6. प्रति पुष्टि(Feedback)

सम्प्रेषण की प्रकृति को उसकी निम्न विशेषताओं द्वारा समझा जा सकता है-

1. सम्प्रेषण सूचनाओं के साथ-साथ भावनाओं, तर्कों, संज्ञान तथा आपसी समझ के आदान-प्रदान की क्रिया है।

2. यह मानवीय अन्तर्व्यवहार की एक व्यवस्थित, सतत् एवं गतिशील प्रक्रिया है।

3. यह विचारों, सम्मत्तियों, शंकाओं, संबोध एवं अवबोध का समागम एवं विनिमय हैं

4. यह दो मस्तिष्क के बीच एक समझ का पुल है।

5. सम्प्रेषण स्मरण शक्तियों की प्रतिध्वनि, प्रत्युत्तर अथवा दोहराने के लिए एक प्रक्रिया है।

6. यह मानवीय पहलुओं के मध्य अर्थपूर्ण बातों का विनिमय है।

7. सम्प्रेषण मौखिक, लिखित अथवा सांकेतिक हो सकता है।

8. यह बहुआयामी है - अर्थात् अधोगामी, ऊध्र्वगामी, समतल, आन्तरिक अथवा बाह्य किसी भी प्रकार का हो सकता है।

9. सम्प्रेषण केवल संदेश देने की योग्यता पर ही नहीं, वरन् सुनने की योग्यता पर भी निर्भर करता है।

10. सम्प्रेषण प्रबन्धकीय कार्यों का आधार तथा संगठन के अस्तित्व का सारतत्त्व है।

11. सम्प्रेषण प्रायः प्रशासकीय होता है, क्योंकि संगठन में अधिकांश संदेशों का आदान प्रदान प्रशासकीय दृष्टि से ही होता है।

12. यह वह "प्रक्रिया" है जो व्यवक्तियों के "भीतर" घटित होती है।

13. सम्प्रेषण एक सम्बद्धकारी प्रक्रिया है। यह एक व्यवहारात्मक एवं आन्तक्रिरयात्मक कार्य है।

14. सम्प्रेषण "विचारों का प्रतिरोपण" है।

15. सम्प्रेषण में मतैक्य का होना आवश्यक नहीं, किन्तु एक-सी सझ एवं अर्थ का होना आवश्यक है।

16. सम्प्रेषण व्यवहारों से सम्बन्धित है, यह एक वैयक्तिक प्रक्रिया है।

10.3 सम्प्रेषण के उद्देश्य

संप्रेषण की पहली समस्या है कि व्यक्ति कही गई बात को समझे: दूसरे वह उसे समझने के लिए प्रयत्नशील हो। कई बातें थोड़ी कठिनाई से समझ में आती है। अतः परामर्शदाता को अपनी बात समझाने के लिए परामर्शी के सहयोग की आवश्यकता भी होती है। अर्थात् व्यक्ति जिसे सदेश दिया जा रहा है, वह (परामर्शी) समझने की इच्छा रखता हो, तीसरे संवाद ग्रहण करने वाले व्यक्ति (परामर्शी में) में समझने की योग्यता हो। चैथी समस्या सदेश को स्वीकारने की है। पांचवें परामर्शी, कार्य लक्ष्य एवं संदेश की जटिलता में तालमेल बैठा सके। छठे कहे गये शब्दों का अर्थ अभिधा लक्षणा और व्यंजना में समझ सके। यह संप्रेषक (परामर्शदाता) की भावभंगिमा, मुखमुद्रा, प्रस्तुति आदि कई बातों पर निर्भर करता है। हयाकावा (Hayakawa) ने कहा है कि 'प्रत्येक बात केवल शब्दार्थ से नहीं समझी जाती। प्रत्येक शब्द का अर्थ केवल शब्दकोष का अर्थ नहीं होता।' यह कहा जाय तो अधिक युक्तिसंगत लगेगा कि शब्दों का कोई अर्थ नहीं होता, व्यक्ति ही उनका अर्थ निकालते हैं। जिस प्रकार के अर्थ निकलते हैं वे व्यक्ति की योग्यता, समझ, व्यक्तित्व, वातावरण, संस्कृति, सामाजिक स्थिति आदि कई बातों के सम्मिलित प्रभाव से प्रकट होते हैं। इसके अतिरिक्त संदेश प्राप्तकर्ता (परामर्शी) का प्रेषक (परामर्शदाता) में उसका विश्वास, संदेश में उसका विश्वास, माध्यम में विश्वास तथा बात सुनने और ग्रहण करते समय उसका मानसिक चेतन भी बात का अर्थ निर्धारण करते हैं।

कहते हैं शब्दों में जादू होता है क्योंकि वे उन व्यक्तियों का मस्तिष्क परिवर्तन करने की क्षमता रखते हैं जो उन शब्दों को सुनते हैं, पढ़ते हैं, ग्रहण करते हैं। उससे प्रेषिति का चिन्तन बदलता है, मानस बदलता है, और कार्य करने की इच्छा बदलती हैं आचरण एवं स्वभाव बदलता है। यहाँ तक कि व्यक्ति का आचरण

भी स्थायी रूप से उन शब्दों के अनुरूप ढलता है जिन्हें सुनकर वह कार्य करता है, अपने दैनिक जीवन में व्यवहार करता है। स्पष्ट है कि संप्रेषण बहुआयामी है तथा इसके उद्देश्य भी बहुआयामी है-

परामर्श प्रक्रिया में सम्प्रेषण के उद्देश्य निम्नलिखित हो सकते हैं-

1. परामर्शदाता व परामर्शी में आत्मीय संबंधों का निर्माण।
2. आवश्यक सूचनाओं, संवेगों, संवेदनाओं, भय, घटनाओं आदि का आदान-प्रदान।
3. कार्य योजना का निर्धारण
4. परामर्शदाता व परामर्शी दोनों की स्वीकार्यता को बढ़ाना।
5. परामर्शी की आधारभूत जानकारियों, आवश्यकताओं, मान्यताओं, आत्मप्रतिष्ठा को जानना।
6. मिथ्या सूचनाओं को हतोत्साहित करना।
7. निदान/उपचार के लिए पृष्ठभूमि तैयार करना।
8. भावुकतापूर्ण तनाव को दूर करना।
9. सूचनाओं का एकत्रिकरण/रिकार्डिंग।
10. कार्य योजना बनाने में सहायक
11. आदेश, निर्देश, अभिप्रेरण तथा वातावरण निर्माण में सहायता करना।
12. बाह्य पक्षों से सहयोग प्राप्त करना।
13. मूल्यांकन के लिए आधार तैयार करना।
14. भविष्य में सहायक।

10.4 सम्प्रेषण के सिद्धान्त

(1) स्पष्टता का सिद्धान्तः-. संप्रेषण द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपना आशय समझा सकता है। अतः स्पष्ट एवं समझने योग्य भाषा का प्रयोग करना चाहिए। लार्ॅड चेस्टर फील्ड के अनुसार प्रत्येक अनुच्छेद इतना स्पष्ट एवं निश्चित होना चाहिए कि विश्व का सबसे मन्द बुद्धि वाला व्यक्ति भी उसका गलत अर्थ न लगा सके तथा उसे समझने के लिए दुबारा नहीं पढ़ना पड़े। टैरी का कथन है कि "संदेश प्रेषित करने से पूर्व प्रेषक को स्पष्ट रूप से यह विचार करना और जानना चाहिए कि क्या भेजना है?

(2) ध्यान का सिद्धान्तः- संदेश जब प्राप्त हो रहा हो तो उसे पूरे ध्यान से सुनना चाहिए अथवा पढ़ना चाहिए। यदि संदेश कई स्रोतों से प्राप्त हो रहा हो तो प्रत्येक स्रोत के प्रति सजग होना चाहिए।

(3) ईमानदारी का सिद्धान्त:- संप्रेषण को संगठन के उद्देश्य पूर्ति के लिए उपयेागी बनाने का प्रयत्न किया जाएय। जोसफ धूहट का कथन है कि संदेश भेजते समय प्रेषक को प्रेषिती की आवश्यकताओं तथा कर्मचारी हितों दोनों का ध्यान रखना चाहिये।

(4) अनौपचारिक संगठन का उपयोग सिद्धान्तः- अनौपचारिक संगठन भी औपचारिक संगठन की भांति महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करते हैं। अतः उसका समुचित लाभ लिया जाना चाहिए।

(5) उपयोग का सिद्धान्त:- प्रत्येक संप्रेषण उपयोगी होना चाहिए। मिथ्या संप्रेषण से समय और धन दोनों का अपव्यय होता है तथा आपसी संबंधों में खाई पड़ जाती है। संदेश योजनाबद्ध होना चाहिए जिससे वह अधिक उपयोगी सिद्ध हो सके।

(6) मितव्ययिता का सिद्धान्त:- संप्रेषण प्रणालियाँ अधिक खर्चीली नहीं होनी चाहिएं दूरियाँ और कार्य की आतुरता के आधार पर ही समुचित संप्रेषण विधि जैसे डाक, तार, टेलीफोन, टेलेक्स, टेलीप्रिन्टर आदि का उपयोग किया जाय। अनावश्यक रूप से संपे्रषण को द्रुतगामी बनाने से अपव्यय होता है।

(7) नियंत्रण का सिद्धान्तरः- औपचारिक संप्रेषण तो नियंत्रित होते ही हैं लेकिन अनौपचारिक किन्तु आवश्यक संप्रेषण भी नियंत्रग होना चाहिए। बातचीत जहाँ समूह में हो रही हो तो पहल कौन करे? सबसे पहले कौन वक्तव्य दे? यह ध्यान रखा जाना चाहिए क्योंकि प्रारंभ ही यदि गलत ढंग से हो जाय तो आगे की बातचीत से समस्या का हल ढूंढना कठिन हो जाता है।

(8) प्रमापीकरण का सिद्धान्तर:- कई नियमित बातें तथा कुछ आचार संहिताएँ प्रमापित कर दी जाती है जैसे अभिवादन की विधि, संबोधन, बात प्रारंभ करने से पूर्व आज्ञा चाहना आदिं प्रमापीकरण में संदेश की एकरूपता बनाये रखने का प्रयास किया जाता है।

(9) अनुकूलता सिद्धान्त:- भेजे जाने वाले तथा प्राप्त होने वाले संदेश समय एवं परिस्थिति के अनुकूल होने चाहिए। समय पर सही संदेश का प्रभाव अधिक होता है।

(10) प्रतिपुष्टि सिद्धान्त:- संदेश प्रणाली इस प्रकार की होनी चाहिए कि प्रेषक को अपनी त्रुटियों और शब्दों की अनुपयुक्तता का पता लगता रहे जिससे वह यथासमय उसमें सुधार कर सके। संप्रेषण की त्रुटियों को यथासमय सुधारा नहीं जाय तो कई प्रकार के अनिष्ट उत्पन्न हो सकते हैं।

(11) नेतृत्व का सिद्धान्त. संदेश देने वाला व्यक्ति अपनी बात का पक्का तथा विचारशील व्यक्ति होना चाहिए। वह अच्छा प्रेषक भी हो और अच्छा श्रोता भी हो।

(12) न्यूनतम मध्यस्थ का सिद्धान्त:- सम्प्रेषण प्रक्रिया में प्रेषक एवं प्रेषिति के बीच मध्यस्थों की संख्या न्यूनतम होनी चाहिए। मध्यस्थों की संख्या कम होने पर न केवल सन्देश शीघ्र पहुँच जाता है, बल्कि सन्देश के विकृत होने की सम्भावना भी कम रहती है।

(13) लोचता का सिद्धान्त:- प्रभावी सम्प्रेषण लोचपूर्ण होता है। इस प्रणाली में परिवर्तित दशाओं, तकनीकी परिवर्तनों एवं अन्य संगठनात्मक समायोजनों के अनुसार परिवर्तन किया जा सकता है।

(14) विषय वस्तु का ज्ञान:-. सन्देश को प्रभावी बनाने के लिएप्रेषक को सन्देश की विषय वस्तु का सही, विस्तृत एवं पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

(15) समानुभूति का सिद्धान्त:- एक प्रेषक को स्वयं को प्रेषिती की स्थिति में रमकर ही सम्प्रेषण प्रक्रिया का संचालन करना चाहिए। इससे मतैक्यता एवं आपसी समझ बनने में सुविधा होती है।

10.5 सारांश

सम्प्रेषण एक अन्तर्वैयक्तिक एवं व्यवहारात्मक प्रक्रिया है। जिसमें प्रेषक तथा प्रेषिती के मध्य विभिन्न माध्यमों के द्वारा विचारों, आदेशों, निर्देशों, मतों, अनुभवों आदि का आदान-प्रदान होता है। परिवार, समाज या संगठन बिना आदर्श सम्प्रेषण प्रणाली के अपने उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकता है। सदेशों को सही तरह से आदान-प्रदान करने के लिए सम्प्रेषण के लिए आवश्यक तत्वों एवं सिद्धान्तों का अनुसरण करना अति महत्त्वपूर्ण होता है।

परामर्श की प्रक्रिया में सम्प्रेषण को प्रभावी बनाने वाले तत्वों की जानकारी होना अति आवश्यक है। सम्प्रेषण की कुछ विशेषताएँ एवं निर्धारित सिद्धान्त है जो कि परामर्श प्रक्रिया के दौरान परामर्शदाता व परामर्शी पर लागु होते हैं।

10.6 शब्दावली

संचरण:	आदान-प्रदान करना
प्रेषक:	संदेशों को भेजने वाला
प्रेषिती:	संदेशों को पाने वाला
निदान:	उपाय, उपचार, दूर करना
सम्मति:	सहमत होना, एकमत होना
अन्तव्यवहारः	आपस में वार्तालाप करना या सम्बन्ध स्थापित करना
विकृतिः	अशुद्धता, बिगड़ना, खराब होना।

10.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सम्प्रेषण के अर्थ, परिभाषा एवं तत्वों को लिखिए।

2. सम्प्रेषण के अर्थ को समझाते हुए इसकी विशेषताओं को लिखिए।

3. सम्प्रेषण के कार्य एवं उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

4. "सम्प्रेषण परामर्श प्रक्रिया में उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि एक व्यक्ति के लिए रक्त संचार का" पुष्टि कीजिए।

5. सम्प्रेषण की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

10.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. दशोरा, एम.एल. (1996) संगठन, सिद्धान्त एवं व्यवहार, हिमांशु पब्लिकेशन।

2. ड्रकर, एफ.पी. (1954) द प्रेक्टिस आॅफ मेनेजमेन्ट।

3. फिशर, एफ.पी. (1955) ए न्यू लुक एट मेनेजमेंट कम्युनिकेशन्स , पर्सनोल वोल्युम 6

4. जेक्स, ई. (1974) द चेंजिंग कल्चर आॅफ कम्युनिकेशन

5. हायाकावा, एस.आई. (1949) लेंग्वेज इन थोट एण्ड एक्शन।

6. सुधा, जी.एस. (2005) प्रबन्ध अवधारणाएँ एवं संगठनात्मक व्यवहार, रमेश बूक डिपो, नई दिल्ली।

इकाई - 11

सम्प्रेषण के स्वरूप

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 सम्प्रेषण प्रक्रिया मा ॅडल

11.3 सम्प्रेषण के प्रकार

11.4 सारांश

11.5 शब्दावली

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.7 सन्दर्भ ग्रन्थ-

11.0 उद्देश्य

इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:-

- सम्प्रेषण की प्रक्रिया को जान पाएँगे।
- सम्प्रेषण के विभिन्न प्रकारों को जान पाएँगे।

11.1 प्रस्तावना

मानवीय व्यवहार को प्रभावित करने वाले उपकरण के रूप में सम्प्रेषण को मानव जीवन का अभिन्न अंग कहा जा सकता है। परिवार, समाज, संगठन एवं व्यवसाय में सम्प्रेषण का अभाव क्रियाओं का अभाव कहलाता है। उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सम्प्रेषण के विभिन्न प्रकारों का उपयोग किया जाता है जिसमें औपचारिक, अनौपचारिक, अधोगामी, उध्र्वगामी, समतल, विकर्णिय, मौखिक, लिखित आदि सम्प्रेषण प्रकारों का प्रयोग किया जाता है।

11.2 सम्प्रेषण प्रक्रिया मा ॅडल

सम्प्रेषण एक अन्तर्वैयक्तिक (Interpersonal) एवं व्यवहारात्मक प्रक्रिया है। सम्प्रेषण सूचनाओं का प्रेषण भी है। सम्प्रेषण प्रक्रिया के सम्बन्ध में तीन प्रमुख मॉडल हैं जिन्हें समझ लेना आवश्यक है।

(1)शेनन-वीवर मॉडल

सम्प्रेषण प्रक्रिया का यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया मॉडल है। इस मॉडल का विकास क्लाॅड शेनन तथ्ज्ञा वारेन वीवर ने किया था। उनके अनुसार सम्प्रेषण "सूचना के प्रेषण" की प्रक्रिया है। इस मॉडल को निम्न चित्र के द्वारा समझा जा सकता है:-

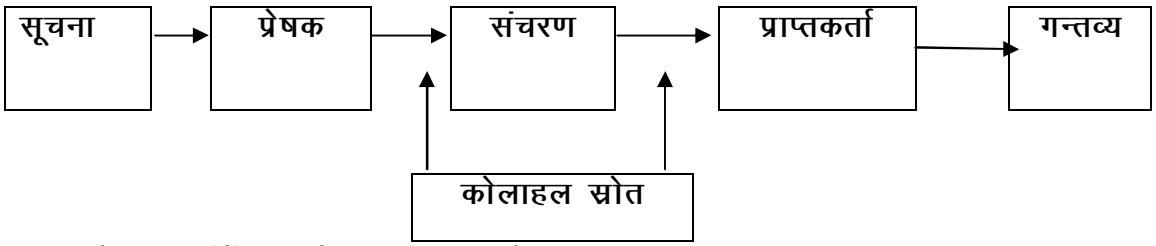

इस मॉडल के मुख्य अंगों का विवेचन निम्न प्रकार है-

1. सूचना स्रोत **(Information Source)-** यह सम्प्रेषण प्रक्रिया का प्रारम्भ बिन्दु है जहाँ सूचनायें अपने प्रारम्भिक स्वरूप (Raw) में होती हैं। ये सूचनाएँ प्रेषण के उद्देश्य एवं अभिप्राय को दर्शाती हैं। इन्हें अर्थपूर्ण बनाना होता है।

2. प्रेषक **(Transmitter)-** प्रेषक सूचना को लिपिबद्ध करके संवाद बनाता है तथा उसे प्राप्तकर्ता के पास भिजवाता है। वह संदेश को चिन्हों, प्रतीकों व संकेतों के व्यवस्थित प्रारूप में लिपिबद्ध करके भेजता है।

3. कोलाहल **(Noise)-** कोलाहल कोई भी हस्तक्षेप है जो संदेश के प्रेषण तथा इसकी प्राप्ति के बीच घटित होता है। यह तकनीकी रूकावट, अर्थविज्ञान (Semantics) की समस्या संदेश की दुर्भावनापूर्ण विकृति आदि के रूप में हो सकता है।

4. प्राप्तकर्ता **(Receiver)-** प्राप्तकर्ता संदेश को ग्रहण करके उसका अनुवाद करता है तथा 'अर्थ' स्पष्ट करता है तथा समझ बनाता है।

5. गन्तव्य **(Destination)-** गन्तव्य सम्प्रेषण प्रक्रिया का अंतिम बिन्दु एवं उद्देश्य है जहाँ यह प्रक्रिया पूरी होती है।

यह मॉडल परम्परावादी संरचनात्मक दृष्टिकोण को प्रकट करता है। यह रेखीय सूचना प्रवाहों पर बल देता है तथा जड़ प्रकृति का है जबकि सम्प्रेषण व्यवहारात्मक जटिल प्रक्रिया है।

(2) बार्लो गतिशील प्रक्रिया मॉडल (The Berlo Dynamic Process Model)

यह डेविड बर्लो द्वारा विकसित प्रथम मॉडल है जो सम्प्रेषण को एक गतिशील तथा अन्तक्रियात्मक प्रक्रिया मानता हैं उन्होंने सम्प्रेषण के प्रति रेखीय अन्तक्रिरयात्मक प्रक्रिया

मानता हैं उन्होंने सम्प्रेषण के प्रति रेखीय चरण-दर-चरण सूचना दृष्टिकोण का विरोध करते हुए कहा है कि "यदि हम प्रक्रिया की विचारधारा को स्वीकार करते हें तो हम घटनाओं तथा समबन्धों को गतिशील, हमेशा बने रहने वाले, परिवर्तनशील तथा सतत् क्रिया के रूप में देख सकते हैं। जब हम सम्प्रेषण को एक 'प्रक्रिया' मानते हैं तो इसका तात्पर्य है कि इसका कोई प्रारम्भ एवं अन्त नहीं होता है तथा यह घटनाओं का एक निश्चित अनुक्रम नहीं है। यह स्थिर नहीं है। यह परिवर्तनशील है तथा सम्प्रेषण प्रक्रिया के घटक आपस में अन्तव्र्यवहार करते हैं, प्रत्येक सबको प्रभावित करता है।" चित्र में बर्लो के मॉडल को दर्शाया गया है। इसके घटकों का वर्णन पूर्व में किया जा चुका है।

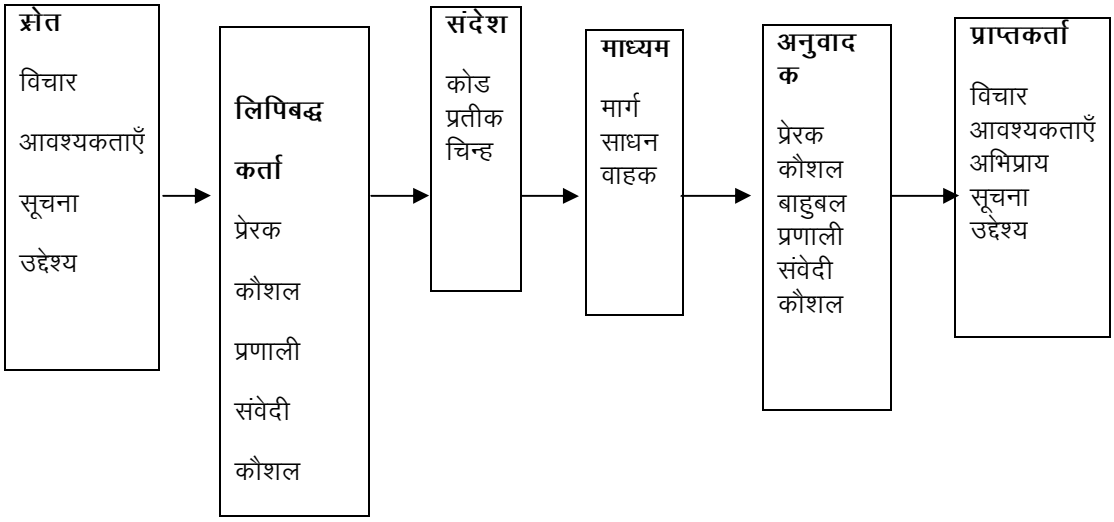

3) संगठनात्मक सम्प्रेषण का व्यवहारात्मक प्रक्रिया मॉडल

नये प्रबन्ध विचारकों विशेषतः जाॅन वेनबर्ग तथा विलियम विलमाॅल्ट ने सम्प्रेषण को एक 'व्यवहारात्मक प्रक्रिया' के रूप में प्रस्तुत किया है। वे सम्प्रेषण को एक पारम्परिक एवं अन्योन्य (Reciprocate) प्रक्रिया मानते हैं। उनके अनुसार, "संगठनात्मक सम्प्रेषण की प्रक्रिया में सभी व्यक्ति साथ-साथ (Simulataneously) सन्देशों के प्रेषण (लिपिबद्धकरण) तथा प्राप्ति (अनुवाद) में संलग्न होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति सतत् रूप से सन्देशों के प्रेषण तथा प्राप्ति की प्रक्रिया में सहभागी होते हैं तथा प्रत्येक को प्रभावित कर रहा होता है।"

यह मॉडल सम्प्रेषण को केलव 'रेखिक सूचना प्रवाह' (Linear information flow) ही नहीं मानता है, वरन् सम्प्रेषण को एक गतिशील व्यवहारवादी प्रक्रिया मानते हुए 'पारम्परिक प्रभाववाद' (Reciprocal detrminism) पर बल देता है।

11.3 सम्प्रेषण के प्रकार

विद्वानों ने सम्प्रेषण के प्रकारों को सम्प्रेषण की प्रकृति, सम्बन्ध, प्रवाह, क्षेत्र, माध्यम आदि के आधार पर वर्गीकृत किया है। जिसमें से निम्न महत्त्वपूर्ण है-

11.3.1 सूचनात्मक सम्प्रेषण (Informational Communication):-

यह पूर्णतः वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित है। यह प्राथमिक रूप से संचरण पहलुओं (transmission aspects) से जुड़ा होता है। विशिष्ट रूप से प्रेषक, सन्देश प्राप्तकर्ता, माध्यम, सूचनात्मक सम्प्रेषण के प्रमुख तत्त्व हैं। इस सम्प्रेषण का उद्देश्य दूसरे पक्ष को केवल सूचना पहुँचाना होता हैं, यह सांख्यिकीय, गणितीय एवं तर्कयुक्त होता है।

11.3.2 अन्तर्वैयक्तिक सम्प्रेषण (Interpersonal Communication):-

सूचनात्मक सम्प्रेषण गणितीय-अभिमुखी होता है जबकि अन्तर्वैयक्तिक सम्प्रेषण व्यवहारात्मक होता है। यह व्यवहार परिवर्तन पर बल देता है। इसमें एक तरफ भाषा तथा दूसरी ओर मनोवैज्ञानिक प्रक्रियायें, जैसे अवबोध, अभिप्रेरण, संज्ञान आदि सम्मिलित होती हैं। यह संचेतना श्रवण तथा गैरशाब्दिक तत्त्वों पर बल देता हैं इस सम्प्रेषण में प्रतिपुष्टि ;थ्मअकइंबाद्ध का विशेष महत्त्व होता है। यह वैयक्तिक होता है।

11.3.3 संगठनात्मक सम्प्रेषण (Organisational Communication):-

परम्परागत रूप से संगठनात्मक सम्प्रेषण का दृष्टिकोण संरचनात्मक (structural) रहा है। यह संगठन संरचना में रेखीय सूचना प्रवाहों को दर्शाता है। परम्परागत संगठन संरचनाओं में यह निम्नलिखित को दर्शाता है-

1. आदेश एवं निर्देश।
2. नीतियाँ, कार्यक्रम, लक्ष्य।
3. संगठन पुस्तिकायें, नीति पुस्तिकायें।
4. स्मरण-पत्र, पत्र-व्यवहार, प्रतिवेदन।
5. कार्यक्रम पत्रक, कार्यवाही विवरण।
6. वार्षिक रिपोर्ट।
7. जाँच-पड़ताल, निवेदन।
8. कर्मचारी शिकायतें, परिवेदनाएँ आदि।

11.3.4 औपचारिक सम्प्रेषण(Formal Communication):-.

जब किसी उपक्रम में औपचारिक सम्बन्धों वाले व्यक्तियों के बीच निर्धारित मार्ग व शृंखला के अनुसार संदेशों का आदान-प्रदान किया जाता है तो उसे औपचारिक सम्प्रेषण कहा जाता है। इस सम्प्रेषण

का मार्ग संगठन के ढाँचे में निर्धारित प्रक्रियाओं के अनुसार तय होता है। यह विशेष पद या स्थिति में रहकर किया गया सम्प्रेषण है। यह व्यक्तियों के बीच न होकर पदों के बीच होने वाला संदेशवाहन है।

यह निरंकुश प्रबन्ध व्यवस्था में एक-मार्गीय तथा प्रजातांत्रिक प्रबन्ध में द्वि-मार्गीय होता है। अधिकारी अपने अधीनस्थों को आदेश-निर्देश, सूचनाएँ, नीतियाँ, नियम, कार्यक्रम, मूल्यांकन आदि के रूप में औपचारिक संदेश देते हैं। दूसरी ओर अधीनस्थ अपने अधिकारियों के पास रिपोर्ट, शिकायतें आदि औपचारिक रूप से प्रस्तुत करते हैं। औपचारिक संदेश अधिकारों के अन्तर्गत एवं नियमानुसार ही दिये जाते हैं।

लाभ **(Advantages)-** औपचारिक सम्प्रेषण के निम्नलिखित लाभ होते है-

1. संदेशों का आदान-प्रदान पूर्व-निर्धारित मार्गों से होता है।
2. संदेश के लिए उत्तरदायित्व का निर्धारण सुगम हो जाता है।
3. संदेशों का स्वरूप व सीमा पूर्व निर्धारित होने से विकृति की सम्भावना कम हो जाती है।
4. इससे विभिन्न पदों के बीच समन्वय आसान हो जाता है।
5. ये संदेश पूर्व निर्धारित समय पर स्वतः ही दिये जाने से सूचनाओं में क्रमबद्धता एवं निरन्तरता बनी रहती है।

दोष **(Disadvantages)-** औपचारिक संदेश वाहन के कुछ दोष इस प्रकार हैं-

1. पूर्व निर्धारित मार्गों के कारण सन्देशों के सामान्य प्रवाह में बाधा उपस्थित होती है।
2. इससे कार्यों में देरी होती है।
3. प्रायः लिखित संदेश भिजवाये जाने के कारण यह प्रक्रिया खर्चीली है।
4. विभिन्न स्तरों पर संदेश के विकृत हो जाने की संभावना रहती है।
5. प्रेषक तथा प्रेषित के बीच स्थिति सम्बन्धी अवरोध (Status barrier) से संदेश का अर्थ प्रभावित होने की सम्भावना रहती है।

11.3.5 अनौपचारिक सम्प्रेषण अथवा अंगूरीलता सम्प्रेषण (Informal Communication or Grapeine)

औपचारिक स्थिति के कारण नहीं, वरन् आपसी सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर संदेशों का आदान-प्रदान करना अनौपचारिक सम्प्रेषण कहलाता है। यह सम्प्रेषण संगठन की संचार व्यवस्था का एक आवश्यक भाग है तथा संस्था में सामाजिक सम्बन्धों के विकसित होने के फलस्वरूप किया जाता है। इसकी शृंखलायें संगठन द्वारा निर्धारित नहीं होती हैं वरन् स्वतः ही बनती एवं परिवर्तित होती है।

अनौपचारिक सम्प्रेषण को 'ग्रेपवाइन' या जनप्रवाद के नाम से भी पुकारा जाता है। सामान्यतः जनप्रवाद द्वारा कही-सुनी बातों, सुनी-सुनाई सूचनाओं, आपसी चर्चाओं, अनुमानों, विकृत सूचनाओं, तोड़े-मरोड़े गये तथ्यों, तीखी-चटपटी खबरों, अर्द्ध-सत्यों, मिथ्या प्रचारों, असिद्ध बातों, गुत्थियों आदि का प्रसारण हुआ करता हैं इसीलिए इसे "अफवाहों की मिल" (Rumour-mill) भी कहा जाता हैं जनप्रवाद की विश्वसनीयता संदेहपूर्ण होती है। जनप्रवाद तात्कालिक होता है तथा तात्कालिक मार्गों से होकर शीघ्र ही समस्त संस्था में छा जाता है। यह कोहरे के समान होता है जिसमें वास्तविक सत्य गुम हो जाता है। अनौपचारिक सम्प्रेषण की गति बहुत तेज होती है। यह भी आवश्यक नहीं होता है कि जनप्रवाद पूर्णतः असत्य ही हो। कई बार यह सत्यता के करीब होता है। यह अनाधिकृत होता है तथा ऐसे संदेशों का आदान-प्रदान सामाजिक समारोहों, दोपहर के भोजन के समय, सामूहिक कार्यक्रमों में अथवा आमोद-प्रमोद के क्षणों में होता है।

अनौपचारिक सम्प्रेषण के निम्न उद्देश्य होते हैं-

1. वैयक्तिक आवश्यकताओं जैसे मैत्री सम्बन्ध आदि को सन्तुष्ट करना।
2. उदासीनता एवं नीरसता के प्रभावों को कम करना।
3. दूसरों के व्यवहार को प्रभावित करना।
4. कार्य सम्बन्धी सूचना, जो औपचारिक मार्ग से प्राप्त नहीं होती है, का स्रोत होना।
5. आपसी एवं वैयक्तिक समस्याओं के समाधान ढूँढना।

लाभ**(Advantages)-** अनौपचारिक सम्प्रेषण के निम्न लाभ हैं-

1. अनौपचारिक संदेश स्वतन्त्रतापूर्वक प्रेषित किये जा सकते हैं। इसमें पद एवं स्थिति बाधक नहीं होता है।
2. इसमें औपचारिक सम्बन्धों की आवश्यकता नही पड़ती है।
3. तत्काल संदेश के कारण समय व्यर्थ नहीं जाता है।
4. यह प्रबन्धकीय निर्णयों व कार्यों में सहायक होता है।
5. यह संगठनात्मक बाधाओं को दूर करने में सक्षम है।
6. यह विचारों की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करता है।

दोष **(Disadvantages)-** इसके कुछ प्रमुख दोष निम्नानुसार हैं-

1. अनौपचारिक सम्प्रेषण का स्रोत ढूँढना ही कठिन होता है। अतः उत्तरदायित्व का निर्धारण कठिन होता हैं

2. इसमें विश्वसनीयता की सीमा निर्धारित करना कठिन होता हैं

3. ये संदेश अर्द्ध-सत्य व विकृत तथ्यों के रूप में हो सकते हैं।

4. इन पर नियन्त्रण रखना तथा इनके आधार पर निर्णय लेना कठिन होता है।

5. ये प्रबन्धकों के लिए भ्रम एवं कठिनाई उत्पन्न करके प्रबन्धकीय कार्यकुशलता पर विपरीत प्रभाव डाल सकते हैं।

11.3.6 अधोगामी समप्रेषण (Downward Communication)-

उच्च अधिकारियों से अधीनस्थों को भेजे जाने वाले सन्देशों को अधोगामी सम्प्रेषण कहा जाता है। ये संदेश औपचारिक पदानुक्रम (Hierarchy) के अनुसार क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर लम्बवत् रूप से चलते हैं। ये प्रबन्धकों तथा अधीनस्थों के मध्य अधिकार-दायित्व सम्बन्धों को दर्शाते हैं। चूंकि इनमें संदेश सामान्य कर्मचारी तक पहुँचाये जाते हैं, अतः इसे "कर्मचारी सम्प्रेषण" (Employee Communication) भी कहते हैं। इस प्रकार के सम्प्रेषण में प्रायः निम्न संदेश सम्मिलित होते हैं-

1. कार्य के सम्बन्ध में आदेश, निर्देश एवं दायित्व;

2. नीतियों, नियमों, कार्यपद्धतियों, लक्ष्यों आदि के बारे में सूचना;

3. कार्य सूचनाएँ तथा अन्य कार्यों से सम्बन्ध;

4. कार्य निष्पादन के बारे में प्रतिपुष्टि;

5. संगठन की प्रगति भावी कार्यक्रमों के बारे में सामान्य सूचना;

6. डाँट-फटकार, प्रशंसा, आलोचनाएँ;

7. अधीनस्थों से कार्य सम्बन्धी प्रश्न।

अधोगामी सम्प्रेषण लिखित, मौखिक या सांकेतिक हो सकता है। ये संदेश प्रायः वैयक्तिक निर्देश, निजी भेंट, सभाओं व सम्मेलन, भाषण, विचार-गोष्ठी, पत्र, मेमो, आदेश-निर्देश, वार्षिक रिपोर्ट, पत्रिकाओं, सूचना-पट्ट, बुलेटिन, हस्त-संकेत आदि के द्वारा प्रेषित किये जाते हैं। इस सम्प्रेषण को अधीनस्थों द्वारा विशेष महत्त्व दिया जाता है, क्योंकि यह कार्य निष्पादन से सम्बन्धित होता है।

इस सम्प्रेषण को प्रभावी बनाने के लिए प्रबन्धकों को योजना बनाने, अधीनस्थों का विश्वास जीतने, तथ्यों की जानकारी करने तथा सकारात्मक अभिवृत्ति निर्मित करने पर ध्यान देना चाहिए।

10.3.7 ऊध्र्वगामी सम्प्रेषण (Upward Communication):-

जब संदेश का प्रवाह निम्न पदों से उच्च पदों की ओर होता है अर्थात् जब संदेश अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा उच्च अधिकारियों को भेजे जाते हैं तो इसे ऊध्र्वगामी सम्प्रेषण कहा जाता है। इसमें प्रायः निम्न प्रकार के संदेश हो सकते हैं-

1. कर्मचारियों के कार्य प्रतिवेदन,
2. अधीनस्थों की कार्य समस्यायें,
3. अधीनस्थों की प्रतिक्रियायें, संशय, प्रश्न आदि।
4. आदेशों-निर्देशों पर आपत्तियाँ,
5. कर्मचारियों के विचार, मत व सुझाव,
6. कार्य सम्बन्धी कठिनाइयाँ, शिकायतें,
7. कार्यों व नीतियों की आलोचनाएँ व सुझाव,
8. कर्मचारियों की व्यक्तिगत समस्यायें,
9. भावनाएँ, अभिवृत्तियाँ, सहायता हेतु निवेदन, इत्यादि।

संगठनों में ऊध्र्वगामी सम्प्रेषण की स्वतन्त्रता के लिए प्रबन्ध द्वारा "खुले द्वार" की नीति, परिवेदन प्रणाली, सुझाव पद्धति, अभिवृत्ति सर्वेक्षण, कर्मचारी-प्रबन्ध बैठक, संयुक्त प्रबन्ध समिति, संघ प्रतिनिधि, सहभागिता आदि की व्यवस्था की जाती है। ऊध्र्वगामी सम्प्रेषण से कर्मचारियों की भावनाओं, समस्याओं व सुझावों का ज्ञान हो जाता है तथा उनके मनोबल एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है।

11.3.8 समतल अथवा पाश्र्विक सम्प्रेषण (Horizontal or Lateral Communication):-

जब समान स्तर के कर्मचारियों, अधिकारियों अथवा विभागाध्यक्षों के बीच संदेशों का आदान-प्रदान होता है तो इसे समतल अथवा पाश्र्विक सम्प्रेषण कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, इसमें निम्न प्रकार का सम्प्रेषण शामिल हैः

(अ) एक ही कार्य-समूह या विभाग में समान स्तर के कर्मचारियों में सम्प्रेषण, तथा

(ब) समान संगठनात्मक स्तर पर कार्यशील विभागों के मध्य अथवा उनके अन्तर्गत समतलीय संदेशवाहन।

यह सम्प्रेषण समन्वयात्मक (Coordinative) प्रकृति का होता है तथा कार्यों के विशिष्टीकरण के कारण इसकी आवश्यकता होती है। यह औपचारिक एवं अनोपचारिक दोनों ही प्रकार का हो सकता है। इसका उद्देश्य विभिन्न कार्यों, विभागों अथवा योजनाओं में सामंजस्य उत्पन्न करना होता है। इससे कार्यों एवं निर्णयों को शीघ्रता से पूरा किया जा सकता है।

संगठन में परियोजना दल, कार्य-बल, अथवा समितियों का गठन समतल सम्प्रेषण के ही प्रारूप हैं।

11.3.9 विकर्णीय सम्प्रेषण (Diagonal Communication):-

विकर्णीय सम्प्रेषण वह होता है जो संगठनात्मक पदानुक्रम तथा आदेश शृंखला (Chain or Command) को काटकर उसके पार निकल जाता है। यह सम्प्रेषण रेखा एवं कर्मचारी विभाग के सम्बन्धों के कारण आवश्यक हो जाता है। रेखा एवं विशेषज्ञ (Staff) कर्मचारियों के मध्य विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध हो सकते हैं, जैसे शुद्ध परामर्शकारी (Purely advisory)अथवा जिनमें विशेषज्ञ (Staff experts) रेखा कर्मचारियों पर सुदृढ़ कार्यकारी सत्ता का उपयोग करते हैं। इस प्रकार कोई भी विशेषज्ञ कार्यात्मक सत्ता होने पर दूसरे विभाग के रेखा कर्मचारी को आदेश-निर्देश दे सकता है।

11.3.10 आन्तरिक सम्प्रेषण (Internal Communication):-

संस्था के भीतर होने वाले अधोगामी, ऊध्र्वगामी एवं समतल संदेशवाहन को ही आन्तरिक सम्प्रेषण कहा जाता है। यह उच्च अधिकारियों एवं अधीनस्थों के बीच तथा विभिन्न संगठनात्मक स्तरों पर कर्मचारियों व इकाइयों के मध्य किया जाता है। संस्था के संचालन में आन्तरिक सम्प्रेषण का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है।

आन्तरिक सम्प्रेषण में आदेश-निर्देश, सूचनाएँ, नियम, कार्यपद्धतियाँ, कार्य रिपोर्ट, संगठन चार्ट, अधीनस्थों के विचार, सुझाव, शंकायें, शिकायतें, समस्यायें, निवेदन आदि समिमलित हैं।

11.3.11 बाह्य सम्प्रेषण (External Communication):-

संस्था अपने बाह्य वातावरण से भी जुड़ी हुई होती है। इस वातावरण में अनेक समूह होते हैं जैसे ग्राहक, विनियोजक, व्यापारी, स्थानीय समुदाय, सरकार, दबाव समूह इत्यादिं इन बाह्य समूहों तथा संस्था के बीच होने वाले संदेशों के आदान-प्रदान को ही बाह्य सप्रेषण कहा जाता है।

एक व्यापारिक उपक्रम सम्पूर्ण वातावरण की एक उप-प्रणाली है। बाह्य वातावरण तथा उपक्रम के बीच सूचनाओं एवं संदेशों का निरन्तर आदान-प्रदान होता रहता है। बाह्य सम्प्रेषण में निम्नलिखित संदेशों व कार्यों को शामिल किया जा सकता है-

1. बाजार अनुसंधान द्वारा ग्राहकों की आवश्यकताओं का अध्ययन;
2. ग्राहकों व व्यापारियों से आदेशों की प्राप्ति;
3. विनियोजन प्रवृत्तियाँ;
4. श्री-संघों के साथ वार्तायें तथा सामूहिक सौदेबाजी;
5. सरकार, राजनेताओं तथा दबाव समूहों के साथ विचार-विमर्श एवं वार्ता;

6. प्रतिस्पर्धी संस्थाओं के साथ समझौते व संयोजन;

7. स्थानीय समुदाय की समस्याओं पर विचार;

8. यंत्र, उपकरण, कच्ची सामग्री आदि की आपूर्ति के लिए व्यवहार;

9. सरकार की नीतियों की समीक्षा व कानूनों का पालन;

10. बैंकों व वित्तीय संस्थाओं के साथ पत्र-व्यवहार;

11. आयात-निर्यात, पूंजी नियन्त्रण, लाभ वितरण आदि के सम्बन्ध में बाह्य पक्षों से सम्पर्क

12. बाह्य सम्प्रेषण को प्रभावी बनाकर ख्याति अर्जित की जा सकती है।

11.3.12 मौखिक सम्प्रेषण (Verbal Communication):-

जब वाणी अथवा शब्दों के उच्चारण द्वारा पारस्परिक रूप से संदेशों का आदान-प्रदान किया जाता है तो इसे मौखिक सम्प्रेषण कहा जाता हैं इसमें प्रेषक व प्रेषिति आमने-सामने रहकर अथवा वे किसी यंत्र के माध्यम से आपस में संदेशों का विनिमय कर सकते हैं। यह सर्वाधिक प्रचलित एवं प्रभावशाली माध्यम माना जाता है।

मौखिक सम्प्रेषण के कई ढंग हैं, जैसे प्रत्यक्ष बातचीत, भेंटवार्ता, संगोष्ठी, सभा, भाषण, विचार-विमर्श, रेडियो वार्ता, साक्षात्कार, सम्मेलन, प्रशिक्षण पाठ्यक्रम आदि। विभिन्न अनुसंधानों से स्पष्ट हो चुका है कि प्रबन्धक वर्ग अपने कुल सम्प्रेषण समय का 75 प्रतिशत समय मौखिक सम्प्रेषणों में ही व्यतीत करते हैं। मौखिक सम्प्रेषण के महत्त्व को निम्न उद्देश्यों द्वारा दर्शाया जा सकता है-

1. प्रभावशाली नेतृत्व की स्थापना करना,

2. प्रबन्ध में मानवीय दृष्टिकोण को मान्यता प्रदान करना,

3. प्रबन्ध में कर्मचारी भागीदारी को प्रोत्साहित करना,

4. परामर्शीय प्रबन्ध को प्रोत्साहित करना,

5. सत्ता के प्रत्यायोजन एवं कार्य निष्पादन को प्रभावी बनाना,

6. व्यवसाय की समस्याओं पर मन्त्रणा करना,

7. कर्मचारियों में समुह भावना का विकास करना,

8. कार्य का प्रजातान्त्रिक वातावरण तैयार करना।

लाभ **(Advantages)-** मौखिक सम्प्रेषण में निम्न लाभ हैं-

1. हाव-भाव, वाणी व शब्दों की अभिव्यक्ति के कारण यह सर्वाधिक प्रभावशाली होता है।

2. अस्पष्टता का निवारण तत्काल हो जाता है।

3. संदेशों को शीघ्र पहुँचाया जा सकता है।

4. प्रत्यक्ष सम्पर्क के कारण प्रतिक्रिया की जानकारी हो जाती है।

5. यह लोचशील है जिसका आवश्यकतानुसार समायोजन सम्भव है।

6. भ्रमों, गलतफहमियों आदि का निवारण सुगमता से हो जाता है।

7. वाक्-चातुर्य से परस्पर सहयोग बढ़ता है।

8. इसमें समय, धन व श्रम की बचत होती है।

दोष **(Disadvantages)-** इसके कुछ दोष निम्नानुसार हैं-

1. इसमें दोनों पक्षों की उपस्थिति आवश्यक होती है।

2. इसका सही-सही अभिलेख उपलब्ध न होने पर भावी संदर्भ देना कठिन हो जाता है।

3. महत्त्वपूर्ण बिन्दु छूट जाने का भय रहता है।

4. लिखित साक्ष्य का अभाव रहता है।

5. सोचने के लिए अपर्याप्त समय रहता है।

6. मौखिक संदेश से जिम्मेदारी की भावना नहीं आ पाती है।

7. इस माध्यम से संदेश में व्यक्तित्व एवं भावनात्मक बाधाएँ खड़ी हो जाती हैं।

8. सभी कही गयी बातों को सुनना व समझना कठिन होता है।

11.3.13 लिखित सम्प्रेषण (Written Communication):-

लिखित सम्प्रेषण से आशय प्रेषक द्वारा किसी संदेश को लिखित रूप में प्रेषण करने से है। लिखित सम्प्रेषण के लिए पत्र-पत्रिकाएँ, बुलेटिन, प्रतिवेदन, हैण्डबुक, मेन्यूअल्स, सुझाव पुस्तिकायें, ग्राफ, चित्र, परिपत्र, कार्यवृत्तांत आदि का प्रयोग किया जाता है।

लिखित सम्प्रेषण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माध्यम है। अतः इसको तैयार करते समय बहुत सावधानी रखनी चाहिए। कीथ डेविस के अनुसार किसी संवाद को लिखते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए-

1. सरल शब्दों व मुहावरों का प्रयोग करना चाहिए।

2. छोटे एवं प्रचलित शब्दों का प्रयोग करना चाहिए।

3. व्यक्तिगत सर्वनामों जैसे "तुम" और "वह" का प्रयोग करना चाहिए।

4. उदाहरणों, दृष्टान्तों व चार्टों का प्रयोग करना चाहिए।

5. छोटे-छोटे वाक्यों तथा अनुच्छेदों का प्रयोग किया जाए।

6. वाक्य संरचना 'एक्टिव वाइस' के प्रयोग पर आधारित होनी चाहिए।

7. अलंकारों और विश्लेषणों का न्यूनतम प्रयोग किया जाना चाहिए।

8. विचारों की अभिव्यक्ति प्रत्यक्ष एवं तर्कयुक्त होनी चाहिए।

9. अनावश्यक शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

लाभ **(Advantages)-** लिखित सम्प्रेषण के निम्नलिखित लाभ हैं-

1. संदेशों में स्पष्टता रहती है तथा इनका प्रमाण उपलब्ध रहता है।

2. इन्हें भावी संदर्भ के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है।

3. यह विस्तृत संदेशों के लिए उपयोगी रहता है।

4. इसमें उत्तरदायित्व का निर्धारण आसान होता है।

5. इसमें अर्थ की समानता रहती है।

6. इसमें भाषा, व्यक्तित्व एवं भावनात्मक बाधाओं पर सुगमता से नियन्त्रण किया जा सकता है।

7. परस्पर अविश्वास के समय यह उपयुक्त रहता है।

दोष **(Disadvantages)-** लिखित सम्प्रेषण के दोष निम्नानुसार हैं-

1. इसमें समय, धन व श्रम का अपव्यय होता है।

2. प्रेषिति की प्रतिक्रियाओं का तत्काल ज्ञान नहीं हो पाता है।

3. इसमें गोपनीयता भंग होने का भय रहता है।

4. इसमें भ्रमों व संदेहों के निवारण में समय लग जाता है।

5. लिखित संदेश में अनेक औपचारिकताएँ पूरी की जाती है।

इन सब दोषों के उपरान्त भी लिखित सम्प्रेषण बहुत उपयोगी होता है। तकनीकी, औपचारिक एवं वैधानिक प्रकृति के सम्प्रेषण तो लिखित ही होते हैं। अधिक लम्बे, आँकड़ेयुक्त संदेशों के लिए भी लिखित माध्य ही अपनाना पड़ता है। अनेक वैधानिक सभाओं की नियमावलियाँ, कार्यावली, सूक्ष्म आदि लिखित रूप में ही सम्प्रेषित किये जाते हैं।

11.3.14 सांकेतिक अथवा अमौखिक सम्प्रेषण (Gestural or Non-verbal Communication)-

यह सम्प्रेषण संकेतों, हाव-भावों, शारीरिक मुद्राओं, चेहरे को अधिक दर्शाते हैं (Actions often speak louder than words) यह उक्ति सांकेतिक सम्प्रेषण के महत्त्व को प्रकट करती है। सांकेतिक सम्प्रेषण "शरीर की भाषा (Body language) अथवा व्यवहार की भाषा (Language of Action) पर आधारित है।

"सम्प्रेषण में प्रत्यक्ष रूप में, जाने-अनजाने में प्रेषित शब्दों, प्रवृत्तियों, भावनाओं, स्वरों, संकेतों तथा इशारों का योग है। यहाँ तक कि मौन रहना भी सम्प्रेषण का प्रभावपूर्ण रूप है। किसी व्यक्ति के ललाट पर पड़े हुए बल असहमति की इतनी स्पष्ट अभिव्यक्ति है जो कई सौ शब्दों द्वारा भी प्रकट नहीं की जा सकती है।" सांकेतिक सम्प्रेषण में पीठ थपथपाना, किसी व्यक्ति की ओर मुस्कुराना, उससे हाथ मिलाना, आँख से इशारा करना, टेढ़ी निगाह से देखना, मुँह लटका देना आदि शारीरिक हाव-भाव सम्मिलित है। प्रायः सांकेतिक सप्रेषण का उपयोग स्वतन्त्र रूप से कम किया जाता है। इसका प्रयोग मौखिक संचार के साथ ही अधिक होता है।

11.3.15 दृश्य श्रव्य सप्रेषण (Audio-Visual Communication)-

वर्तमान युग में सम्प्रेषण के दृश्य-श्रव्य माध्यमों का महत्त्व तेजी से बढ़ता जा रहा है। आजकल उद्योगों में भी अनेक क्रियाओं जैसे प्रशिक्षण, सभाओं व सम्मेलनों, विक्रय अभियानों, सर्वेक्षणों, प्रचार आदि में चित्रों, फिल्मों, वीडियो कैसेट, मूवी कैमरों, टेप-रिकार्डरों का उपयोग बहुतायत से किया जा रहा है। तकनीकी उपकरणों के उत्पादन व विक्रय, विज्ञापन, शिक्षण कार्यक्रमों आदि में दृश्य-श्रव्य सम्प्रेषण का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ गया है।

11.4 सारांश

संदेशों को उनकी प्रकृति, सम्बन्ध, संगठन के प्रकार, क्षेत्र आदि के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। सूचनात्मक सम्प्रेषण, अन्रतवैयक्तिक सम्प्रेषण, औपचारिक समप्रेषण, अनौपचारिक सम्प्रेषण, अधोगामी सम्प्रेषण, मौखिक सम्प्रेषण, लिखित सम्प्रेषण आदि सम्प्रेषण के विभिन्न प्रकारों के उदाहरण है। संगठन के आकार, उद्देश्यों तथा परिस्थिति के अनुसार किन्हीं भी प्रकारों को प्रयोग किया जा सकता है।

11.5 शब्दावली

अधोगामी: ऊपर से नीचे की तरफ

उध्र्वगामी: नीचे से ऊपर की तरफ

सांकेतिक: हावभाव, शारीरिक मुद्रा, संकेत

दृश्य: देखने योग्य

श्रव्य: सुनने योग्य

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सम्प्रेषण प्रक्रिया के विभिन्न प्रारूपों (मा ॅडल्स) को समझाइये।
2. सूचनात्मक, अन्रतवैयक्तिक तथा संगठनात्मक सम्प्रेषण को लिखिए।
3. औपचारिक सम्प्रेषण तथा अनौपचारिक सम्प्रेषण में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
4. मौखिक तथा लिखित सम्प्रेषण में ध्यान देने योग्य बातों को लिखिए।
5. सांकेतिक सम्प्रेषण तथा दृश्य सम्प्रेषण पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

11.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. बर्नार्ड चेस्टर (1956) द फन्क्शन्स आ ॅफ एक्सीक्युटिव्स्।
2. दशोरा, एम.एल. (1996) संगठन, सिद्धान्त एवं व्यवहार, हिमांशु पब्लिकेशन।
3. ड्रकर, एफ.पी. (1954) द प्रेक्टिस आ ॅफ मेनेजमेन्ट।
4. फिशर, एफ.पी. (1955) ए न्यू लुक एट मेनेजमेंट कम्युनिकेशन्स , पर्सनोल वोल्युम 6
5. जेक्स, ई. (1974) द चेंजिंग कल्चर आ ॅफ कम्युनिकेशन
6. हायाकावा, एस.आई. (1949) लेंग्वेज इन थोट एण्ड एक्शन।
7. सुधा, जी.एस. (2005) प्रबन्ध अवधारणाएँ एवं संगठनात्मक व्यवहार, रमेश बूक डिपो, नई दिल्ली।

इकाई - 12

सम्प्रेषण: निपुणताएँ एवं क्षेत्र

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 सम्प्रेषण का महत्त्व

12.3 सम्प्रेषण का क्षेत्र

12.4 सम्प्रेक्षण में बाधाएँ

12.5 प्रभावी सम्प्रेषण के लिए आवश्यक निपुणताएँ

12.6 सारांश

12.7 शब्दावली

12.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:-

सम्प्रेषण के महत्त्व को जान पाएँगे।

सम्प्रेषण की बाधाओं को तथा उन्हें दुर करने के तरीकों को जान पाएँगे।

सम्प्रेषण के लिए आवश्यक निपुणताओं को जान पाएँगे।

12.1 प्रस्तावना

आधुनिक समय में सम्प्रेषण का महत्त्व दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है। सम्प्रेषण सम्बन्धों में गतिशीलता लाता है। आज समाज तथा संगठनों में सूचना ओं के स्तर में वृद्धि हो गई है। इससे सम्प्रेषण का महत्त्व और भी बढ़ गया है। अगर सम्प्रेषण में किसी तरह की त्रुटि या गलती रह जाती है तो कई बार समाज तथा

संगठन को कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। अतः सम्प्रेषण के लिए विशेष तकनीक, कौशल तथा निपुणताओं का होना आवश्यक है।

12.2 सम्प्रेषण का महत्त्व

1. प्रबन्धकीय कार्यों का क्रियान्वयन:- सभी प्रबन्धकीय कार्यों की सफलता सम्प्रेषण पर निर्भर है। अच्छा सम्प्रेषण सुदृढ़ प्रबन्ध की नींव है। किसी भी उपक्रम में प्रबन्धक सम्प्रेषण के माध्यम से ही विभिन्न प्रबन्धकीय क्रियाओं जैसे नियोजन, संगठन, निर्देश एवं नियन्त्रण आदि का सफलतापूर्वक निष्पादन करता है। इन प्रबन्धकीय कार्यों में सम्प्रेषण का महत्त्व निम्न प्रकार है-

नियोजन:- प्रबन्धक अपने द्वारा निर्धारित योजनाओं की जानकारी अपने अधीनस्थों को देता है तथा उन्हें लागू करवाता है। सर्वश्रेष्ठ विकल्प की खोज एवं चयन में विचारों के आदान-प्रदान का बहुत महत्त्व है। सम्प्रेषण के अभाव में प्रबन्धकीय योजनाएँ केवल कागजों तक सीमित रह जाती है।

संगठन. संगठन निर्माण में भी सम्प्रेषण का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बर्नार्ड के अनुसार, "संगठन के व्यापक सिद्धान्तों में सम्प्रेषण का एक केन्द्रीय स्थान है क्योंकि संगठन के विस्तार एवं क्षेत्र का निर्धारण प्रायः पूर्ण रूप से सम्प्रेषण की तकनीकों के द्वारा ही होता है।" अधिकारों के प्रत्यायोजन, कार्य आबंटन आदि के लिए सम्प्रेषण आवश्यक होता है।

निर्देशन एवं नेतृत्व. आज नेतृत्व की विचारधारा जनतांत्रिक एवं सहभागी हो गयी है। अधीनस्थों के विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करके ही श्रेष्ठ नेतृत्व स्थापित किया जा सकता है। सहभागी नेतृत्व के द्वारा ही अधीनस्थों के मध्य विश्वास की भावना जागृत की जा सकती है तथा उन्हें लक्ष्य-प्राप्ति की ओर प्रेरित किया जा सकता है।

समन्वय. सम्प्रेषण समन्वय का एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है। इसके द्वारा यथा समय सूचनायें एवं निर्देश प्रसारित करके विभिन्न कार्यों में सामंजस्य उत्पन्न किया जा सकता है।

नियन्त्रण. नियन्त्रण में प्रबन्धक यह जानने का प्रयास करता है कि कार्य की प्रगति पूर्व-निर्धारित योजना के अनुसार है अथवा नहीं? वह त्रुटियों व विचलनों को ज्ञात करके उनकी पुनरावृत्ति रोकने का प्रयास करता है। किन्तु ये सभी कार्य कुशल संचार प्रणाली के बिना सम्भव नहीं है।

2. अभिप्रेरण तथा मनोबल का निर्माण. कर्मचारियों के व्यक्तिगत लक्ष्यों, आवश्यकताओं एवं भावनाओं का ज्ञान कर उन्हें उत्प्रेरित करने के लिए सम्प्रेषण आवश्यक होता है। सभी कार्य करने हेतु मौखिक अथवा लिखित शब्दों अथवा अंकों की भाषा ही उसका एक मात्र उपकरण होती है।

3. निर्णयन. सही निर्णयों के लिए प्रबन्धक के पास पर्याप्त सूचनाओं, तथ्यों एवं आँकड़ों का ज्ञान होना आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त, निर्णय के लिए विभिन्न व्यक्तियों से परामर्श करना, सुझाव लेना एवं औपचारिक विचार-विमर्श करना भी आवश्यक होता है। किन्तु ये सभी कार्य सम्प्रेषण प्रणाली के बिना संभव नहीं होते हैं।

4. पूर्वानुमान के लिए आवश्यक. प्रबन्ध को व्यवसाय के संचालन में कई प्रकार के माँग, कीमत, प्रतिस्पर्धा, विक्रय, बाजार-दशाओं आदि से सम्बन्धित पूर्वानुमान करने होते हैं। इस हेतु अनेक सूचनाओं , तथ्यों, मत, परामर्श, जानकारी को एकत्रित करना पड़ता है। इस प्रकार सफल पूर्वानुमान के लिए सम्प्रेषण की निरन्तर आवश्यकता पड़ती है।

5. व्यवसाय का कुशल संचालन. आज व्यवसाय का स्वरूप अत्यन्त जटिल हो गया है। व्यवसाय के संचालन के लिए अनेक तकनीकी, आर्थिक, प्रशासनिक, वित्तीय, निर्माणी क्रियाओं का निष्पादन किया जाता है। व्यवसाय में विशिष्टीकरण, श्रम विभाजन, नवीन संगठन प्रारूपों, नवीन प्रौद्योगिकी के प्रयोग से व्यवसाय बहु-आयामी एवं बहु-पक्षीय हो गया है। अनेक विभागों, अनेक क्रियाओं, अनेक हितों व लक्ष्यों के कारण व्यवसाय के सूत्र में बाँधकर चलाना आवश्यक हो गया है। इस प्रकार व्यवसाय का कुशल संचालन प्रभावी सम्प्रेषण व्यवस्था पर निर्भर हो गया है।

6. एकीकृत एवं प्रजातान्त्रिक प्रबन्ध की स्थापना. प्रत्येक कर्मचरी को प्रबन्ध से जोड़ना, उसका सहयोग लेना, उसके विचारों व सुझावों को सुनना आवश्यक हो गया है। इस प्रकार सम्प्रेषण से प्रजातान्त्रिक प्रबन्ध की नींव सुदृढ़ होती है। लिटिलफिल्ड के अनुसार, "अच्छे विचारों का सम्प्रेषण प्रजातान्त्रिक प्रबन्ध की ओर एक मार्ग है।"

7. मानवीय सम्बन्धों के निर्माण में सहायक:- आधुनिक प्रबन्ध में मानवीय सम्बन्धों का विशेष महत्त्व है। आज कर्मचारी को उत्पादन के एक साधन के रूप में नहीं, वरन् एक परिपूर्ण मानव के रूप में देखा जाता है। मानवीय सम्बन्धों की स्थापना के लिए कर्मचारियों की समस्याओं, कठिनाइयों, भावनाओं, अपेक्षाओं आदि के बारे में पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। नियोक्ता, प्रबन्धकों तथा कर्मचारियों के मध्य सतत् सम्प्रेषण से ही सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्धों की स्थापना की जा सकती है।

8. संदेहों व अज्ञानता का निवारण:- संदेह एवं भ्रम के कारण आपसी सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। नियमों व कार्यपद्धतियों की अज्ञानता भी कर्मचारियों के कार्य में बाधक होती है। सम्प्रेषण की उचित व्यवस्था से ये सभी कार्य-बाधाएँ दूर हो जाती हैं। यथा समय सूचनाओं व तथ्यों के आदान-प्रदान से शंकाओं व भ्रमों का निवारण करके कार्य-कुशलता में वृद्धि की जा सकती है।

9. पारस्परिक सहयोग में वृद्धि:- प्रभावी सम्प्रेषण से कर्मचारियों में संस्था के प्रति निष्ठा, उत्तरदायित्व की भावना तथा पारस्परिक सहयोग एवं सद्भावना में वृद्धि होती है। प्रबन्धक व कर्मचारी एक-दूसरे की समस्याओं के समाधान में रूचि लेते हैं। वे एक दूसरे की अपेक्षाओं व भावनाओं को समझने लगते हैं तथा एक दूसरे को समर्पित भाव से सहयोग देने को तत्पर रहते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आधुनिक प्रबन्ध व्यवस्था में सम्प्रेषण प्राण ऊर्जा के समान है सम्प्रेषण के बिना कोई भी संगठन अधिक समय तक काय्र नहीं कर सकता है।

11.3 सम्प्रेषण का क्षेत्र

1. संगठन/संस्था में प्रबन्ध के विभिन्न समूहों/स्तरों में सम्प्रेषण:- किसी भी संगठन/संस्था के तीनों स्तरों शीर्ष प्रबन्धन, मध्य प्रबन्धन तथा पर्यवेक्षकीय स्तर में सम्प्रेषण महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शीर्ष प्रबन्ध समूह संगठन के आंतरिक एवं बाह्य वातावरण से सम्बन्धित सम्प्रेषण करता है तो मध्य प्रबन्धन, संगठन के शीर्ष प्रबंधन तथा श्रमिकों के मध्य की कड़ीहै। संगठन के उद्देश्यों के प्राप्ती हेतु इन तीनों स्तरों में नियमित सफल सम्प्रेषण होना अति आवश्यक है।

2. सामाजिक एवं सांस्कृतिक समूहों में भागिता:- संपर्क सूत्र को विकसित करने के लिए पिकनिक, प्रार्थना सभाएँ, यात्राएँ, क्लब, सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेल-कुद प्रतिस्पर्धाएँ, सामाजिक एवं धार्मिक क्रियाएँ आदि संप्रेषण का अच्छा माध्यम सिद्ध होती है।

3. विशेष समूहों के साथ संप्रेषण:- बड़े व्यवसाय कई विशेषज्ञों और विशिष्ट कार्य समूहों के साथ संप्रेषण करके उनकी सेवाएँ ग्रहण करते हैं।

4. परिवारों के साथ सम्प्रेषण :- संगठन एक प्रकार का समाज है जहां सभी कर्मचारी अपने परिवारों के साथ रहते हैं। प्रबंध एवं कर्मचारी विभिन्न कार्यक्रमों में अपनी पारिवारिक जीवन को भी सुखमय बनाना चाहते हैं। परिवारों के साथ संप्रेषण में संगठन द्वारा हाउस जर्नल, न्यूज लेटर, वार्षिक प्रतिवेदन, धार्मिक कार्य, सामाजिक कार्य, सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं खेलकूद, परिवार नियोजन, रक्तदान आदि कार्यक्रम सम्मिलित किये जा सकते हैं।

5. श्रम संघों के साथ सम्प्रेषण :- श्रमिक संघों के माध्यम से संगठन अपने और श्रमिकों के बीच की खाई को मिटा सकता है। आजकल श्रमसंघों का महत्त्व कल्याणकारी कार्यों के लिए भी बढ़ रहा है।

6. जनता के साथ सम्प्रेषण :- अच्छे संगठन जनसंपर्क की दृष्टि से कई सेमिनार, सांस्कृतिक कार्यक्रम, विज्ञापन कार्यक्रम आदि आयोजित करते हैं। कई संगठन अपने शिक्षण संस्थान, चिकित्सालय, धर्मार्थ संस्थाएँ चलाते हैं तथा छात्रवृत्तियाँ वितरित करते हैं। इन सब क्रियाओं के द्वारा उनका संपर्क जनता से बना रहता है।

7. सरकार के साथ सम्प्रेषण :- जिस वातावरण में संगठन कार्य करता है वहां की सरकार अथवा विधि व्यवस्था आदि से उसे कई प्रकार के कार्य निकलवाने होते हैं। अक्सर शीर्ष प्रबंध के व्यक्ति सरकारी विभागों से अपना संपर्क रखते हैं जिनसे संगठन का काम सुगम हो जाता है।

संगठन के लिए यह आवश्यक है कि वह अपना संपर्क जाल सूत्र इस प्रकार विकसित करे कि समाज के सभी वर्गों, कर्मचारियों, उनके परिवारों तथा सरकार के साथ सूचनाओं, समस्याओं,

विचारों का आदान-प्रदान कर सकें तथा संगइन की प्रतिष्ठा लोगों के मस्तिष्क में अच्छे ढंग से स्थापित कर सकें।

11.4 सम्प्रेषण मे बाधाएँ

संप्रेषण का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को सही अर्थबोध कराके कार्य के लिए प्रेरित करना है। किन्तु कभी-कभी वे संदेश का भिन्न-भिन्न अर्थ लगा लेते हैं तथा सम्प्रेषण का इच्छित उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता है। ऐसा सम्प्रेषण की बाधाओं, अवरोधकों अथवा सम्प्रेषण विभंग (Brakdown) के कारण होता है। सम्प्रेषण में अनेक भौतिक, मनोवैज्ञानिक एवं अर्थगत (physical, phychological and semantic) बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। भौतिक बाधाएँ भौतिक वातावरण, जैसे शोरगुल, दूरी, समय की कमी के कारण उत्पन्न होती हैं। मनोवैज्ञानिक बाधाएँ भावनाओं, पद-स्थिति, वैयक्तिक विचार, सामाजिक मूल्यों आदि घटकों से सम्बन्धित है। अर्थगत बाधायें प्रेषक एवं प्रेषिति की योग्यता, भाषा-ज्ञान एवं अनुभव के कारण उत्पन्न होती है।

संक्षेप में सम्प्रेषण की प्रमुख बाधायें एवं विभंग घटक निम्नलिखित हैं

1. संगठन की संरचना से सम्बन्धित बाधाएं :- संस्था की संगठन-संरचना सम्प्रेषण की अनेक बाधाओं को जन्म देती है। जैसेः प्रबन्धकीय स्तरों की अधिकता, प्रबन्धकों की सत्ता व मनमानी, विशिष्टीकरण, पदोन्नति, पद में अन्तर या स्थिति में अन्तर आदि कई मुद्दे हैं जो सम्प्रेषण में बाधक बन सकते हैं।

2. भाषा सम्बन्धी बाधायें:- सम्प्रेषण प्रक्रिया में भाषा सम्बन्धी बाधायें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं। भाषा सम्बन्धी कठिनाइयों से प्रेषक तथा प्रेषिति दोनों के मस्तिष्क में "अर्थ-भेद" अथवा "समझ अन्तराल" बना रहता है। फलस्वरूप सम्प्रेषण का उद्देश्य ही विफल हो जाता हैं भाषा समबन्धी प्रमुख बाधायें इस प्रकार है-

    1)भाषा की भिन्नता,

    2)शब्दों की जटिलता व क्लिष्टता,

    3)द्वि-अर्थी वाक्य रचना व दोषपूर्ण अनुवाद,

    4)गलत शब्दों का चयन अथवा तकनीकी शब्दावली,

    5)विशिष्ट, स्थानीय बोलीगत अथवा स्व-निर्मित शब्दों का प्रयोग,

    6)शब्दार्थ, भावार्थ अथवा संकेतात्मक व निर्देशात्मक अर्थ की समस्या,

    7)सुविधात्मक रूपान्तरण व अनुवाद।

उपर्युक्त भाषा-कारणों से संदेश के पहुँचने में बाधा उपस्थित हो जाती है।

3. तकनीकी बाधाएँ **(Technical Barriers):-** सम्प्रेषण की तकनीकी बाधाएँ सम्प्रेषण माध्यमों में अभियांत्रिकी दोषों, संचालकीय त्रुटियों, गलत माध्यमों के चयन अथवा संचार यंत्रों के गलत ढंग से प्रयोग करने के फलस्वरूप उत्पन्न होती हैं। पर्याप्त सम्प्रेषण साधनों के अभाव में भी तकनीकी बाधाएँ खड़ी हो जाती है।

4. वैयक्तिक भिन्नतायें **(Individual Differences):-** संगठन में वैयक्तिक भिन्नतायें पाया जाना स्वाभाविक है। व्यक्तियों के रहन-सहन, रीति-रिवाज, खान-पान आदि में अन्तर बना रहता है। इसके फलस्वरूप उनकी स्थिति में अन्तिर पाया जाता है। टेनरी एच.एबर्स ने सम्प्रेषण की समस्या को प्रभावित करने वाले निम्नलिखित वैयक्तिक भिन्नताओं का वर्णन किया है-

1)संवेदन घटक - स्वास्थ्य एवं शारीरिक तत्त्व,

2)आयु, लिंग, शैक्षिक स्तर,

3)क्षेत्रीय भिन्नतायें- रहन-सहन, भाषा, रीति-रिवाज, खान-पान,

4)स्वभाव, आदतें, धर्म,

5)आर्थिक स्तर,

6)संगठन, वैचारिक मतभेद,

7)व्यक्तिगत घटक - अनुभव, ज्ञान, विचार दृष्टिकोण, तौर-तरीके आदि।

8)उपर्युक्त समस्त घटक सम्प्रेषण की प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करते हैं।

5. अन्रतवैंयक्तिक एवं बौद्धिक बाधायें:- सम्प्रेषण की कई बाधायें प्रेषक एवं प्रेषिति की बौद्धिक स्थिति तथा उनके अन्तर्वैंयक्तिक व्यवहार से सम्बन्ध रखती है। इस प्रकृति की कतिपय बाधायें इस प्रकार हैं-

(i) अस्पष्ट मान्यतायें:- अस्पष्ट मान्यताओं के कारण प्रेषक एवं प्रेषिति दोनों संदेश की अपने-अपने दृष्टिकोण से व्याख्या करते हैं जो परसपर विरोधी हो सकती है। इससे दुविधापूर्ण स्थिति बन जाती है तथा सम्प्रेषण विकृत हो जाता है।

(ii) अपर्याप्त समायोजन काल:- कई विषयों से सम्बन्धित सम्प्रेषण में व्यक्तियों के सोचने एवं स्वयं को मानसिक रूप से तैयार करने हेतु पर्याप्त समय की आवश्यकता होती है। किन्तु इस समायोजन काल की अपर्याप्तता के कारण सम्प्रेषण अपूर्ण रहता है।

(iii) अविश्वास:- जब सम्प्रेषण प्रक्रिया के दोनों पक्षों को एक-दूसरे पर अविश्वास होता है तो मूल सन्देश में अपने अनुसार कुछ परिवर्तन कर देते हैं। यह संशोधन सम्प्रेषण के प्रभाव को कम कर देता है। पूर्वाग्रह के फलस्वरूप भी ये परिवर्तन कर लिये जाते हैं।

(iv) संदर्भ ढाँचा:- एक ही संदेश का अलग-अलग व्यक्ति अपने पूर्व अनुभव के आधार पर भिन्न-भिन्न निर्वचन कर लेते हैं। फलतः संदेश के लिपिबद्धकरण (encoding) तथा अनुवाद (decoding) में अन्तर उत्पन्न हो जाता है।

(v) चयनात्मक अवबोध:- चयनात्मक अवबोध के कारण एक व्यक्ति केवल उन्हीं सूचनाओं का अनुमोदन करता है जो उसके विश्वास से मेल खाती है। अर्थात् व उन सूचनाओं को निरस्त या अवरूद्ध कर देता है जो उसके विचारों के अनुरूप नहीं होती है।

(vi) मूल्य निर्णय:- कई बार कुछ प्रबन्धक किन्हीं संदेशों अथवा उनके प्रेषकों के बारे में अपने मूल्य निर्णय, मत या छवि का अपने मस्तिष्क में निर्माण कर लेते हैं। वे पूर्ण संदेश प्राप्त करने से पूर्व ही उसकी उपयोगिता का मूल्यांकन कर लेते हैं। यह पूर्व मत सम्प्रेषण में बाधक होता है।

7. सम्प्रेषण अतिभार:- कई बार एक प्रबन्धक के पास अपनी कार्य एवं प्रत्युत्तर क्षमता से अधिक सूचनायें निष्पादन के लिए आ जाती हैं। मिलर के अनुसार प्रबन्धक ऐसी स्थिति में निम्न प्रतिक्रियायें करता है जो सम्प्रेषण में बाधक होती हैं-

(1) छोड़ना . कुछ सूचनाओं का प्रत्युत्तर न दे पाना।

(2) भूल . सूचनाओं का गलत प्रत्युत्तर देना।

(3) प्रतीक्षा करवाना. जब तक कोई पे्ररणा प्राप्त न हो, विलम्ब करके सूचनाओं के अधिक भार को बराबर करना।

(4) फिल्टरिंग. कम महत्त्वपूर्ण सूचनाओं को पृथक् करना।

(5) मोटा अनुमान. 'आवरण प्रत्युत्तर' (Blanket response) से कार्य चलाना। अनुमान के आधार पर प्रत्युत्तर देना।

(6) बहु-श्रृंखला का प्रयोग. अतिरिक्त सम्प्रेषण श्रृंखला का प्रयोग करके सूचनाओं का प्रवाह बदलना।

(7) पलायन . सूचनाओं की उपेक्षा करना।

8. भौगोलिक बाधायें:- प्रेषक एवं प्रेषिति के मध्य भौगोलिक दूरी भी शीघ्र सम्प्रेषण में बाधा पहुँचाती हैं इसमें लागत बढ़ जाने के कारण अपर्याप्त सूचनाओं का ही सम्प्रेषण किया जाता है।

9. मानवीय सम्बन्ध विषयक बाधायें:- कर्मचारियों के मध्य मधुर मानवीय सम्बन्धों के अभाव में सम्प्रेषण की प्रक्रिया विफल हो जाती है। असहयोग, संघर्ष, मतभेद, विरोध व वैमनस्य की भावना बन जाने पर सन्देशों के प्रवाह में बाधा उत्पन्न होती है।

10. विकृत उद्देश्य:- अस्पष्ट दोषपूर्ण एवं विकृत उद्देश्यों के आधार पर सम्प्रेषण की सफलता की आशा करना व्यर्थ होता है। उद्देश्यों के असंगतपूर्ण एवं स्वार्थ-केन्द्रित होने की दशा में भी सम्प्रेषण से कोई श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त नहीं किये जा सकते हैं।

11. अर्द्ध-श्रवण:- प्रेषक या प्रेषिति के द्वारा संदेश को ठीक प्रकार से न सुन पाना भी सम्प्रेषण में बाधा खड़ी करता है। श्रवण सम्प्रेषण का सबसे अधिक उपेक्षित भाग है। आधी बात सुनना अपने इंजिन को निष्क्रिय गति वाली स्थिति में दौड़ाने के समान है। इसमें आप गैसोलीन का उपयोग तो करते हैं किन्तु आगे बिल्कुल नहीं बढ़ पाते।

12. पूर्व-मूल्यांकन:- कई बार सन्देश प्राप्तकर्ता प्रेषक द्वारा अपना सन्देश पूरा करने के पूर्व ही उसका पूर्व मूल्यांकन करके सन्देश को बीच में ही रोक देता है। ऐसा पूर्व मूल्यांकन भी सूचना के हस्तान्तरण में बाधा उपस्थित करता है।

13. स्रोत की विश्वसनीयता:- स्रोत की विश्वसनीयता से तात्पर्य सन्देश प्राप्तकर्ता द्वारा सम्प्रेषक के शब्दों, विचारों एवं व्यवहार में व्यक्त किये भरोसे, विश्वास एवं निष्ठा से है। जहाँ श्रमसंघ के नेता प्रबन्ध को 'शोषणकर्ता' के रूप में तथा प्रबन्धक श्रम नेताओं को 'राजनैतिक पशु' के रूप में देखते हों, वहाँ वास्तविक सम्प्रेषण की संभावना कम हो जाती है।

14. समयाभाव:- कई बार समयाभाव के कारण संदेश यथ्ज्ञासमय नहीं भेजे जाते हैं तथा लोगों से सम्पर्क करना भी सम्भव नहीं होता है। इससे सम्प्रेषण की गतिशीलता कम हो जाती है।

15. अनौपचारिक सम्प्रेषण:- कई बार समूहों में अनौपचारिक सम्प्रेषण-गलत अफवाओं, कही-सुनी गई बातों, अर्द्ध-सत्य कथनों आदि के कारण सही सूचनाओं को भी अपवाहें मान लिया जाता है तथा व्यक्ति गलत अफवाहों पर अधिक ध्यान देने लगता है। इससे सम्प्रेषण प्रणाली में अव्यवस्था फैल जाती है।

16. परिवर्तन का विरोध:- यद्यपि मानव परिवर्तन चाहता है किन्तु संगठन में कर्मचारी विद्यमान परिस्थितियों में ही कार्य करना पसन्द करता है। वह अपनी कार्य शैलियों, कार्यपद्धतियों व कार्य-तरीकों में दबलाव नहीं चाहता है। अतः वह परिवर्तन सम्बन्ध सूचनाओं की उपेक्षा करता है।

17. अन्य सामान्य रूकावटें:- सम्प्रेषण प्रक्रिया को अवरूद्ध करने वाली अन्य सामान्य रूकावटें निम्नलिखित हैं-

    i. घटनाओं अथवा विषय-वस्तु के वास्तविक अवलोकन या वर्णन तथा निष्कर्षों में कोई अन्तर न करना।

    ii. विचारों को एक ही साँचे में ढालने तथा अवरूद्ध मूल्यांकन करने की प्रवृत्ति।

    iii. कर्मचारियों अथवा अधिकारियों में कतराने तथा ध्रुवीयकरण "यह अथवा वह" करने की प्रवृत्ति।

iv. ऊध्र्वगामी संदेशों को फिल्टर करने की प्रवृत्ति।

v. समय दबाव के कारण संदेशों के लिए लघुपथन की प्रवृत्ति।

vi. सांस्कृतिक विभिन्नताएँ, प्रतिक्रिया के ज्ञान का अभाव, दूर्बल स्मृति, सम्प्रेषण की अत्यधिक औपचारिकता, वित्त की कमी आदि से सम्बन्धित रूकावटें।

12.5 प्रभावी सम्प्रेषण में आवश्यक निपुणताएँ

अच्छा सम्प्रेषक बनने के लिए न केवल अपने संदेशों में सुधार करना चाहिए, वरन् सम्प्रेषण के प्रति अपनी समझ एवं कौशल में भी वृद्धि करनी चाहिए। सम्प्रेषण की बाधाओं को दूर करने के लिए निम्न उपाय करने चाहिए-

1. प्रसारण से पूर्व पर्याप्त विचार किया जाये।
2. श्रोताओं को प्रसारण संबंधी जानकारी दी जाये।
3. संप्रेषण की भाषा सरल हो तथा प्रस्तुति आकर्षक हो।
4. सभी सूचनाएँ दी जाए किन्तु मिथ्या शब्दों का प्रयोग न हो।
5. आवश्यक प्रश्न पूछने या शंका समाधान का प्रावधान हो।
6. प्रणाली निर्माण के समय वर्तमान स्थितियाँ और भावी संभावनाओं का ध्यान रखा जाये।
7. संप्रेषण का उद्देश्य स्पष्ट हो।
8. आवश्यक चित्रों की सहायता ली जाये।
9. ध्यानपूर्वक सुनने के लिए उपयुक्त वातावरण दिया जाये।
10. जहाँ तक सम्भव हो, संदेश सम्बन्धित व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप से दिये जाने चाहिए। प्रत्यक्ष सम्प्रेषण से समय बचता है तथा मूल सन्देश अपरिवर्तित रहता है।
11. सन्देश के लिए सरल, सुबोध एवं प्रेज्ञिति के बौद्धिक स्तर के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए। क्लिष्ट तथा द्वि-अर्थी शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। भाषा 'समझ' उत्पन्न करने वाली होनी चाहिए, 'पहेली' (puzzle) नहीं। तकनीकी शब्दावली (Technical jargon) से बचना चाहिए।
12. संदेश के निर्माण, संचरण तथा प्रतिपुष्टि में सम्प्रेषण के वैज्ञानिक सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए।

13. प्रत्येक सम्प्रेषण योजनाबद्ध एवं व्यवस्थित होनी चाहिएं सम्प्रेषण के प्रत्येक पहलू पर विचार किया जाना चाहिए।

14. सम्प्रेषण के लक्ष्य स्पष्ट होने चाहिएं 'वास्तविक एवं प्रकट' दोनों प्रकार के उद्देश्यों में एकसमानता रहनी चाहिए।

15. संदेश की प्रकृति, तीव्रता एवं अनिवार्यता को ध्यान में रखते हुए संचार के उपयुक्त माध्यम का चयन किया जाना चाहिए।

16. कुशल सम्प्रेषण के लिए संगइन संरचना में प्रबन्ध के स्तर भी यथासम्भव न्यूनतम रहने चाहिए।

17. कर्मचारियों में पारस्परिक सद्भाव एवं सयोग का वातावरण निर्मित करके ही सम्प्रेषण की प्रभावी व्यवस्था की जा सकती है।

18. प्रेषक को वैयक्तिक भिन्नताओं को ध्यान मेंरखकर ही सूचनाओं का प्रेषण करना चाहिए ताकि उनसे उत्पन्न बाधाओं को दूर किया जा सके।

19. प्रबन्धक श्रेष्ठ प्रबन्ध प्रणाली-कुशल नेतृत्व, निर्देशन, अभिप्रेरण व नियन्त्रण को अपनाकर सम्प्रेषण के अवरोधों को दूर कर सकते हैं।

20. प्रेषक एवं प्रेष्ज्ञिति को बिना किसी पूर्वाग्रह या पर्व-मान्यता के खुले मस्तिष्क से सम्प्रेशण करना चाहिए।

21. जोसेफ दूहर के शब्दों में, "कुशल श्रोता चेतना का विकास कर लेता है, जो व्यक्तिगत अलगाव की इकाई को पाटने तथा दूसरों के अनुभवों एवं भावनाओं का लाभ उठाने में सहायक होती है।"

22. सम्प्रेषण की सफलता बहुत कुछ सीमा तक संदेशों के समयानुकूल सम्प्रेषण पर निर्भर करती है। उपयुक्त समय पर भेजी गई सूचना अनेक प्रकार से उपयोगी सिद्ध होती है।

23. संगठन में स्वयंपूर्ण इकाइयों की स्थापना से उनमें निकट सम्पर्क बढ़ जाता है तथा संदेशों के आदान-प्रदान में सुविधा हो जाती है।

24. जब संगठन में अनेक स्तर होने के कारण संदेशों के आदान-प्रदान में कठिनाई उत्पन्न होने लगती है तो सम्प्रेषण के लिए वैकल्पिक माध्यमों व साधनों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

25. सम्प्रेषण की प्रक्रिया को अनियोजित नहीं छोड़ा जाना चाहिए। सम्प्रेषण का समय, स्थान, उद्देश्य, विषय-वस्तु, प्रेषिति आदि पूर्व-निर्धारित होने चाहिए। सूचना प्रवाह का नियमन किया जाना चाहिए।

26. प्रेषक को इस बात की जानकारी कर लेनी चाहिए कि संदेश प्राप्तकर्ता ने संदेश का सही एवं वही अर्थ लगाया है जो उसके (प्रेशक) के मस्तिष्क में है। प्रेष्ज्ञिति की प्रतिक्रिया का भी तत्काल ज्ञान किया जाना चाहिए तथा उसके संशयों व भ्रमों को दूर करना चाहिए।

27. 'सही समझ' उत्पन्न करने के लिए सदेश की पुनरावृत्ति भी की जानी चाहिए।

28. प्रत्येक संगठन में अनौपचारिक सम्प्रेषण की श्रृंखला भी साथ-साथ चलती है। कुशल प्रबन्धक इनका उपयोग भ्रमों व शंकाओं को दूर करने, संगइन की नब्ज जानने तथा यथार्थ स्थिति पहचानने के लिए कर सकते हैं।

29. अन्य सुझाव **(Other Suggestions):-**

i. भौतिक एवं मानवीय तत्वों को समझकर सदेश देना चाहिए।

ii. संदेश सार्थक होने चाहिए तथा सदेश की मूल बातों पर पर्याप्त बल देना चाहिए।

iii. विषय7सामग्री के बारे में वैयक्तिक मूल्य निर्णय नहीं देना चाहिए।

iv. संदेश संक्षिप्त नवीन तथा विभिन्न वर्गों के हितों से जुड़ा हुआ होना चाहिए।

v. तथ्यों, संदर्भों तथा निष्कर्षों में अन्तर करना चाहिए।

vi. आदर्श पदोन्नति नीति का अनुसरण किया जाना चाहिए।

12.6 सारांश

सम्प्रेषण का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को सही अर्थबोध करके कार्य करने के लिए प्रेरित करना है किन्तु कभी-कभी वे सदेश का भिन्न-भिन्न अर्थ लगा लेते हैं तथा सम्प्रेषण का इच्छित उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता है। ऐसा सम्प्रेषण की बाधाओं, अवरोधकों अथवा सम्प्रेषण विभंग के कारण होता है। अच्छा सम्प्रेषक बनने के लिए न केवल अपने संदेशों में सुधार करना चाहिए वरन् सम्प्रेषण के प्रति अपनी समझ एवं कौशल में भी वृद्धि करनी चाहिए।

12.7 शब्दावली

विशिष्टीकरण: किसी क्षेत्र में विशेषज्ञता

स्थिति सम्बन्ध: उच्चत या निम्न पदों के कर्मचरियों में सम्बन्ध

उत्प्रेरण: कार्य करने के लिए प्रेरणा

12.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. किसी संगठन में संप्रेषण के महत्त्व को लिखिए।

2. संप्रेषण के विभिन्न क्षेत्रों को लिखिए।

3. सम्प्रेषण में आने वाली बाधाओं को लिखिए।

4. सम्प्रेषण में आने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए आवश्यक निपूणताओं को लिखिए।

5. सम्प्रेषण के महत्त्व तथा क्षेत्रों पर प्रकाश डालिए।

12.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. दशोरा, एम.एल. (1996) संगठन, सिद्धान्त एवं व्यवहार, हिमांशु पब्लिकेशन।

2. ड्रकर, एफ.पी. (1954) द प्रेक्टिस आॅफ मेनेजमेन्ट।

3. फिशर, एफ.पी. (1955) ए न्यू लुक एट मेनेजमेंट कम्युनिकेशन्स , पर्सनोल वोल्युम 6

4. जेक्स, ई. (1974) द चेंजिंग कल्चर आॅफ कम्युनिकेशन

5. हायाकावा, एस.आई. (1949) लेंग्वेज इन थोट एण्ड एक्शन।

6. हेम्फील जे.के. (1960) डाइमेन्शन्स आॅफ एक्सीक्यूटीव पाॅजिशंस।

7. सुधा, जी.एस. (2005) प्रबन्ध अवधारणाएँ एवं संगठनात्मक व्यवहार, रमेश बूक डिपो, नई दिल्ली।

इकाई - 13

सम्प्रेषण: श्रवण एवं साक्षात्कार कौशल

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 साक्षात्कार की विशेषताएँ

13.3 साक्षात्कार के प्रकार

13.4 साक्षात्कार के लिए आवश्यक कौशल

13.5 साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य सम्बन्ध

13.6 सक्षात्कार की प्रक्रिया में ध्यान देने योग्य बातें

13.7 श्रवण कौशल

13.8 सारांश

13.9 शब्दावली

13.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:-

- साक्षात्कार के कार्य एवं विशेषताओं को जान पाएंगे।
- साक्षात्कार के प्रकारों को समझ पाएँगे।
- साक्षात्कार तथा श्रवण कौशल को जान पाएँगे।

13.1 प्रस्तावना

साक्षात्कार का उद्देश्य निदानात्मक, मनोचिकित्सकीय, नौकरी के लिए चयन, व्यवसायिक संस्था में प्रवेश के लिए चयन आदि के लिए हो सकता है। साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता द्वारा किसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु दो व्यक्ति के मध्य होने वाला विशेष वार्तालाप होता है जो उद्देश्य के वर्णन तथा कारकों से सम्बन्धित विषय वस्तु पर केन्द्रित रहता है।

13.2 साक्षात्कार की विशेषताएँ

साक्षात्कार की निम्नलिखित विशेषताएँ होती है-

- साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाता के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क, वार्तालाप और मौखिक संभाषाण होता है,
- साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाता दोनों समान प्रस्थिति में होते हैं,
- मौखिक रूप से प्रश्न पूछे जाते हैं और मौखिक उत्तर मिलते हैं,
- जानकारी साक्षात्कारकर्ता द्वारा अभिलिखित होती है न कि उत्तरदाता द्वारा।
- साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाता जो एक दूसरे के लिए अजनबी होते हैं, के बीच सम्बन्ध अस्थाई होते हैं,
- साक्षात्कार आवश्यक रूप से केवल दो व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं रहता इसमें दो साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाताओं का एक समूह शामिल हो सकता है या इसमें एक साक्षात्कारकर्ता और कई उत्तरदाता हो सकते हैं,

13.3 साक्षात्कार के प्रकार

साक्षात्कार कई प्रकार के होते हैं जो संरचना, साक्षात्कार की भूमिका, साक्षात्कार में शामिल उत्तरदाताओं की संख्या आदि के संदर्भ में एक दूसरे से भिन्न होते हैं। कुछ प्रकार के साक्षात्कार गुणवत्तात्मक एवं परिमाणात्मक दोनों प्रकार के अनुसंधानों में प्रयोग होते हैं लेकिन अन्य एक प्रकार के अनुसंधान में ही प्रयोग होते हैं।

असंरचित साक्षात्कार

असंरचित साक्षात्कार में प्रश्नों की शब्दावली में कोई विशिष्टताएँ नहीं होती और न ही प्रश्नों के क्रम में। साक्षात्कारकर्ता जब और जैसे प्रश्नों की आवश्यकता होती है वैसे बना लेता है। मार्गदर्शन के रूप में प्रस्तुत किये जाने के कारण इन साक्षात्कारों की बनावट लचीली होती है। सरल शब्दों में इस साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता के पास (i) मस्तिष्क में सामान्य प्रकार के प्रश्न ही होते हैं, (ii) विशेष मुद्दों के कोई विशेष पूर्व संकेत नहीं होते, जिन पर प्रश्न पूछे जाने हैं, (iii) किसी खास तरीके के प्रश्नों का क्रम नहीं

होता, और (iv) साक्षात्कार जारी रखने की कोई समय सीमा नहीं होती। इस प्रकार जो कुछ एक उत्तरादाता से प्रारम्भ में पूछा गया है वह दूसरे से अन्त में और एक और उत्तरदाता से मध्य में पूछा जा स कता है। इसी प्रकार कुछ प्रश्न कुछ उत्तरदाताओं से पूछे जा सकते हैं पर सबसे नहीं। प्रश्न एक सी शब्दावली में नहीं भी हो सकते। एक साक्षात्कार में एक या दो पक्षों पर ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है, किन्तु अन्य पक्षों पर अन्य साक्षात्कारों में। इस प्रकार का साक्षात्कार अधिकतर गुणवत्तात्मक अनुसन्धान में प्रयोग किया जाता है।

संरचित साक्षात्कार- संरचित साक्षात्कार 'साक्षात्कार दिग्दर्शिका' पर आधारित होता है जो कि प्रश्नावली से थोड़ा भिन्न होता है। वास्तव में यह साक्षात्कारकर्ता द्वारा तैयार किये गये विशेष बिन्दुओं और निश्चित प्रश्नों का एक समूह है। यह साक्षात्कार अपने किसी भी अवयव के साथ किसी भी प्रकार के समायोजन की अनुमति नहीं देता जैसे विषय सामग्री, शब्द प्रयोग या प्रश्नों का क्रम। इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता से अपेक्षा की जाती है कि वह निरपेक्ष रहकर सभी उत्तरदाताओं को एक सा समझे। इसका उद्देश्य यह है कि साक्षात्कारकर्ता के पूर्वाग्रह को कम से कम किया जा सके और समस्त प्रक्रिया में अधिक से अधिक अनौपचारिकता आ सके। इस प्रकार का साक्षात्कार परिमाणात्मक अनुसंधान में प्रयुक्त होता है।

इस साक्षात्कार में सभी आयाम अर्थात् (I) साक्षात्कार की व्यवस्था बताना, (II) प्रश्नों को व्यवस्थित करना तथा उत्तरों की सीमा तय करना, (III) साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाता की विशेषताओं को नियंत्रित करना और (IV) समस्या के पहलुओं के सीमांकन का नियमन हो जाता है।

अर्ध-संरचित साक्षात्कार

यह संरचित एवं असंरचित साक्षात्कार के बीच का इस अर्थ में है क्योंकि इसमें दोनों की विशेषताएँ हैं। यह विधि गुणवत्तात्मक व परिणामात्मक दोनों तरह के अनुसंधानों में प्रयोग होता है।

मानकीकृत तथा अमानकीकृत साक्षात्कार

मानकीकृत साक्षात्कारों में प्रत्येक प्रश्न का उत्तर मानकीकृत होता है क्योंकि यह इस उद्देश्य के लिए दिए गए उत्तर वर्गों के समूह से निर्धारित होता है। उत्तरदाताओं को दिए हुए विकल्पों में से एक को उत्तर के रूप में चुनना होता है। उदाहरणार्थ, हाँ/नहीं/मालूम नहीं, सहमत हैं/असहमत हैं, अनपढ़/कम शिक्षित/उच्च शिक्षित, पक्ष में/विरूद्ध/अनिश्चित आदि विकल्प हो सकते हैं। यह मुख्यतः परिमाणात्मक अनुसंधान में काम आता है। अमानकीकृत साक्षात्कार वह है जिसमें उत्तर उत्तरदाताओं पर ही छोड़ दिए जाते हैं। यह मुख्यतः गुणवत्तात्मक अनुसंधान में प्रयोग किया जाता है।

वैयक्तिक तथा समूह साक्षात्कार

वैयक्तिक साक्षात्कार वह है जिसमें साक्षात्कारकर्ता एक समय में एक ही उत्तरदाता का साक्षात्कार लेता है, जबकि समूह साक्षात्कार में एक साथ कई उत्तरदाताओं का साक्षात्कार लिया जाता

है। समूह छोटा हो सकता, मान लो दो व्यक्तियों का (जैसे पति ओर पत्नि या फैक्ट्री में काम करने वाले दो सहकर्मी) या (समूह) बड़ा हो सकता है। मान लें 10 या 20 व्यक्तियों का (जैसे कक्षा के सभी छात्र)।

स्वयं प्रबन्धित तथा अन्य के द्वारा प्रबन्धित साक्षात्कार

स्वयं प्रबन्धित साक्षात्कार में उत्तरदाता को साक्षात्कार प्रपत्र पर उपयुक्त स्थान में उत्तर लिखने के लिए निर्देशों के साथ प्रश्नों की सूची दी जाती है। अन्य द्वारा प्रबन्धित साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता उत्तर पत्रक पर स्वयं ही प्रश्नों के उत्तर लिखता है।

एकल तथा पेनल साक्षात्कार

एकल साक्षात्कार वह है जिसमें साक्षात्कारकर्ता एक ही साक्षात्कार में समूची जानकारी एकत्र करता है। यद्यिपि उस पर उत्तरदाता से अतिरिक्त जानकारी एकत्र करने के लिए पुनः जाने के लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं होता। पेनल साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता बीच-बीच में एक ही उत्तरदाता समूह से कई बार जानकारी एकत्र करता है यदि वही प्रश्न पूछे जाने के लिए समूह में भिन्न-भिन्न उत्तरदाता शामिल किये जाते हैं तो इसको प्रवृत्ति अध्ययन कहा जाता है।

वैयक्तिक तथा निर्वैयक्तिक साक्षात्कार

वैयक्तिक साक्षात्कार में साक्षत्कारकर्ता और उत्तरदाता में आमने-सामने सम्पर्क होता है जबकि निर्वैयक्तिक साक्षात्कार में आमने-सामने के सम्बन्ध नहीं होते लेकिन जानकारी टेलीफोन, कम्प्यूटर अथवा अन्य किसी माध्यम द्वारा एकत्र कर ली जाती है।

केन्द्रित साक्षात्कार:- केन्द्रित साक्षात्कार वह है जो एक विशेष विषय पर केन्द्रित होता है। इसमें सभी उत्तरदाताओं को एक सा अनुभव दिया जाता है। उदाहरणार्थ, दंगे के समय उपस्थित सभी लोगों से पूछा जाता है कि इस स्थिति से सम्बद्ध उनके साझा अनुभव क्या रहे। इस प्रकार यह साक्षात्कार सहभागियों के वास्तविक अनुभवों के प्रभाव पर केन्द्रित रहता है। जेल में बन्दियों पर उनकी आजादी, काम, मनोरंजन, आपसी संवाद आदि पर प्रतिबन्धों का अध्ययन, केन्द्रित साक्षात्कार का एक और उदाहरण है। पूछताछ जितनी अधिक नजदीक से हो सकेगी, केन्द्रित साक्षात्कार की धारणा उतनी ही संकीर्ण होगी, और सूक्ष्म से सूक्ष्म आधार सामग्री को प्राप्त करने के अवसर उतने ही अधिक होंगे। अन्य उदाहरण हैं- उत्तरदाताओं से विशेष फिल्म, विशेष पुस्तक, विशेष व्यक्तित्व, विशेष कार्यक्रम, विशेष नीति आदि पर प्रश्न पूछना।

टेलीफोन साक्षात्कार- समाचार पत्र, रेडियो, टी.वी. कार्मिक इस विधि को महत्त्वपूर्ण मामलों में आम राय जानने के लिए अधिक प्रयोग करते हैं जैसे बजट पर प्रतिक्रिया, चुनाव नतीजों पर राय, पेट्रोल और रसोई गैस की कीमतों में अचानक वृद्धि, शहर में साम्प्रदायिक दंगे, किसी नगर में बढ़ते अपराध आदि।

कम्प्यूटर साक्षात्कार:- यह साक्षात्कार कम्प्यूटर की सहायता से इन्टरनेट के द्वारा लिया जाता है। यह केवल वे ही लोग ले सकते हैं जिनके पास कम्प्यूटर है और इन्टरनेट सुविधा है।

13.4 साक्षात्कार के लिए आवश्यक कौशल

साक्षात्कार विधि के द्वारा आधार सामग्री एकत्र करना सरल हो सकता है, फिर भी इसकी पर्याप्तता, विश्वसनीयता और वैधता प्रमुख समस्याएँ खड़ी करती है। साक्षात्कारकर्ताओं की क्षमताएँ और रूचियाँ भिन्न होती है, उत्तरदाताओं की योग्यता और प्रेरणा में भिन्नता होती है और साक्षात्कार सामग्री साध्यता में भिन्नता रखती है। सफल साक्षात्कार की क्या शर्तें होती हैं? लिण्डजे गार्डनर ने सफल साक्षात्कार की तीन शर्तें बताई हैं।

1. पहुँच:- जानकारी देने के लिए यह आवश्यक है कि उत्तरदाता यह समझे कि उससे क्या अपेक्षा की जाती है और वह वांछित जानकारी उपलब्ध कराने का इच्छुक हो। सम्भावना यह हो सकती है कि उत्तरदाता के पास कोई जानकारी ही न हो या कुछ तथ्य वह भूल गया हो या वह भावात्मक दबाव में हो और जानकारी देने में असमर्थ हो या प्रश्न इस प्रकार के बने हों कि वह उनका उत्तर न दे सकता हो।

2. समझना:- कभी-कभी उत्तरदाता यह नहीं समझ पाता कि उससे क्या अपेक्षा की जा रही है? जब तक कि उत्तरदाता अनुसंधान/सर्वेक्षण का महत्त्व, साक्षात्कार की अपेक्षाओं का विस्तार, अवधारणाएँ और प्रयुक्त शब्दावली तथा उन उत्तरों का स्वरूप जो साक्षात्कार कर्ता उससे अपेक्षा करता है आदि न समझ ले, उसके उत्तर बिन्दु से हटकर हो सकते हैं।

3. प्रेरणा:- उत्तरदाताओं को न केवल जानकारी देने के लिए बल्कि सटीक जानकारी देने के लिए भी प्रेरित करने की आवश्यकता है। परिणाम का भय, अज्ञानता पर आकुलता, साक्षात्कारकर्ता के प्रति सन्देह तथा विषय के प्रति नापसन्दगी कुछ ऐसे कारक हैं जो प्रेरणा के स्तर को कम करते हैं। अतः साक्षात्कारकता्र को सब कारकों का प्रभाव कम करने का प्रयत्न करना चाहिए।

साक्षात्कारकर्ता

साक्षात्कारकर्ता के सम्बन्ध में तीन चीजों का विश्लेषण करना है।

1. कार्य

- चूँकि साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता का स्थान केन्द्रीय होता है, अतः उसको दिए गए कार्य महत्त्वपूर्ण होते हैं और उनको पूरा न करने पर आधार सामग्री संग्रह प्रभावित होता है। बेकर ने साक्षात्कारकर्ता के निम्नलिखित कार्य बताए हैं-
- उत्तरदाताओं का चयन और उन तक पहुँचना।
- आधार सामग्री, समयावधि, साक्षात्कार की स्थितियों की पूर्व व्यवस्था करना। उदाहरणार्थ बहुओं का साक्षात्कार दोपहर भोजन के बाद अधिक सुविधाजनक होता है

जबकि वे अपेक्षाकृत फुर्सत में होती हैं और घर में पति, सास या अन्य परिवार के सदस्य उपस्थित नहीं होते।

- उत्तरदाताओं को अधिक उत्तर देने के लिए मनाना।
- प्रतिरोध, सन्देह, भय आदि को समाप्त करके साक्षात्कार को नियंत्रित करना।
- उत्तरदाताओं द्वारा प्रदत्त जानकारी को सही-सही लिखना और पूर्वाग्रह को टालना।

2. गुण

एक साक्षात्कारकर्ता में स्वयं को एक सफल और आदर्श साक्षात्कारकर्ता सिद्ध करने के लिए उसमें कुछ गुण होने चाहिए। सी.ए.मोजर ने कुछ गुण इस प्रकार बताए हैं-

I. ईमानदारी- इसमें, क्षेत्र में वास्तव में जाना, उत्तरदाताओं का साक्षात्कार करना और सही उत्तर लिखना सम्मिलित है। कुछ अन्वेषक क्षेत्र में नहीं जाते लेकिन घर पर बैठकर ही साक्षात्कार की सूचियाँ भर लेते हैं।

II. रूचि- खराब किस्म के काम से बचने के लिए साक्षात्कारकर्ता की काम में रूचि आवश्यक है। यदि साक्षात्कारकर्ता अनुसंधान को मूल्यहीन समझता है और वेतन/भत्ते आदि के रूप में मिलने वाले धन में अधिक रूचि रखता है तब तो काम की गुणवत्ता निश्चित ही गिरेगी।

III. अनुकूलन क्षमता- चूंकि साक्षात्कारकर्ता को उत्तरदाताओं से उन विभिन्न स्थितियों में मिलना होता है जिनमें उसे विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है, अतः उसमें उत्तरदाताओं के साथ अनुकूलन करने की योग्यता होनी चाहिए।

IV. मिज़ाज- साक्षात्कारकर्ताओं का मिज़ाज ऐसा हो कि वे उत्तरदाताओं से मित्रता न करें। उत्तरदाताओं व उनकी समस्याओं के साथ भावनात्मक रूप से अधिक लिप्त हो जाना, निर्पेक्ष तथ्यों को प्राप्त करने के प्रति उनकी रूचि बदल देगा। उन्हें न तो अधिक सामाजिक होना है और न आक्रामक।

V. बुद्धिमत्ता- सामान्य साक्षात्कार में विशेष बुद्धिमत्ता की आवश्यकता नहीं होती। अत्यधिक बुद्धिमानी भी साक्षात्कारकर्ता की वान्छित रूचि में नीरसता भर देगी। आवश्यकता इस बात की है कि साक्षत्कारकर्ता निर्देशों को समझने और उनका पालन करने और उत्तरदाताओं के साथ अनुकूलन करने की सामान्य बुद्धि होनी चाहिए।

VI. शिक्षा- शिक्षा साक्षात्कारकर्ता को वान्छित परिपक्वता प्रदान करती है। कम शिक्षित व्यक्ति यह भी नहीं समझ सकता कि वह जिस समस्या पर साक्षात्कार

का संचालन कर रहा है वह क्या है। वह उत्तरदाताओं द्वारा प्रयुक्त कुछ शब्दों को समझने में भी असमर्थ रह सकता है।

साक्षात्कार के वस्तुपरक व आत्मपरक गुण साक्षात्कार को प्रभावित करते हैं। साक्षात्कारकर्ता का जिज्ञासु मस्तिष्क के साथ आत्मपरक व समायोजक स्वभाव, अवबोधन, साक्षात्कार पर एकाग्रता, जानकारी के अलग भागों को एक सूत्र में पिरोने की योग्यता आदि गुण उत्तरदाताओं से बेहतर जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। साक्षात्कार के वस्तुपरक या निरपेक्ष गुण जो साक्षात्कार की प्रभाविता को प्रभावित कर सकते हैं। उनमें लिंग, आयु, शिक्षा, सामाजिक दर्जा, बोलने व पहनने का तरीका आदि शामिल है। साक्षात्कार लिए जाने के लिए उत्तरदाताओं की स्वीकृति इन्हीं बाह्य गुणों पर निर्भर करती है।

साक्षात्कार देने वाले के गुण जैसे विचारों को शब्दों में व्यक्त करने की क्षमता, अच्छी संवाद दक्षता, उच्च औपचारिक शिक्षा, ज्ञान की गहनता, मिलनसार स्वभाव, उत्तर देने की इच्छा आदि का प्रभाव सीधे-सीधे उत्तरदाता द्वारा प्रदत्त जानकारी पर पड़ेगा। साक्षात्कार कर्ता तथा साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति दोनों की परस्पर प्रस्थिति भी उत्तरदाता की साक्षात्कार को गम्भीरता से लेने की इच्छा पर प्रभाव डालती है। यदि उत्तरदाताओं को अधिक सम्मान दिया जाता है तो उन्हें आश्वस्त किया जाय कि वे ज्ञाता हैं और उनके प्रासंगिक उत्तर निष्कर्षों को प्रभावित करेंगे तो निश्चित रूप से साक्षात्कारकर्ता के साथ वे सहयोतग करेंगे।

3. प्रशिक्षण

कुछ संगठन साक्षात्कारकर्ता के प्रशिक्षण को अधिक महत्त्व देते हैं लेकिन कुछ उन्हें नियुक्ति के तुरन्त बाद क्षेत्र में भेजने में विश्वास रखते हैं तथा उन्हें अध्ययन के उद्देश्य, अध्ययन के मुद्दों के आयामों, चयनित प्रतिदर्श व कुछ सामान्य निर्देश समझाना आवश्यक समझते हैं। जब संगठनों को पता लगता है कि चयनित लोग उनकी अपेक्षाओं पर खरे नहीं उतरे हैं तब वे उन्हें जल्दी नौकरी से निकला देते हैं। दूसरी ओर ऐसे संगठन भी हैं जो प्रशिक्षण में विश्वास रखते हैं।

13.5 साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य सम्बन्ध

साक्षात्कार विधि में साक्षात्कारकर्ता ओर साक्षात्कार देने वाले के बीच सम्बन्धों की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

- साक्षात्कारकर्ता को अपने उत्तरदाता के साथ सकारात्मक और प्रभावी सम्बन्ध विकसित करने चाहिए। इससे विश्वास, आपसी समझ और सहयोग में वृद्धि होगी।
- प्रश्न पूछने में, साक्षात्कारकर्ता को घमण्डी नहीं होना चाहिए। उसका पहनावा न तो गन्दा हो न की अधिक फैशन वाला।

- साक्षात्कारकर्ता द्वारा उत्तरदाता को कभी संरक्षण नहीं देना चाहिए।
- उसे दिए गए उत्तरों में अविश्वास नहीं दर्शाना चाहिए।
- साक्षात्कारकर्ता को सम्भावित उत्तर को बताकर उत्तरदाता को उत्तर देने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
- अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए उसे उत्तरों की अधिक गहन जाँच करनी चाहिए।

साक्षात्कार विधि में जानकारी लेना व देना विवरणात्मक या व्याख्यात्मक हो सकता है। साक्षात्कारकर्ता और उत्तरदाता के बीच सम्बन्ध (I) अस्थाई होते हैं, (II) जिसमें सहभागी अजनबी होते हैं, (II) और जो (IV) समानता पर (उत्तरदाता को विश्वस्त किया जाता है कि उसकी बात काटी नहीं जाएगी या उसे परेशान नहीं किया जायेगा) और (V) तुलनात्मकता (उत्तरदाता को विश्वस्त किया जाता है कि उसके द्वारा दी जाने वाली जानकारी की जो तुलना होगी लेकिन उसकी स्वयं तुलना किसी अन्य से नहीं की जायगी) पर आधारित होते हैं।

निदानात्मक साक्षात्कार के विपरीत अनुसंधान साक्षात्कार में उत्तरदाता को प्रत्यक्ष रूप से न तो कोई लाभ होता है न ही कोई ठोस पुरस्कार मिलता है। उसे केवल लाभ उस नीति से हो सकता है जो अनुसंधान के निष्कर्षों पर आधारित होगा जिसका उसके लिए कुछ महत्त्व हो सकता है। इस प्रकार साक्षत्कार द्वारा एकत्रित जानकारी से अप्रत्यक्ष लाभ की सम्भावना, सार्वजनिक-व्यक्तिगत प्राप्त लाभ, उत्तरदाता के लिए प्रोत्साहन होता है कि वह अनुसंधान साक्षात्कार में सम्मिलित हो। इसी प्रकार जनसंख्या आदि पर राष्ट्रीय जनगणना द्वारा संक्षिप्त अनुसन्धान या सामाजिक समस्याओं जैसे गरीबी उन्मूलन, सरकार द्वारा अधिक सहायता, उदारीकरण नीति, बैंकों का निजीकरण, पिछड़े समुदायों के गैर-सम्पन्न लोगों के लिए आरक्षण की समयबद्ध नीति आदि जैसे महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर सामाजिक सर्वेक्षण द्वारा दीर्घकालिक अनुसन्धान जो अन्ततः आर्थिक और समाज कल्याण में योगदान करती है, भी उत्तरदाताओं को साक्षात्कार में भाग लेने के लिए प्रेरित करते हैं तथा जनहित के विषयों पर साक्षात्कारकर्ता को उनकी राय, अभिवृत्तियों, अनुभवों, धारणाओं आदि से सम्बन्धित वांछित जानकारी प्रदान करते हैं।

13.6 साक्षात्कार की प्रक्रिया में ध्यान देने योग्य बातें

यह कहा जा सकता है कि साक्षात्कारकर्ता को प्रशिक्षण या प्रशिक्षण की प्रक्रिया का अर्थ होता है। साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कार के विविध चरणों में चलाने की प्रक्रिया समझाना, प्रत्येक चरण जिसमें कुछ कार्य करना शामिल होता है।

1. अनुसंधानकर्ता को पूर्ण रूप से समझाया जाय कि अध्ययन किस विषय में है, अध्ययन के उद्देश्य क्या हैं, और उसके किन पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाना है।
2. प्रतिदर्शित सदस्यों का चयन एवं उनकी स्थिति।
3. साक्षात्कार पर जाने से पहले उत्तरदाता से उसके लिए समय निश्चित करना।

4. साक्षात्कार की स्थिति को इस प्रकार छलयोजित करना कि उत्तरदाता ही उस स्थान पर रहे हो और अन्य लोग वहाँ से चले जाएं।

5. उत्तरदाता को साक्षात्कार की अनुमानित अवधि की सूचना देना।

6. यह बताते हुए कि वह किस संगठन से सम्बद्ध है और उत्तरदाता का चयन साक्षात्कार के लिए कैसे हुआ, साक्षात्कार शुरू करना।

7. ऐसा दृष्टिकोण दर्शाना कि उत्तरदाता अपने विचार स्वतंत्रतापूर्वक अभिव्यक्त कर सके।

8. प्रश्नों को निष्पक्ष तरीके से शब्दों में प्रस्तुत करें।

9. किसी भी प्रकार अपने विचारों के विषय में कोई संकेत न दें। इससे या तो उत्तरदाता विपरीत उत्तर नहीं देगा या वह साक्षात्कारकर्ता के विचारों के पक्ष में अपना मत देगा। दोनों ही दशाओं में उत्तरदाता की सही राय का प्रदर्शन नहीं होगा।

10. उत्तरदाता को सहयोग करने हेतु प्रेरित करना चाहिए।

11. उत्तरदाता की उसकी पहचान गुप्त रखने का आश्वासन दिया जाना चाहिए।

12. साक्षात्कारकर्ता को प्रशिक्षण दिया जाय कि सभी प्रश्न प्रदत्त क्रम में ही पूछे जाये।

13. आधे-अधूरे उत्तरों, अशुद्ध उत्तर (पक्षपातपूर्ण या बिगड़े हुए उत्तर देना), अप्रासंगिक उत्तर (जो प्रश्न से बिल्कुल सम्बद्ध हो) और अनुत्तरित (चुप रहना या उत्तर देने से इन्कार) आदि से निपटने के लिए कुछ तकनीकों का प्रयोग किया जाय। ये तकनीकें हो सकती हैं प्रश्नों को दूसरे शब्दों के साथ पूछना, पूरक प्रश्न पूछना, थोड़ा विराम देना, अपेक्षा से देखना, उत्तर के लिए प्रोत्साहित करना, उत्तरदाता से इसके विषय में और कुछ कहने को कहना, आदि।

14. यह समझाना कि विभिन्न प्रकार के प्रश्न कब पूछे जायं। एटकिन्सन ने तीन प्रकार के प्रश्न चिन्हित किए हैं, तथ्यात्मक, मत सम्बन्धी और ज्ञान सम्बन्धी।

15. उत्तरों का अभिलेखन वस्तुपरक होना चाहिए।

उपरोक्त सभी पहलुओं का ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि साक्षात्कार प्रक्रिया में निम्नलिखित चार बिन्दु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैः (1) साक्षत्कारकर्ता को निर्देश, (2) क्षेत्र निरीक्षण, (3) समय-समय पर संग्रहीत आधार सामग्री का परीक्षण और (4) कार्य करने की दशाएँ।

(1) निर्देशः- संक्षिप्त तथा कार्य क्षेत्र से सम्बन्धित निर्देश साक्षात्कारकर्ता की निरर्थक जानकारी एकत्र करने में, किस विषय की जाँच की जाय और किस प्रकार विविध स्थितियों और विविध उत्तरों से निपटा जाय आदि से सहायक होते हैं।

(2) निरीक्षण- इससे खराब काम का पता लगेगा और यह साक्षात्कारकर्ता को स्तर बनाए रखने में सहायक होगा। एक या दो पर्यवेक्षक अध्ययन के सम्पूर्ण क्षेत्र का निरीक्षण कर सकते हैं। यदि अध्ययन कुछ राज्यों में फैला हुआ है (जैसे कि एक प्रोजेक्ट "बड़े राजें को तोड़कर छोटे राजयों को बनाने की प्रशासनिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक उपयोगिता पर उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, आन्ध्र प्रदेश और महाराष्ट्र पाँच राज्रों में) और 3-4 माह की अवधि में लगभग 500 साक्षात्कार लिये जाने हैं वहाँ एक कार्यकारी इन्चार्ज, एक निरीक्षक और पाँच अन्वेषक प्रत्येक राज्य के लिए नियुक्त किए जा सकते हैं। मुख्य कार्यालय तथा क्षेत्र कार्यकर्ताओं के बीच पर्यवेक्षक ही एक कड़ी होगा। उसे प्रतिदर्श चयन में मार्गदर्शन करना पड़ सकता है यदि यह कार्य स्थानीय सूची से किया जाना है, यह निर्णय करना हो सकता है कि कौन से साक्षत्कारकर्ता किस क्षेत्र में जाएंगे, उन्हें उनका प्रतिदर्श कार्य देना और उनके कार्य को समय-समय पर परीक्षण करना पड़ सकता है।

(3) क्षेत्र कार्य का परीक्षण- किसी भी अनुसंधान में कार्य की गुणवत्ता को लगातार अवलोकन में रखने के लिए और यह पता लगाने के लिए किस साक्षात्कारकर्ता किसी मामले में असन्तोषजनक कार्य तो नहीं कर रहा है, समय-समय पर क्षेत्र कार्य का परीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। परीक्षण कार्य में यह देखना शामिल होता है कि (I) सही प्रकार के लोगों का साक्षात्कार हो रहा है या नहीं, (ii) साक्षात्कारकर्ता को उत्तरदाताओं का सहयोग मिल रहा है या नहीं, (iii) उत्तर प्राप्त होने की दर सन्तोषजनक है या नहीं और (iv) क्या आधार सामग्री का अभिलेखन ठीक से हो रहा है या नहीं, (v) साक्षात्कारकर्ता ठीक तरह से प्रश्न पूछ रहा है या नहीं।

(4) कार्य करने की दशाएँ- अन्वेषकों का मनोबल ऊँचा रखना बहुत आवश्यक है। यह उन्हें अच्छी कार्य दशाएँ प्रदान करके किया जा सकता है जैसे, एक वाहन किराए पर लेना जो अन्वेषकों के भिन्न-भिन्न दलों को उनके क्षेत्र में ले जा सके और शाम को उन्हें वापस ला सके, उनके कार्य के घण्टे निश्चित करना, उन्हें पानी की बोतलें और चाय के लिएधन देना, यदि क्षेत्र में रात में रहना है तो उनके रात्रि विश्राम का प्रबन्ध करना, कागज रखने के लिए उन्हें फाइलें देना और उन्हें नियमित रूप से भुगतान करते रहना।

13.7 श्रवण कौशल

संप्रेषण क्रिया दो तरफा होती है जहाँ एक व्यक्ति प्रेषक है और दूसरा प्रेषिति। एक व्यक्ति कहता है, दूसरा सुनता है किन्तु स्थिति के अनुसार श्रोता और वक्ता बदलते रहते हैं। व्यवसाय में प्रबंधक जहां कई प्रकार के नियम, निर्देश एवं पत्रादि द्वारा लोगों तक अपनी बात पहुँचाते हैं वहीं उनकी कइिनाइयां, शिकायतें, सुझाव एवं अन्य विचार सुनते भी हैं। प्रबंधक को एक अच्छा श्रोता होना भी आवश्यक है। एक विश्लेषण से पता चला है कि उच्चस्तरीय प्रबंधक अपना अधिकांश समय संप्रेषण में हीव्यतीत करते हैं। अपने कुल संप्रेषण समय में वे 45ः समय तक सुनते हैं, 16ः समय तक पढ़ते हैं तथा 9ः समय तक लिखते हैं। इसी प्रकार का वर्गीकरण विविध व्यवसायों में लगे व्यक्तियों का भी किया जा सकता है। आप स्वयं भी अपने जीवन में विचार करें तो शायद जितना समय अपनी बात कहने, लिखने समझाने में लगाते

हैं उससे कहीं अधिक आपको सुनना पड़ता है। आप अपने साथियों, मित्रों, अधीनस्थ कर्मचारियों, कमेटी के सदस्यों, राज्य प्रतिनिधियों, जननेताओं आदि कई व्यक्तियों की बातें सुनते हैं। एक व्यवसायी के नाते जितना बड़ा संगठन होगा उतनी ही अधिक बातें आपको सुननी पड़ेगी। यदि आप शिक्षार्थी हैं तो आप अधिकतर सुनते हैं। इसी प्रकार अधीनस्थ वर्ग के लोगों को अधिक सुनना पड़ता है।

अच्छे चिन्तक जो कुछ सुनते हैं उस पर लम्बे समय तक विचार करते रहते हैं। सुनने की ठोस पद्धति का निर्माण भी दूसरे व्यक्तियों की भावना को सही रूप में समझने का प्रयास है। यदि अधीनस्थ कर्मचारी को अपनी बात कहने का पूरा अवसर दिया जाय तथा उसके मस्तिष्क से यह भय दूर कर दिया जाय कि उसकी कही गई बातें पकड़ पर उसी पर कार्यवाही हनीं होने लगेगी तो वह पूरी बात कह सकेगा। प्रबंधक, प्रत्येक व्यक्ति के लिए मनोवैज्ञानिक विश्लेषणकर्ता नहीं बन सकता। इसके लिए उसके पास समय भी नहीं होता किन्तु उसमें शान्तिपूर्वक प्रत्येक व्यक्ति को सुनने का गुण अवश्य होना चाहिए।

ध्यानपूर्वक सूनने की विशेष बातें :-

किसी बात को ध्यानपूर्वक सुनने के लिए कुछ मार्गदर्शन जो क्लिनिकीय मनोविज्ञान तथा साइकियेट्री से प्राप्त हुए हैं, इस प्रकार है-

1. आप स्वयं बोलना बंद रखिये तथा वक्ता को शान्तिपूर्वक बोलने दीजिए। यह जानते हुए भी, कि वह अनर्गल वार्तालाप कर रहा है, सुनते रहिये ऐसा प्रकट कीजिए कि आप उचित ध्यान दे रहे हैं।

2. व्यक्ति जो भावनाएं, हावभाव, मुखमुद्रा प्रदर्शित कर रहा है उसे देखते रहिये। यदि वह कहीं कठिनाई अनुभव करता है (अपनी बात कहने में), तो उसे सहायता करिये।

3. वक्ता की भावनाओं को अपने शब्दों में व्यक्त करिये जिससे पता लगे कि जो आप समझे हैं, वही बात वह प्रकट कर रहा है। कुछ टिप्पणी इस प्रकार दीजिये कि आप वक्ता को अधिक आश्वस्त कर सकें किन्तु अपनी बात थोपने का प्रयास मत करिये।

4. बातचीत को संगठन के नियम एवं नियमावली से पृथक रखिये, अपनी बात में अधिकार का पुट मत आने दीजिये तथा स्वतंत्र विचार विनियम को प्रोत्साहित करिये।

5. ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं करें जिससे बातचीत में व्यवधान उत्पन्न हो जैसे, 'जरा रूकिये', 'थोड़े आंकड़ों पर दृष्टि डाल लें' या 'क्या आप सिद्ध कर सकते हैं?'

6. जहाँ व्यक्ति थोड़ी सी जानकारी देता है किन्तु आप अधिक जानना चाहते हैं तो उस बात की मात्र पुनरावृत्ति कर दीजिये जिससे कि वह पूरी बात बता दे।

7. कुछ बिन्दु यदि छूट गये हैं या छोड़ दिये गये हैं तो उनकी ओर ध्यानाकर्षित कर दीजिए।

8. आगन्तुक यदि आपके विचार जानने के लिए ही उपस्थित हुआ है तो ईमानदारी से आप उसे अपनी बात बतलाइये। किन्तु यदि आप श्रोता की स्थिति में रहना चाहते हैं तो अपना वक्तव्य सीमित रखिये।

9. अन्य व्यक्ति को सुनते समय भावुक मत बनिये।

किसी समय श्रोता बनने के लिए काफी समझबूझ की आवश्यकता होती है। हम किसी व्यक्ति की भावनाओं को उस समय तक नहीं समझ सकते जब तक उसे सुने नहीं और उसे सही ढंग से सुनने के लिए उसके व्यक्तित्व का सम्मान करना हमें आना चाहिये। तथा हमें यह भी समझना चाहिये कि प्रत्येक व्यक्ति अपना अलग व्यक्तित्व रखता है। प्रत्येक व्यक्ति के अपने अलग मूल्य होते हैं-

1) एक श्रोता के रूप में निम्नलिखित गुण होने चाहिये-

2) पर्याप्त समय (समस्या के अनुरूप) देना,

3) वक्ता की विशेषताओं और विशिष्ट गुणों को मान्यता देना,

4) व्यक्तिगत अनुशासन- अक्सर श्रोता भावनाओं में बह जाते हैं। किसी न किसी रूप में अपनी भावना अभिव्यक्त कर देते हैं यह उचित नहीं है।

5) उदासीन रूख अपनाना।

बातचित का क्रम चलते रहने तक हां-हूं करते रहना अच्छा गुण कहा जा सकता है। नेतृत्व की सफलता इसी बात में है कि वह सभी को समान रूप से सद्भाव की अभिव्यक्ति करते हुए सुने।

13.8 सारांश

साक्षात्कार के उत्तरदाता से प्राप्त जानकारी सामाजिक यथार्थ स्वभाव में अन्तदृष्टि प्रदान करती है। साक्षात्कार आवश्यक रूप से दो व्यक्तियों के मध्य ही सीमित नहीं रहता है। साक्षात्कार कई प्रकार के हो सकते हैं जो संरचना, साक्षात्कारकर्ता की भूमिका, साक्षात्कार में शामिल उत्तरदाताओं की संख्या आदि के सन्दर्भ में एक दूसरे से भिन्न होते हैं।

13.9 शब्दावली

सरंचित: तैयार किया गया, व्यवस्थित

केन्द्रित: विशेष, ध्यान

परीक्षण: जाँचना, पड़ताल करना

13.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. साक्षात्कार के प्रकारों को लिखिए।

2. साक्षात्कार के लिए आवश्यक कौशल को लिखिए।

3. साक्षात्कार प्रक्रिया में साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य संबंधों पर लेख लिखिए।

4. साक्षात्कार प्रक्रिया में ध्यान देने योग्य बातों को लिखिए।

5. साक्षात्कार प्रक्रिया में श्रवण कौशल को लिखिए।

13.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. दशोरा, एम.एल. (1996) संगठन, सिद्धान्त एवं व्यवहार, हिमांशु पब्लिकेशन।

2. ड्रकर, एफ.पी. (1954) द प्रेक्टिस आॅफ मेनेजमेन्ट।

3. फिशर, एफ.पी. (1955) ए न्यू लुक एट मेनेजमेंट कम्युनिकेशन्स , पर्सनोल वोल्युम 6

4. जेक्स, ई. (1974) द चेंजिंग कल्चर आॅफ कम्युनिकेशन

5. हायाकावा, एस.आई. (1949) लेंग्वेज इन थोट एण्ड एक्शन।

6. हेम्फील जे.के. (1960) डाइमेन्शन्स आॅफ एक्सीक्यूटीव पाॅजिशंस।

7. सुधा, जी.एस. (2005) प्रबन्ध अवधारणाएँ एवं संगठनात्मक व्यवहार, रमेश बूक डिपो, नई दिल्ली।

इकाई - 14

समाज कार्य में परामर्श एवं सम्प्रेषण का महत्त्व

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 समाज कार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण का महत्त्व

14.3 वैयक्तिक सेवा कार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण

4.4 सामूहिक समाज कार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण

14.5 सामुदायिक संगठन में परामर्श तथा सम्प्रेषण

14.6 समाज कल्याण प्रशासन में परामर्श एवं सम्प्रेषण

14.7 सामाजिक क्रिया प्रशासन में परामर्श एवं सम्प्रेषण

14.8 सामाजिक अनुसंधान प्रशासन में परामर्श एवं सम्प्रेषण

14.9 सारांश

14.10 शब्दावली

14.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप

- समाज के विभिन्न क्षेत्र में सम्प्रेषण को जान पाएँगे।
- सम्प्रेषण के माध्यमों को जान पाएँगे।
- समाज कार्य में परामर्श एवं सम्प्रेषण का महत्त्व जान पायेंगे।

14.1 प्रस्तावना

परामर्श तथा सम्प्रेषण आधुनिक युग की एक सर्वव्यापक क्रिया मानी जाती है। चाहे आप प्रबन्ध हैं या मालिक, चित्रकार हैं या पत्रकार, शिक्षक हैं या शिक्षर्थी और चाहे आप व्यवसाय में काम करें या सरकार में, फिल्म में कार्य करें या समाज में, आपको सम्प्रेषण की क्रिया अवश्य सम्पन्न करनी होगी क्योकंकि व्यक्तियों को एक दूसरे से सम्बन्धित करने का सम्प्रेषण एक साधन है। आपके द्वारा सफलता प्राप्त करना कुछ सीमा तक सम्प्रेषण पर निर्भर करता है। कार्यों को व्यवस्थित रूप से चलाने एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने की दृष्टि से सम्प्रेषण की एक अहम् आवश्यकता मानी जाती है। वहीं समसामयिक समाज में बढ़ती जटिलताओं के कारण परामर्श समाज के कल्याण हेतु अभिन्न अंग बन गया है।

14.2 समाजकार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण का महत्त्व

वैश्विकरण के इस युग में आधुनिक समाज ने विभिन्न क्षेत्रों में भले ही अनेकानेक उपलब्धियाँ प्राप्त की हों, उसकी समस्याएँ भी नित नये रूपों में सामने आ रही है। कहीं बाल श्रम तथा शोषण तो कहीं महिला अत्याचार एवं शोषण, कहीं बिखरते परिवारों से उपजी समस्याएँ तो कहीं युवाओं का बेरोजगारी तथा अवसाद के कारण से विचलन। इन समसामयिक समस्याओं का हल निकालने में समाज कार्य की विभिन्न विधियां, वैयक्तिक सेवा कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक संगठन, समाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया तथा समाज कार्य अनुसंधान समाज के विभिन्न स्तरों पर यथा व्यक्तिगत, सामूहिक, सामुदायिक, प्रशासनिक आदि में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही है।

परामर्श तथा सम्प्रेषण समाज कार्य की इन विधियों में रक्त संचार तंत्र की तरह कार्य करते हैं। समाज कार्य की विभिन्न विधियाँ समाज में व्यक्ति की समस्या, वैयक्तिक विघटन, परिवार तथा समुदाय की समस्याओं तथा सामुदायिक विघटन की परिस्थितियों का गहन अध्ययन व अन्वेषण करती है तथा तथ्यों की गहराई तक पहुँच कर उन्हें दूर करने का प्रयास करती हैं इसमें परामर्श तथा सम्प्रेषण की प्रक्रियाएँ अपनाई जाती है।

14.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण का महत्त्व

1. सामाजिक व्यक्तिक कार्य सेवा- व्यक्तिक सेवा कार्य में केवल व्यक्ति की सहायता की जाती है तथा व्यक्ति ही केन्द्र बिन्दु होता है। इस विधि में व्यक्ति की आंतरिक एवं बाह्य क्षमताओं का ज्ञान होता है जो कि व्यक्ति से संबंधित वे सभी बाहरी कार्य जो व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। इसमें व्यक्ति के सामाजिक मनोवैज्ञानिक तथा शारीरिक कार्यों का पता लगाया जाता है जिससे व्यक्ति प्रभावित हो रहा है।

2. वैयक्तिक समाज कार्य किसी भी व्यक्ति यानि सेवार्थी की समस्याओं को वैयक्तिक अध्ययन द्वारा व्यक्ति के साथ कार्य करने की विधि है। व्यक्ति परिवार के समूह में जहां अपने व्यक्तित्व को निखारने में सहायता प्राप्त करता है वहीं किसी भी सदस्य का व्यवहार व्यक्ति को असंतुलित कर सकता है।

3. वैयक्तिक समाज कार्य में परामर्श की प्रक्रिया तथा सम्प्रेषण का महत्त्वपूर्ण स्थान है, परामर्श केन्द्र में आने वाला व्यक्ति सेवार्थी है, जो या तो स्वयं उपस्थित हो जाता है या प्रार्थना-पत्र द्वारा प्रवेश पाता है, या परिवार के किसी अन्य सदस्य के साथ आता है। कभी-कभी किसी अन्य संस्था के द्वारा भी सेवार्थी को परिवार परामर्श केन्द्र में संदर्भित किया जाता है। सेवार्थी के परामर्श हेतु प्रवेश लेने से ही परामर्श की विभिन्न प्रक्रियाएं, विधियां आदि उसके सहायतार्थ प्रारम्भ हो जाती है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में उपचार की प्रविधियों में परामर्श एवं सम्प्रेषण निम्न प्रकार से आवश्यक है-

1. अन्वेषणः- अन्वेषण द्वारा दोनों कार्य उपचार तथा तथ्यों का संकलन किया जाता है। परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा कार्यकर्ता घनिष्ठतम सम्बन्ध स्थापित करके सेवार्थी की समस्या के कारणों को जान लेता है। अतः उसे स्वयं सान्त्वना प्राप्त होती है।

2. परिस्थितियों में सुधार एवं परिवर्तनः- सेवार्थी बाह्यपरिस्थितियों की जटिलता के कारण समायोजन नहीं कर पाता है। कार्यकर्ता परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा उसके वातावरण में परिवर्तन लाता है तथा तनावपूर्ण स्थिति को कम करता है।

3. आलम्बनः- कार्यकर्ता अहम् शक्ति के विकास एवं वृद्धि से सेवार्थी को साहस दिलाता है। कार्यकर्ता परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा उसमें आशा का संचार करता है तथा उस पर पड़ने वाले दबाव को कम करता है।

4. शिक्षणः- कार्यकर्ता सेवार्थी को परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा समय एवं आवश्यकतानुसार शिक्षा प्रदान करता है जिससे समस्या के विषय में उसे ज्ञान होता है।

5. निर्देशनः- परामर्श एवं सम्प्रेषण की निर्देशन में महत्ती भूमिका रहती है। कार्यकर्ता को कभी-कभी किसी विषय पर सेवार्थी को निर्देशन भी देना होता है।

6. तादात्मीकरणः- कार्यकर्ता परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा सेवार्थी की भावनाओं से सम्बन्ध स्थापित करता है। सेवार्थी उसको अपना हितैषी समझने लगता है और इससे समस्या के समाधान में सहायता मिलती है।

7. स्वीकृतिः- कार्यकर्ता सेवार्थी को जैसा वह है वैसा ही स्वीकार करता है। वह उसका आदर करता हैं वह 'पाप से घृणा, पापी से नहीं' का सिद्धान्त अपनाता है, जिसका परिणाम यह होता है कि सेवार्थी स्पष्ट रूप से सच्चाई बता कर राहत प्राप्त करता है। यह सम्प्रेषण द्वारा ही सम्भव है।

8. प्रोत्साहनः- कार्यकर्ता परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा सेवार्थी को समस्या के समाधान में प्रोत्साहन देता है।

9. पुष्टीकरणः- वह यथार्थ विचारों का पुष्टीकरण करता है जिससे विश्वास जाग्रत होता है।

10. सामान्यीकरणः- सेवार्थी कभी-कभी अपने को इतना दोषी ठहराता है कि उसकी सभी क्रियाएँ उसके इस विचार से प्रभावित हो जाती है और उसका जीवन नरक बन जाता हैं कार्यकर्ता परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा उसको बताता है कि वह केवल ऐसा नहीं है बल्कि बहुतेरे हैं जिन्होंने इसी प्रकार के कार्य किये हैं।

11. व्याख्याः- परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा कार्यकर्ता सेवार्थी के भ्रमों को दूर करता है और उसको वास्तविकता से परिचित कराता है।

12. पुनःविश्वासीकरणः- कार्यकर्ता सेवार्थी में विश्वास पैदा करता है कि उसकी समस्या का समाधान सम्भव है और उसमें शक्ति का विकास करके समाधान किया जा सकता है।

13. स्पष्टीकरणः- सेवार्थी को कार्यकर्ता उसकी समस्या के कारणों से अवगत कराता है। प्रभावशील कारकों के विषय में बताता है और उसके व्यवहार को स्पष्ट करता है। फलतः सेवार्थी स्वयं अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।

14. प्राख्याः- अर्धचेतन स्तर की समस्याओं और कारणों पर कार्यकर्ता प्रकाश डालता है और स्पश्ट करता है।

15. सलाहः- सेवार्थी को कार्यकर्ता वहाँ सलाह देता है जहाँ उसको सलाह की आवश्यकता का अनुभव होता है। यह भी परामर्श एवं सम्प्रेषण के बिना संभव नहीं है।

16. सहयोगः- कार्यकर्ता परामर्श एवं सम्प्रेषण के द्वारा ही सेवार्थी को सहयोग प्रदान करने में सक्षम हो पाता है।

14.4 सामाजिक सामूहिक कार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण का महत्त्व

समाज कार्य की प्रविधि समाजिक सामूहिक कार्य का प्रयोग सामान्य व असामान्य दोनों प्रकार के व्यक्तियों साथ किया जाता है। सामान्य व्यक्तियों में सामूहिक अनुभव द्वारा उन्नति एवं विकास के साथ-साथ उत्तरदायित्व की वृद्धि की जाती हैं असामान्य व्यक्तियों में समायोजन की समस्या का समाधान किया जाता है।

सामाजिक सामूहिक कार्य का लक्ष्य समूह सदस्यों में आत्म विश्वास, आत्म निर्भरता, सामूहिकता तथा आत्मनिर्देशन का विकास करना है।

सामाजिक सामूहिक कार्य का लक्ष्य समूह सदस्यों में आत्म विश्वास, आत्म निर्भरता, सामूहिकता तथा आत्म निर्देशन का विकास करता है। सामूहिक कार्यकर्ता समूह के साथ कार्य करते हुए व्यक्तियों प्रजातांत्रिक नेतृत्व के विकास का उत्तरदायित्व ग्रहण करता है जिससे उनमें निर्देषन की योग्यता विकसित होती है। कार्यकर्ता इस प्रकार सामूहिक क्रियाओं को प्रभावकारी बनाता है जिससे सदस्य सामूहिक कार्यों में भाग लेने की योग्यता का विकास कर लेते हैं और अपनी भूमिकाओं को पूर्ण क्षमता एवं योग्यता के अनुसार पूरा करने में समर्थ होते हैं। वे अपनी भावनाओं की रचनात्मक अभिव्यक्ति भी प्राप्त करते हैं।

सामाजिक सामूहिक कार्य मुख्यतः दो लक्ष्यों को पूरा करना चाहता हैः

(1) व्यक्तियों में सांवेगिक संतुलन का विकास करना तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ बनाना।

(2) आर्थिक, सामाजिक, नैतिक उद्देश्यों को प्राप्त करना।

सामाजिक सामूहिक कार्य के क्षेत्रः-

सामूहिक कार्य निम्नलिखित क्षेत्रों में उपोग किया जाता है-

(1) बाल एवं महिला कल्याण

(2) श्रमिक कल्याण

(3) अपंगों का कल्याण

(4) मानसिक एवं शारीरिक रोगियों का कल्याण

(5) मानसिक मंदित बालकों का कल्याण

(6) बाल अपराधी तथा आवारा बच्चों का कल्याण

(7) वृद्ध कल्याण

(8) शिशु कल्याण

(9) जन स्वास्थ्य

(10) परिवार नियोजन

सामाजिक सामूहिक कार्य में परामर्श एवं सम्प्रेषण की भूमिका निम्न प्रकार से महत्त्वपूर्ण है-

(1) समान उद्देश्य के व्यक्तियों को समूह से जोड़ने में सहायक

(2) समूह के सदस्यों की झिझक तथा बाधाओं को तोड़ने में सहायक

(3) समूह के सदस्यों में आत्मीय संबंधों को बनाने में सहायक

(4) आपसी विवाद-विचारों के आदान-प्रदान में सहायक

(5) समूह के उद्देश्यों के निर्धारण के लिए

(6) कार्यक्रम नियोजन/कार्य योजना के निर्माण में सहायक

(7) कार्यक्रम के निष्पादन में सहायक

(8) समूह में प्रजातांत्रिक मूल्यों की स्थापना में सहायक

(9) समूह के सदस्यों में सामंजस्यता तथा योग्यता में वृद्धि होती है।

(10) एकान्तता की समस्या का निवारण होकर स्वस्थ व्यक्तित्व विकसित करने में सहायक

(11) समूह केस दस्यों में आत्म महत्त्व की इच्छा की संतुष्टि होकर आत्मनिर्भरता विकसित होती है।

14.5 सामुदायिक संगठन में परामर्श एवं सम्प्रेषण का महत्त्व

साधारण बोलचार में इसका अभिप्राय किसी समुदाय की आवश्यकताओं तथा साधनों के बीच समन्वय स्थापित कर समस्याओं का समाधान करने से है। सामुदायिक संगठन एक प्रक्रिया है। इस रूप में सामुदायिक संगठन का तात्पर्य किसी समुदाय या समूह में लोगों द्वारा आपस में मिलकर कल्याण कार्यों की योजना बनाना, उसके लिए उपाय तथा साधनों को निश्चित करना है। किसी समुदाय से सम्बन्धित प्रक्रियाएँ, अनेक प्रकार की हो सकती है। अतः सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया का अभिप्राय केवल उस प्रक्रिया से है जिसमें समुदाय की शक्ति है और योग्यता का विकास एक इकाई के रूप में किया जाता है।

सामुदायिक संगठन में सेवार्थी समुदाय होता है। इसका प्रमुख उद्देश्य समुदाय की ऐसे सहायता करना है जिससे वह अपनी सहायता स्वयं करने में समर्थ हो सके। इसकी प्रक्रिया उद्देश्यमूलक होती है। सामुहिक समाज कार्य में व्यक्तियों के समूह को महत्त्व दिया जाता है। सामुदायिक संगइन में समाज के सम्पूर्ण ढाँचे को विशेष महत्त्व दिया जाता है।

(1) सामुदायिक परिचय की चेतना प्राप्त करना।

(2) अपूर्ण आवश्यकताओं की सन्तुष्टि करना।

(3) समाजीकरण के साधन के रूप में सामाजिक सम्मिलन की प्राप्ति।

(4) सामुदायिक अत्मा तथा भक्ति भावना द्वारा सामाजिक नियंत्रण की प्राप्ति।

(5) संघर्ष को रोकने तथा कुशलता एवं सहयोग की वृद्धि के लिए समूह और क्रियाओं में समन्वय स्थापित करना।

(6) समुदाय की अवांछनीय प्रभावों अथवा परिस्थितियों से रक्षा करना।

(7) सामान्य आवश्यकताओं का पता लगाने के लिए अन्य संस्थाओं तथा समुदायों से सहयोग करना।

(8) एकमतता प्रापत करने के साधनों का विकास करना।

(9) नेतृत्व को विकसित करना।

सामुदायिक संगठन में परामर्श एवं सम्प्रेषण निम्न प्रकार से महत्त्वपूर्ण है-

(1) समुदाय में सामाजिक कार्यकर्ता की स्वीकृति में सहायक

(2) समुदाय के मध्य छवि निर्माण के लिए

(3) समुदाय के लोगों में विश्वास जगाने के लिए

(4) समुदाय के मध्य रहकर समुदायिक समस्याओं को जानने तथा समस्याओं का प्राथमिकीकरण करने में सहायक

(5) समुदाय के द्वारा उन समस्याओं का विश्लेषण करने में सहायता

(6) समुदाय के द्वारा कार्ययोजना निमा्रण में सहायक

(7) समुदाय के मध्य उन समस्याओं को लेकर जागृति उत्पन्न करना

(8) अधिकाधिक जनसहभागिता प्राप्त करना

(9) समुदाय के साथ मिलकर उपलब्ध संसाधनों का दोहन करने में सहायक

(10) कार्य योजना के उचित क्रियान्वयन हेतु आवश्यक

(11) कार्य योजना के प्रभावों का मूल्यांकन करने में सहायक

(12) कार्य योजना के मूल्यांकन एवं अनुश्रवण में सहायक

(13) सेवा प्रदाताओं तथा अन्य हितग्राहियों से सम्बन्ध निर्माण तथा उनकी सहभागिता निश्चित करने में सहायक।

इस प्रकार परामर्श एवं सम्प्रेषण समाजकार्य की प्रविधि सामुदायिक संगठन में महत्त्वपूर्ण है।

14.6 समाज कल्याण प्रशासन में परामर्श एवं सम्प्रेषण

समाज कार्य मुख्य रूप से सामाजिक संस्थाओं या विभागों या सम्बन्धित संगठनों जैसे चिकित्सालय, न्यायालय, विद्यालय, सुधार करने एवं दण्ड देने वाली संस्थाओं में किया जाता है। अतः कार्यकर्ता के लिए समाज कल्याण प्रशासन का ज्ञान होना आवश्यक होता है। समाज कल्याण प्रशासन सरकारी संस्थाओं में सामाजिक अधिनियम को कार्यानिवत करता है तथा लोगों की सेवा में कानूनों, नियमों तथा नियंत्रणों का रूपान्तर करता है। इसका तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है जिसके द्वारा समाज कल्याण क्षेत्र की सार्वजनिक तथा निजी संस्थाओं का प्रशासन एवं संगठन किया जाता है। इसके अन्तर्गत वे सभी क्रियाएँ आती हैं जो किसी संस्था के कार्यक्रम का व्यावहारिक रूप देने में सहायता करती है। समाज कल्याण प्रशासन का व्यावहारिक रूप सामान्य प्रशासन के समान है। परन्तु सइमें मानव समस्याओं के समाधान

हेतु तथा मानव आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए प्रयत्न किया जाता है। अतः प्रशासक के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। उसके लिए समाज कार्य के तरीकों, सामाजिक निदान के ढंगों, समूह तथा व्यक्ति की आवश्यकताओं तथा उनके संस्था से सम्बन्ध इत्यादि का ज्ञान आवश्यक होता है।

सामाजिक प्रशासन के प्रमुख क्षेत्र-

सामाजिक प्रशासन का समाज की प्रत्येक संस्था के सुचारू रूप से कार्य करने से सम्बन्ध है। सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक विकास के लिए लोकतांत्रिक नियोजन द्वारा कल्याणकारी समाज की स्थापना करना इसका मुख्य उद्देश्य है। सामाजिक प्रशासन विकास नीति के बनाने में उत्तम रूप से सहायता करता है। इसके साथ ही कई प्रमुख सेवाओं को समन्वित ढंग से नियोजित, व्यवस्थित, कार्यान्वित कर सकता है। इन सेवाओं में राजकीय तथा स्वयंसेवी संस्थाओं का मिलकर कार्य करना शामिल है, यद्यपि प्रत्येक सेवा में इन तीनों का अनुपात भिन्न हो सकता है। इन सेवाओं को निम्न क्षेत्रों में विभाजित कर सकते हैं-

1. सामाजिक सेवाएँः- राष्ट्र में ये दो सेवाएँ समान रूप से सब व्यक्तियों को उपलब्ध की जानी चाहिए जो इस प्रकार है-

(क) शिक्षाः- इसके अन्तर्गत प्राथमिक, माध्यमिक, विश्वविद्यालय, तकनीकी, व्यावसायिक, श्रमिक तथा सामाजिक शिक्षा का समावेश होता है। शिक्षा का समन्वय जन शक्ति-नियोजन द्वारा होना चाहिए। शिक्षा मनुष्य में विनियोजित विचार पद्धति द्वारा अपनायी जाने लगी है। यह प्रशंसनीय प्रगति है। पर शिक्षा में सामाजिक मूल्यों तथा नैतिक विकास पर ध्यान देने की विशेष आवश्यकता है।

(ख) स्वास्थ्य सेवाएँ एवं परिवार नियोजनः- स्वास्थ्य सेवाओं में चिकित्सा, निरोध तथा स्वास्थ्यवर्धक सेवाएँ आती है। परिवार नियोजन जन्म वृद्धि दर में विशेष कमी करने के लिए आवश्यक है। इस कार्य में स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग नितान्त आवश्यक है। कृत्रिम साधनों के साथ संयम तथा नैतिक जीवन पर भी ध्यान देना चाहिए जिससे पाश्चात्य देशों का अनुकरण मात्र ही न रह जाय।

(ग) आवासः- निम्न आय वाले वर्ग के लिए अनुदान ऋण तथा मध्य वर्ग के लिए ऋण की व्यवस्था की गयी है पर साधन के अभाव के कारण आवास स्थिति में विशेष सुधार की आशा नहीं की जा सकती है। आवास सहकारी समितियों में वृद्धि सामाजिक चेतना के जागरण से ही हो सकती है। राज्य की ओर से भी कम मूल्य के आवास अधिक बनाये जा सकते हैं।

2. सामाजिक सुरक्षाः- सामाजिक सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए सामाजिक बीमा का महत्त्वपूर्ण योगदा हो सकता है। इन योजनाओं को एकीभूत करके अधिक व्यापी बनाया जा सकता है। इससे न्यून आय वर्ग से प्राप्त धन राशि से योजना साधनों में वृद्धि की जा सकती है।

सामाजिक सहायता द्वारा वृद्धजनों, अबलाओं आदि को राज्य की ओर से आय का प्रबन्ध किया जाता है। धन के अभाव के कारण इस सेवा के प्रसारण में अभी कठिनाइयाँ है। स्वयंसेवी संस्थाएँ इस ओर ध्यान दें तो अधिक साधन जुआए जा सकते हैं।

3. सामुदायिक विकासः- सामुदायिक विकास ग्रामीण तथा नागरिक स्तर पर होता है। इन दोनों स्तरों को एकीभूत करके सामुदायिक विकास योजना की आवश्यकता है जिससे संतुलित विकास हो सके।

4. श्रमिक सम्बन्धः- श्रमिक संघों द्वारा श्रमिक वर्ग का नियोजन में श्रमिक नेताओं का सत्तारूढ़ होकर नियेाजन में हाथ बंटाना आवश्यक है। राजकीय तथा निजी क्षेत्रों में प्रबन्धकों और श्रमिक वर्ग में सम्बन्धों को सुदृढ़ करना आवश्यक है जिससे उत्पादकता में वृद्धि होती है।

सामाजिक कल्याणः- विशेष जन समूहों के लिए कल्याण योजनाओं के स्थान पर परिवार कल्याण योजना की व्यवस्था की जानी चाहिए इससे कई अनेक चेष्टाओं का संतुलित रूप बन सके। इससे परिवार नियोजन जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य में भी तीव्र प्रगति हो सकती है। अल्पाधिकार वर्ग जैसे हरिजन, जन-जातियाँ तथा अन्य पिछड़ी जातियों के लिए कल्याण योजनाएँ। इन सेवाओं का प्रसारण निम्न आय वर्ग के लोगों के लिए किया जाना चाहिए जिससे इस वर्ग में भी एकीकरण हो सके। शारीरिक रूप से बाधित जैसे अंध, बधिर, अपाहिज आदि के लिए कल्याणकारी योजनाओं का निर्माण करती है। साथ ही इनके लिए प्रतिबन्धक सेवाओं का प्रसारण होना चाहिए। समाज में पुनरस्थापन को अधिक महत्त्व देना चाहिए। मानसिक रोगियों को जैसे निकालकर मानवीय समाज की व्यवस्था की जानी चाहिए तथा एक एक राष्ट्रव्यापी मानव आरोग्यशास्त्र का विधिवत् प्रचार होना चाहिए। सामाजिक चेतना के रचनात्मक कार्यों से मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि हो सकती है।

सामाजिक सुरक्षाः- वयस्क, युवा तथा बाल अपराधियों के लिए सुधार संबंधी सेवाओं की व्यवस्था की जानी चाहिए। इनमें बंदीगृह, बालगृह, प्रोवेशन पुनर्वास आदि सेवाएँ आती है। व्यभिचार व्यापार से पीडित लड़कियों तथा स्त्रियों के लिए नारी निकेतन आदि द्वारा व्यवस्थित की जाती है। संरक्षक सेवाओं में भिक्षु कल्याण की व्यवस्था शामिल होती है।

सामाजिक प्रशासन के घटकः- राष्ट्रीय अथवा स्थानीय, सरकारी या गैर सरकारी किसी भी प्रकार के सामाजिक अभिकरण के प्रशासन के अनेक घटक होते हैं। प्रशासन के इन अंगों में पंजीकरण, नियमावली, संगइन, व्यक्ति कार्य विधि, आयव्ययक वार्षिक प्रतिवेदन, लेखा-जोखा, समन्वय, मूल्यांकन इत्यादि खास तौर से उल्लेखनीय हैं।

समाज कल्याण में परामर्श एवं सम्प्रेषण का महत्व निम्न प्रकार है-

14.7 सामाजिक क्रिया में परामर्श तथा सम्प्रेषण का महत्त्व

पोर्टर ली के अनुसार "सामाजिक संस्थाओं तथा राष्ट्रीय संगठनों के द्वारा किये गये समाज कल्याण सम्बन्धी प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रयासों के अतिरिक्त समाज कल्याण की दिशा में किये गये

अन्य किसी प्रयास को हम सामाजिक क्रिया के अन्तर्गत ले सकते हैं। सामाजिक क्रिया कुछ ऐसे प्रयासों के लिए सुझाव देता है जिनके द्वारा सामाजिक नियमों व सामाजिक संरचना में परिवर्तन किया जाता है अथवा सामाजिक व्यवहारों में संशोधन हेतु आन्दोलन किया जाता है। सामाजिक सुरक्षा हेतु किये गये आन्दोलन अथवा बाल श्रम की समाप्ति हेतु अधिनियम पारित करने हेतु किये गये प्रयास को सामाजिक क्रिया कहते हैं।

सामान्यतः सामाजिक क्रिया के द्वारा सामाजिक परिवर्तन किया जाता है जिसके द्वारा समूह तथा समुदाय की प्रगति होती है पर आवश्यकतानुसार अनापेक्षित सामाजिक परिवर्तन रोकने के लिएसामाजिक क्रिया की जाती है। सामाजिक क्रिया चाहे सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए या रोकने के लिए की जाय दोनों दशाओं में इसके लिए सामाजिक शक्ति या लोक शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। पर यह कार्य अहिंसात्मक ढंग से होना चाहिए।

सामाजिक क्रिया की अवधारणा में निम्नलिखित तत्त्वों का समावेश होता है-

1. सामाजिक क्रिया समाज कार्य का ही एक अंग है; इसमें भी समाज कार्य के सिद्धांत, मान्यताओं तथा ज्ञान और कौशल का प्रयोग किया जाता है। सामान्यतः इसका प्रयोग किया जाता है। सामान्यतः इसका प्रयोग सामाजिक कार्यकर्ताओं के व्यावसायिक संघ द्वारा किया जाता है।

2. सामाजिक क्रिया का उद्देश्य सही अर्थ में सामाजिक न्याय और समाज कल्याण की प्राप्ति है। इसके द्वारा एक ऐसे समाज का निर्माण सम्भव होता है जिससे व्यक्ति के अधिकतम कल्याण की प्राप्ति हो सके।

3. इस प्रक्रिया में आवश्यकतानुसार सामाजिक संस्थाओं, परिस्थितियों तथासमाज व्यवस्था में परिवर्तन लोने का प्रयास किया जाता है और साथ ही साथ आवश्यकतानुसार अनापेक्षित सामाजिक परिवर्तन को रोकने का भी प्रयास किया जाता है। समाज के सदस्यों को इस योग्य बना दिया जाय कि वे आत्मानुशासित होकर अपनी परिस्थितियों को स्वयं ही व्यवस्थित करना इसका लक्ष्य होता है।

4. सामाजिक क्रिया में अहिंसात्मक ढंग से कार्य किया जाता है।

5. सामाजिक क्रिया में एक व्यक्ति के द्वारा भी कार्य आरम्भ किया जाता है। पर बाद में इसके उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामूहिक सहयोग अपेक्षित होता है।

6. इसमें कार्य जनतांत्रित मूल्यों और संविधान में दिये गये नागरिक अधिकारोकं में एक ही आन्दोलन के रूप में होता है। आन्दोलन के प्रारम्भ से पूर्व पूरे जन समुदाय की सहमति अपेक्षित होती है और इस जन सहमति से ही आन्दोलन की शक्ति का प्रादुर्भाव होता है।

सामाजिक क्रिया में परामर्श तथा सम्प्रेषण का महत्त्व निम्न प्रकार है-

1. समाज में हो रहे असंतोष के बारे में सामाजिक आंकड़ों को एकत्रित करने तथा सूचनाओं को विश्लेषण करने में।

2. समस्या के बारे में जनजागृति फैलाने तथा पैरवी करने में।

3. समस्या के बारे में जनमत निर्माण में सहायक।

4. समुदाय के सदस्यों की जन सहभागिता जुटाने में।

5. नेटवर्किंग तथा लाॅबिंग करने में।

6. सरकार तथा नीति निर्धारकों पर दबाव बनाने हेतु।

7. समस्याओं के समाधान के लिए ठोस सुझाव तथा प्रस्ताव का निर्माण करना।

8. जनतांत्रिक कार्य प्रणाली के विकास में।

9. समूह या संगठन के नेतृत्व को सहायता।

14.8समाज कार्य अनुसंधान में परामर्श तथा सम्प्रेषण का महत्त्व

समाज कार्य अनुसंधान एक ऐसी खोज है जिसके अन्तर्गत वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करके ऐसे उपायों की खोज की जाती है जिससे सेवार्थी (व्यक्ति, समूह, समुदाय तथा सम्पूर्ण समाज) को अधिक अच्छे ढंग से सेवा प्रदान की जा सके तथा समस्याओं का समाधान एवं व्यक्ति का सर्वोन्मुखी विकास सम्भव हो सके।

> फ्रीडलैण्डर के अनुसार "समाज कार्य" शोध का अर्थ है, समाज कार्य के संगठन, कार्य एवं प्रवृत्तियों की वैधता का आलोचनात्मक अन्वेषण और वैज्ञानिक जाँच जिससे उन्हें प्रमाणित किया जा सके, उनका सामान्यीरकण किया जा सके और समाज कार्य के ज्ञान और निपुणता में वृद्धि की जा सके।

समाज कार्य अनुसंधान में परामर्श एवं सम्प्रेषण निम्न प्रकार महत्त्वपूर्ण है-

1. उन कारकों का व्यवस्थापन तथा मापन जो सामाजिक समस्याओं को उत्पन्न करते हैं तथा सामाजिक सेवाओं की आवश्यकता बताते हैं के अध्ययन में।

2. दान देने वाली संस्थाओं के इतिहास, समाज कल्याण अधिनियम, समाज कल्याण कार्यक्रम तथा समाज की आवश्यकता के अध्ययन में।

3. आशाओं का प्रत्यक्षीकरण तथा समाज के कार्यकर्ताओं की स्थितियों के मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन में।

4. सामाजिक कार्यकर्ताओं के लक्ष्य निश्चित तथा आत्मचित्र के अध्ययन में।

5. समाज कार्यकर्ताओं की आशाओं निश्चय तथा क्रियाओं में सम्बन्धों के अध्ययन में।

6. समाज की विविध प्रक्रियाओं के अध्ययन में।

7. उपलब्ध सामाजिक सेवाओं का व्यक्ति, समूह तथा समुदाय की आवश्यकताओं के संदर्भ में उपयोगिता के अध्ययन में।

8. समाज कार्य क्रिया के प्रभावों के परीक्षण, मापन तथा मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन तथा समाज कार्य व्यवहार के लिए वांछित योग्यताओं की खोज के सम्बन्ध में।

9. सेवार्थी की आशाओं, उद्देश्यों, प्रत्यक्षीकरण तथा मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन में।

10. समाज कार्य के सम्बन्ध में सेवार्थी के व्यवहार की प्रतिक्रिया के अध्ययन में।

11. सामाजिक संस्था के अन्तर्गत अनौपचारिक तथा औपचारिक समाज कार्यकर्ताओं की भूमिका की परिभाषा, उसके अन्त्रसंबंधों में सहयोग की दशाओं के अध्ययन में।

13. सामाजिक संस्थाओं के विभिन्न इकाइयों में अन्तर्सम्बन्ध तथा उनका सेवार्थी तथा संस्था के स्टाफ पर प्रभाव के अध्ययन में।

14. समाज कार्य अनुसंधान की पद्धति के अध्ययन में।-

14.9 सारांश

परामर्श तथा सम्प्रेषण समाजकार्य की विभिन्न प्रविधियों में रक्त संचय की तरह कार्य करते हैं। बिना परामर्श तथा सम्प्रेषण के समाज कार्य की प्रविधियाँ अधुरी है। सामाजिक वैयक्ति सेवाकार्य में, समूह कार्य में, सामुदायिक संगठन में, सामाजिक क्रिया में तथा समाज कार्य अनुसंधान में परामर्श तथा सम्प्रेषण - विभिन्न चरणों में तकनीकों में समाहित रहती है।

14.10 शब्दावली

प्रविधियाँ: विधियाँ

अनुसंधान: शोध, खोज, जानना

विघटन: नष्ट होना, खराब होना, टूटना

14.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. वैयक्तिक समाज कार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण के महत्त्व को लिखिए।

2. सामूहिक समाज समाज कार्य में परामर्श तथा सम्प्रेषण के महत्त्व को लिखिए।

3. सामुदायिक संगठन में परामर्श तथा सम्प्रेषण के महत्त्व को लिखिए।

4. सामाजिक क्रिया में परामर्श तथा सम्प्रेषण के महत्त्व को लिखिए।

5. सामाजिक अनुसंधान में परामर्श तथा सम्प्रेषण के महत्त्व को लिखिए।

14.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कैवोट, रिचार्ड सी (1909) सोशल सर्विस एण्ड द आर्ट आॅफ हीलिंग, न्यूयार्क।

2. काहन ए. (1973) शेलिंग दि न्यू सोशल वर्क, कोलम्बिया युनिवर्सिब्ी प्रेस।

3. काडुशिन ए. (1972) दि सोशल वर्क इण्टरव्यू, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस।

4. गिल, मर्टन एण्ड आर्टस् (1954) दि इनीशियल इण्अरव्यू इन साइक्याट्रिक प्रेक्टिस, इण्टरनेशनल प्रेस।

5. पर्लमैन एच.एच. (1957) दि सोशल केसवर्क: एक प्राॅब्लम साॅल्विंग प्रोसेस, यूनिवर्सिटी आॅफ शिकागो।